समर्पित समाज सेवी
श्री भैरारामजी आर्य
(स्वामी अभयानन्दजी सरस्वती)

भूमिका लेखक

डॉ. छगनलाल शास्त्री

सम्पादक

डॉ. परमानन्द सारस्वत

सहयोगी द्वय

सोहनलाल डागा ▫ विवेक सारस्वत

समर्पित समाज सेवी श्री भैरारामजी आर्य
(स्वामी अभयानन्दजी सरस्वती)
सम्पादक : डॉ. परमानन्द सारस्वत
प्रकाशक : श्री भैराराम आर्य अभिनन्दन
समारोह समिति, तारानगर (चूरू)
मूल्य : पचास रुपये मात्र
आवरण : 'अडिग'
मुद्रक : सांखला प्रिण्टर्स, सुगन निवास
चन्दनसागर, बीकानेर 334001
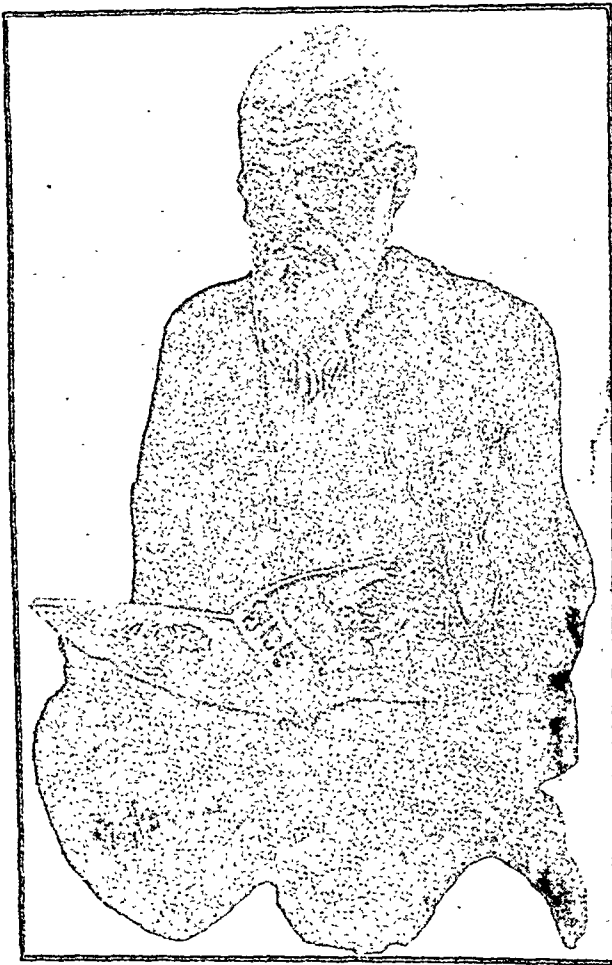
संगरिया के संत
स्वामी केशवानन्दजी की पावन
स्मृति को

प्रस्तावना

स्वनामधन्य चौधरी श्री भैरारामजी कस्वां, जिनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व को लेकर कुछ विचार इस ग्रन्थ में संकलित हैं इसी के पूर्वकथन के रूप में निवेदन है—कि प्रत्येक मानव के अन्तर में असीम ज्ञान एवं शक्ति का पुञ्ज प्रज्ज्वलित रहता है किन्तु बहुत कम व्यक्ति अपने उस अन्तर में निहित प्रकाश को महसूस कर पाते हैं और उससे भी कम व्यक्ति इसे महसूस करने के बाद—इस प्रकाश की दिव्यता को जनहितार्थ वितरित कर अपने मानव धर्म का पालन कर पाते हैं। श्री भैरारामजी चौधरी ने यही असाधारण कृत्य कर समाज में एक आदर्श स्थापित किया है हालांकि विद्वत्ता की दृष्टि से उन्हें बहुत अधिक आगे बढ़ने का मौका नहीं मिला परन्तु इसके बावजूद जो कुछ ज्ञान उन्होंने जोड़ा, उसको उन्होंने सत्कर्म के साथ ऐसा जोड़ा कि आप गीता के सच्चे कर्मयोग के पालनकर्ता 'कर्मयोगी' से स्थापित हो गये।

उपनिषदों के अनुसार ज्ञान की अधिकता विद्या नहीं है। शाश्वत सत्य की अनुभूति ही विद्या को पूर्णता प्रदान करती है, अन्यथा वह अविद्या है। इसे और अधिक स्पष्ट समझने के लिए हम यह कह सकते हैं कि—अविद्या के प्रारम्भ में जुड़ा अ-कार निषेध या अभाववाचक नहीं है अर्थात् अविद्या का तात्पर्य अभाव नहीं है—अपितु कुत्सित या विकृत विद्या है। अर्जित ज्ञान उपनिषद्कार के अनुसार विद्या की संज्ञा तब प्राप्त करता है जब वह यथार्थ का संस्पर्श कर लेता है। इसलिए प्रज्ञा व ज्ञान की सार्थकता उसके सदुपयोग में ही है। सही उपयोग तब होता है—जब व्यक्ति भौतिक, लौकिक स्वार्थों की परिधि से ऊपर उठ कर निस्वार्थ भाव और बिना किसी ओर आसक्त हुए अपने कर्त्तव्य निर्वाह में लग जाये, तब वह प्राणी मात्र में परमात्मा के दर्शन करता है। जनता जनार्दन की सेवा आज के संदर्भ में बहुत ही सरल सी हो गई है और उसी का परिणाम है कि हर क्षेत्र में अनेक जन-सेवक दृष्टिगत होते हैं। सचमुच में स्थिति यह नहीं है—स्वयं को जन सेवक कहने वाले व्यक्ति ईमानदारी से सोचें कि वास्तव में वे जनकल्याण-हितार्थ सेवा कार्य में लगे हुए हैं या उसकी आड़ में अपने निज स्वार्थों की पूर्ति के लिए वे लोगों को ठगने के लिए उन्हें वाणी से जनार्दन कह-कह, उनकी भावनाओं के साथ खिलवाड़ करते हैं। यदि ऐसा नहीं है तो क्यों आज सर्वत्र अत्याचार, शोषण व अनाचार होता दृश्यमान हो रहा है? क्यों ऐसा

करते शोषकों के हाथ ठिठकते नहीं हैं? सच्चाई यही है कि अधिकांशतः शोषक ही जन-सेवक के रूप में प्रतिष्ठित हो अपने निज स्वार्थों की पूर्ति कर रहे हैं। मगर, चौधरी श्री भैरारामजी उपरोक्त कथन के अपवाद हैं और उन गिने-चुने स्थापित जनसेवकों के रूप में हैं—जिन्हें नाम, ख्याति, शान, स्वार्थ, कामना और ऐषणा जैसी प्रवंचनापूर्ण वृत्तियां आज तक छू नहीं पायी हैं। जो कुछ भी वे हैं, वैसा बनना उन्होंने कहां से सीखा, किससे सीखा, कोई कुछ कह नहीं सकता। क्योंकि वे स्वयं अपनी अस्ति (होने) के बारे में सर्वथा मौन हैं।

भारतीय दर्शन पुनर्जन्मवादी और संस्कारवादी दर्शन है। वर्तमान में हम जो कुछ हैं वह अतीत और अनागत से असम्पृक्त नहीं है। हमारा वर्तमान जीवन उद्यम और पुरुषार्थ के साथ पूर्व संस्कारों से जुड़ा है, जो हमारा प्रारब्ध है या संचित कर्म है। निःसंदेह श्री भैरारामजी जन्मजात उच्च संस्कारों के धनी रहे हैं। सामान्यतः जैसा होता है, उन्हें भी अपनी कृषि, व्यवसाय में लगकर अपनी समृद्धि बढ़ानी चाहिये थी किन्तु उनके मन में सर्वथा एक विचार कौंधता रहता था कि सिर्फ परिवार का पालन-पोषण ही तो मनुष्य-जीवन और उसकी उत्पत्ति की सार्थकता नहीं है? परिवार का पालन-पोषण तो एक सहज कर्त्तव्य है जिसका निर्वाह प्रायः हर मनुष्य करता ही है। इसी विचार एवं अन्तर्द्वन्द्व के परिणाम स्वरूप उन्हें यह आत्मबोध हुआ। उन्होंने जन-सम्पर्क का रास्ता चुना, जिसकी मंजिल तो रही दूर, सही रास्ते और पगडंडी तक का उन्हें स्पष्ट आभास नहीं था।

सामाजिक चेतना की दृष्टि से परमश्रद्धेय स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज के रूप में जो जन-जागरण का अभियान चलाया, उसने देश में एक नवीन उद्‌बोधना पैदा की। उन आर्य विचारों की लहर से चौधरी श्री भैरारामजी भी बहुत प्रभावित हुए। धर्म, समाजनीति, सदाचार, सेवा, शिक्षा व सत्कर्म का भाव जगाने के लिए आर्य समाजी 'उपदेशक' जन-जन तक जाकर उन्हें प्रेरणा देने का सत्कार्य कर रहे थे। अपने आर्य विचारों को लोक जीवन से सीधे जोड़ने के लिए उन्होंने अपने उपदेशों में संगीत का सहारा लिया। अपनी बात को सार्वजनिक करने के लिए गा-गाकर लोगों को अपनी ओर आकृष्ट किया गया। चौधरी भैरारामजी भी इससे विशेष प्रभावित हुए। अपने आपको भी उन्होंने इन सब योग्यताओं से समन्वित किया, जो एक उपदेशक में होनी चाहिएं और आर्य समाज के क्रान्तिकारी विचारों को अन्तर में समाहित कर स्वयं भी जन-जन में अलख जगाने, एक कर्मयोगी की भांति निकल पड़े। उपदेशक की मधुर वाणी श्रोताओं पर प्रारम्भिक प्रभाव तो डालती है किन्तु उपदेशक की मधुर वाणी के साथ-साथ यदि उसका व्यवहार भी यथार्थ में मधुरता व अपनत्व लिये हो तो यह समन्वय श्रोताओं पर लम्बे समय तक और स्थायी रूप से प्रभावी बन जाता है। यह गुण चौधरी साहब में सहज ही दृश्यमान था क्योंकि वे पेशेवर उपदेशक थे नहीं—और न ही किसी स्वार्थ भावना से वशीभूत होकर इस ओर आये थे—अतः इसी कारण उनका सहज, सौम्य व मधुर व्यवहार

जन मानस को मोह लेता था। ग्रामीण अंचल में पला-बढ़ा यह व्यक्ति सभी ग्रामवासियों को अपना ही स्वरूप लगता था। सीधे उनसे जुड़े होने के कारण आप उनकी समस्याओं का सही निराकरण कर उन्हीं के सोच व शब्दों में उन्हें बताकर, अपनी बात व शिक्षा उनके बीच में कब देकर उनसे अपनापन बिठा लेते थे, कोई जान ही नहीं पाता था। चौधरी साहब के अन्दर समाज के लिए कुछ करने की आकांक्षा उनके सत्यनिष्ठ और निस्वार्थ आचरण के कारण दिन-प्रतिदिन बढ़ती गई। उनकी वाणी से संगीत के सुरों में आर्य समाज के उपदेश जब बाहर हवा में निकलते तो सब मंत्रमुग्ध होकर रह जाते थे। वे जब गाते-बोलते तो उसमें खो जाते थे। ग्रामीण जनों को उनका यही रूप सबसे ज्यादा अपना लगता था। इस प्रकार जन-चेतना के इस अभियान में उनका जो योगदान रहा, वह वास्तव में सदैव उल्लेखनीय व स्मरणीय रहेगा।

चौधरी साहब का चिन्तन सदैव मूलचारित व ऊर्ध्वगामी रहा। वे यह अनुभव करते थे कि समाज में व्याप्त विषमताओं का मूल कारण अशिक्षा व अज्ञान है। जब किसी व्यक्ति को यथार्थ की जानकारी ही न हो तो वह कैसे उसे जान और प्राप्त कर सकता है। इसी क्रम में चौधरी साहब ने गांव-गांव जाकर अशिक्षा को मिटाने, शिक्षा का भाव जगाने के लिए अनथक प्रयास किये। उस समय आपके प्रयासों से जितनी भी पाठशालाएं स्थापित हुईं उनके कारण देश के स्वतन्त्रता संग्राम को बल मिला। चौधरी साहब प्रत्यक्ष रूप से स्वतन्त्रता संग्राम में भागीदार न होते हुए भी अप्रत्यक्ष रूप से अपने सक्रिय साथियों के लिए पूर्ण रूप से उनके सहयोग में जुटे हुए थे। शिक्षा देकर शिक्षा द्वारा उन्होंने युवकों को, गांववासियों को आजादी क्या है, हम कहां हैं, क्यों हम शोषित हैं, उत्पीड़ित हैं, यह सब समझाने का कार्य किया। यह अलख जगाने का कार्य कोई साधारण नहीं था। गांव में किसानों में शिक्षा का भाव जागृत करना उस समय टेढ़ी खीर सा कार्य था। चौधरी साहब का सदा से यह मन्तव्य रहा कि स्थिरता के साथ निरंतर रचनात्मक कार्यों से जुड़े रहने से राष्ट्र एवं मानवता को जो वल मिलता है, वह बहुत काम का है। इसलिए आप राजनीति में लिप्त न होकर भी स्वतन्त्रता आन्दोलन में तटस्थ भाव से पर्दे के पीछे से इस आन्दोलन को शक्ति प्रदान करते रहे।

चौधरी साहब समन्वय, सहयोग और मैत्रीभाव के पक्षधर हैं। वे ध्वंस में नहीं सृजन में विश्वास रखते हैं। हृदय परिवर्तन द्वारा मानव को बदलने में उनकी आस्था है। सही मायने में अहिंसा के पुजारी बन, राह पाने वाले व्यक्तियों में से एक आप हैं।

चौधरी साहब को अपने कार्यों व सोच का दायरा बढ़ने के बावजूद अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों का आभास सदैव बना रहा। परिवार-निर्माण को कभी भी उपेक्षित नहीं समझा। जैसा आम तौर पर होता है कि सामाजिक कार्यकर्त्ता, नेता और उपदेशक अपने परिवार के प्रति बेपरवाह हो जाते हैं, एक तरफ पारिवारिक जन कष्ट पा रहे हैं—दूसरी तरफ आपके उपदेश व समाज-सुधार चल रहे हैं—ऐसी स्थितियां

चौधरी साहब ने कभी भी उत्पन्न नहीं होने दीं। दोनों जगह सामञ्जस्य बनाकर रखा। अपने परिवार के भविष्य के प्रति सचेत रहे। अपने पुत्र-पुत्रियों को सुयोग्य बनाने के लिए यथेष्ट कर्म निरन्तर करते रहे क्योंकि आप एक स्थिर चेता पुरुष हैं, भावावेशी नहीं। घर भी उन्नत हो, समाज भी और राष्ट्र भी, तब ही उन्नति है, उसकी सार्थकता है। चौधरी साहब के जीवन में हम इस दर्शन का समन्वय बहुत ही आकर्षक रूप में पाते हैं।

इस जगत में कोई अजर-अमर नहीं है। 'कीर्तिः यस्य सजीवति।' सबको एक दिन सब कुछ छोड़कर यहां से महाप्रयाण करना ही होगा। केवल बचेंगे तो जाने वालों के भले-बुरे कर्मों के कथानक ही। भले कथानक, उत्तम जीवनवृत्त, सेवामय, साधनामय एवं स्वार्थशून्य कृतित्व ही वे तथ्य हैं, जो विस्मृत नहीं किये जायेंगे।

श्री भैरारामजी के जीवन के सम्बन्ध में प्रस्तुत ग्रंथ में जो निबंध, संस्मरण, श्रद्धोद्‌गार, काव्य कुसुमाञ्जली इत्यादि के रूप में सामग्री संकलित की गई है वह ख्याति और श्लाघा की वाणी नहीं है—यह तो सिर्फ एक स्थिरचेता कर्मयोगी की जीवनगाथा का लेखा-जोखा मात्र है।

चौधरी साहब से मेरा दीर्घकालीन परिचय नहीं रहा है। अपने अनन्य स्नेही सोहनलालजी डागा के माध्यम से मेरा उनसे तथा उनके पुत्र डॉ. हनुमानसिंहजी कस्वां से, जब वे सरदारशहर में थे, परिचय हुआ। जब मैंने डागाजी से उनके जीवन के बारे में कुछ सुना तो उनसे भेंट करने की उत्सुकता हुई। हम दोनों तारानगर गये। वहां कन्या छात्रावास में चौधरी साहब से भेंट हुई, काफी चर्चा भी की। जीवन में देश-विदेश घूमने के दौरान विशिष्ट जनों से मिलने का सुअवसर मुझे सौभाग्य से मिलता रहा है। व्यक्ति को परखने व आंकने का मेरा मानदण्ड है। श्री भैरारामजी के निःस्पृह और खरे जीवन व उनके दर्शन की मेरे मन पर अमिट छाप पड़ी। वे उस समय बालिकाओं के शिक्षा के कार्य में लगे थे और आज भी उसी पावन उद्देश्य में जुटे हैं। आपका चिन्तन बहुत ही उर्वर रहा है। आपका मानना है कि नारी शिक्षा के बिना राष्ट्र उन्नति कर ही नहीं सकता है अतः माताओं, बहनों व पुत्रियों को शिक्षित करना निहायत जरूरी है। यही समय की मांग है, इसके बिना हमारी आजादी अधूरी है अतः हमें पूर्ण आजादी के लिए नारी शिक्षा पर अधिक महत्व देना चाहिए। 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' यह आर्यवाणी उनके रोम-रोम से प्रतिध्वनित होती रहती है। जब मैंने उन्हें इस वृद्धावस्था में युवाधिक उत्साह से भी अधिक उत्साह के साथ कन्या छात्रावास के कार्य में जुटा हुआ देखा तो अनुभव हुआ 'जीवेम शरदः शतम्' सौ बरस जीयें, इसी भावना के साथ वैदिक ऋषियों ने 'सौ बरस जीयें, सौ बरस देखें, सौ बरस काम करें, अच्छी बात बोलें' इत्यादि वाक्य देववाणी में जोड़ दिये—वे साक्षात् चौधरी साहब में चरितार्थ होते दिखाई दे रहे थे।

आप विनम्रता की मूर्ति हैं, सहृदयता और स्नेह से सराबोर हैं। उनसे अल्पकालीन मिलन की अवधि में जो सौजन्य व सद्‌भाव देखने को मिला, वह अनुकरणीय एवं प्रशंसनीय है।

चौधरी साहब राजनीति और समाज के क्षेत्र में कार्य करने वाले अपने सजातीय बंधुओं व अन्य कार्यकर्त्ताओं को सदैव सद्कार्य करने हेतु प्रेरणा देते रहे हैं। उनका हमेशा व्यक्तियों से यही कहना है कि जीवन में कभी उच्च पदासीन होने का अवसर मिले तो उसका सदुपयोग कर जनहितार्थ कार्य करने चाहिएं। मनुष्य को लोभ व स्वार्थ वृत्ति से हटकर रहना चाहिए। इसी विचार को चौधरी साहब ने जन-जन में संचारित किया है। अपनी इसी विचारधारा को मजबूती से फैलाने के उद्देश्य को लेकर आप अनेक कार्यकर्त्ता व कार्यकर्त्रियां तैयार कर रहे हैं। चौधरी साहब के '[illegible] कन्या छात्रावास' का सौम्य, विनम्र एवं पवित्र वातावरण इसका परिचायक है। मैं व्यक्तिशः उस वातावरण की स्मृति अब भी मेरे अन्तर में लिए हूं।

'श्रेयांसि बहु विघ्नानि' के अनुसार ही इतने उत्तम और पवित्र कार्य में जुटे श्रीआर्य को हमेशा विघ्न बाधाओं से जूझना पड़ा है। समाज का एक विशेष वर्ग कुण्ठाग्रस्त होकर विघ्न डालता रहा है किन्तु चौधरी साहब ने सबके प्रति सम-भाव एवं सहिष्णुता के भाव रख रखे हैं। गीता में बताये स्थितप्रज्ञ की भांति बिना किसी चिन्ता के, सारी परिस्थितियों में निश्चिंत भाव लिए, प्रतिकूलताओं में उद्विग्न हुए बिना अपने काम के प्रति समर्पित है। न उन्हें राग का मोह है न किसी भय से वे आतंकित। चौधरी साहब में यह सब हमने प्रत्यक्ष देखा है—महसूस किया है। उनमें कर्मचेतना है, जिजीविषा है क्योंकि वे प्रभु द्वारा प्रदत्त इस देह से जनसेवा, जिसे वे प्रभुसेवा मानते हैं, करना चाहते हैं। नीति शास्त्र की एक बड़ी सुन्दर उक्ति है—

'सर्वेभ्यो जयमन्विच्छेत् पुत्रात् शिष्यात् पराजयम्'

अर्थात् व्यक्ति मन में इतना उत्साह लिये रहे कि मैं सबको जीत सकूं, गुणों में सबको मात दे सकूं किन्तु साथ ही साथ वह यदि पिता है तो यह भावना रखे कि मेरा पुत्र इतना योग्य बने जो गुणों में मुझे पराजित कर दे। यदि वह गुरु है तो ऐसा मानसिक संकल्प लिए रहे कि मेरा शिष्य इतना योग्य बने कि वह मुझसे भी आगे निकल जाये।

अहम् के विसर्जन और संतति के सुसर्जन का कितना पवित्र क्रम है यह, चौधरी साहब ने इसी उदात्त भावना के साथ अपने पुत्रों को सुयोग्य बनाया। ऐसे महान् पिता के प्रति पुत्रों में जैसा श्रद्धा भाव, विनीत भाव होना चाहिए, यह प्रसन्नता का विषय है कि उनमें यह निःसंदेह प्राप्त होता है। इसी भावना से अनुप्राणित होकर श्रीमान् डाक्टर हनुमानसिंह कस्वां व श्री जीतसिंह ने अपने पिता श्री भैरारामजी जो केवल पिता ही नहीं हैं, समाज के बालक-बालिकाओं के अग्रणी अभिभावक का रूप लिए हुए हैं, के अभिनन्दन ग्रन्थ की योजना बनाकर मानवीय गुणों की सुवास जन-जन तक सुलभ हो, यह प्रयत्न किया है

सुप्रसिद्ध विद्वान एवं लेखक श्रीमान् डॉक्टर परमानन्द जी सारस्वत ने इस अभिनन्दन ग्रन्थ का सम्पादन कार्य संभाला यह सोने में सुगन्ध जैसा दुर्लभ संयोग बना है। डॉ. परमानन्दजी सारस्वत संस्कृत और हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध विद्वान

एवं चिन्तक होने के साथ-साथ वाणी और लेखनी के अनुपम धनी हैं। वैदुष्य के साथ-साथ डॉ. सारस्वतजी सौहार्द्र, आर्जव और मार्दव जैसे दुर्लभ गुणों के धनी हैं, जिनसे विद्वत्ता और अधिक उजागर होती है। उनके सम्पादन में ग्रन्थ सुन्दर एवं उपादेय बन सका है। इसका प्रमाण यह ग्रंथ ही है। मैं शब्दों के औपचारिक आभार की आवश्यकता इसके लिए आवश्यक नहीं मानता।

मेरे लिए यह और अधिक हर्ष का विषय है कि ग्रंथ के सह-सम्पादक के रूप में प्रबुद्ध चिंतक, समाज सेवी और साहित्यप्रेमी श्री सोहनलाल डागा ने बड़े श्रम व निष्ठा के साथ कार्य किया है। श्री डागाजी कई बरसों से मेरे सान्निध्य में साहित्यिक चिन्तन व सर्जन में संलग्न रहे हैं। इस ग्रंथ हेतु लेख व सामग्री के संकलन में आपका अथक योगदान रहा है। साथ ही साथ ग्रंथ के एक और सह-सम्पादक युवा लेखक श्री विवेक सारस्वत जो डॉक्टर साहब के पुत्र हैं ने भी अपने पूर्ण मनोयोग से लगकर पुस्तक की सामग्री की प्रेस कॉपी तैयार की। इन सब ने लेखों की जो सुन्दर व्यवस्था बिठाई है, और जिस निष्ठा से इस पुनीत कार्य में श्रद्धाभाव के साथ कार्य किया हैं, वह निश्चित रूप से प्रशंसनीय है। एक साथ दो पीढ़ियों का समावेश चौधरी साहब के आदर्शों व विचारों को परिलक्षित सा करता प्रतीत होता है।

इन दोनों महानुभावों—श्री सोहनलाल जी डागा एवं श्री विवेक सारस्वत—को हृदय से मैं वर्द्धापित (धन्यवाद) करता हूं जिनके सहयोग और सामग्री संजोने के श्रम से श्रीमान डॉक्टर परमानन्द सारस्वत को अपने दायित्व निर्वाह में बहुत सम्बल प्राप्त हुआ। इस उत्तम कार्य को कर आपने एक ऐसे 'चरितनायक की कीर्तिगाथा' जो 'निष्काम कर्मगाथा' का उदात्त स्वरूप लिए हुए है, को उकेरकर जन-जन तक पहुंचाने का सद्प्रयास किया है। इसके लिए डॉ. सारस्वत का यह 'सारस्वत' कार्य सदैव प्रेरणा देता रहेगा। आशा है, पाठक इस ग्रंथ का साभिरुचि अध्ययन करेंगे और एक कर्मयोगी, जनता जनार्दन के सच्चे सेवी के जीवन से प्रेरणा प्राप्त करेंगे जो आर्य समाज के सच्चे अनुगामी बनते हुए सांसारिक सम्बन्धों से औपचारिक वैराग्य लेकर अब स्वामी अभयानन्दजी सरस्वती के नये स्वरूप में हमारे पथ प्रदर्शक व प्रेरणास्पद बने हैं।

मैं श्रीमान चौधरी भैरारामजी कस्वां का हृदय से आत्मीय अभिनन्दन करता हुआ, परमपिता परमात्मा से उनके दिव्य संस्कार सम्पन्न सौजन्य, सारल्य एवं सौमनस्य मंडित दीर्घजीवन की व सुस्वास्थ्य की कामना करता हूं।

महाशिवरात्रि
ऋषि दयानन्द बोधोत्सव
फाल्गुन वि.सं. 2052
(17 फरवरी, 1996 ई.)

डॉ. छगनलाल शास्त्री
एम.ए. (त्रय), पी-एच.डी.
विद्या महोदधि, काव्यतीर्थ
पूर्व प्राध्यापक-मद्रास
विश्वविद्यालय
मद्रास

सम्पादकीय

व्यक्ति के जीवन में कभी-कभी ऐसे क्षण अनायास ही उपस्थित हो जाते हैं जो अविस्मरणीय रूप धारण कर इतिहास बन जाते हैं। इन क्षणों में किये गये चिन्तन व निर्णय के प्रतिफलन से वह चमत्कृत हो उठता है। इसी प्रकार का एक अभूतपूर्व अवसर लगभग दो वर्षों पूर्व मेरे समक्ष भी आया।

किसी व्यक्तिगत कार्य से डॉ. हनुमानसिंह जी कस्वां से परामर्श हेतु उनके आवास गया था। डॉक्टर साहब संयोग से उस दिन कुछ फुर्सत में थे। प्रसंगवश अपने पिताजी श्री भैरारामजी आर्य के विषय में कुछ जानकारी दी तथा उनके द्वारा प्रवर्तित बालिका शिक्षण की आयोजना से परिचित कराया। श्री आर्य का समग्र जीवन व कार्य भारतीय संस्कृति के अनुरूप व उन्नयन के लिए समर्पित है यह जानकर इस संस्कृति पुरुष के दर्शन की तीव्र अभीप्सा उत्पन्न हुई।

कुछ समय पश्चात् कुछेक आर्य-ग्रन्थ समर्पण हेतु साथ लेकर श्री आर्य से मिलने तारानगर पहुँचा। श्री आर्य द्वारा स्थापित वैदिक कन्या छात्रावास की बालिकाओं द्वारा मेरी अभ्यर्थना के पश्चात् श्री आर्य को बाड़ी से बुलाये जाने पर उनके भवन में प्रवेश करते ही, ज्योंही मैं शिष्टाचारवश प्रणाम करने को उद्यत होऊं उसके पूर्व ही बड़ी क्षिप्रता के साथ उन्हें मेरे सम्मुख नतमस्तक पाया। आया था नमन करने किन्तु मिला एक विनमित मनस्वी से मुझे नमन।

मेरी शोधदृष्टि ने देखा और अनुभव किया कि यद्यपि ये विद्वान नहीं हैं तथा न ही शास्त्रवेत्ता, किन्तु शास्त्रज्ञों से कहीं अधिक इनमें कुछ है। ज्ञान और संस्कारों को जीवन्त करने वाले सफल प्रयोगकर्ता हैं। ये निष्ठावान व्यक्तित्व के धनी एक कर्म ऋषि हैं। नेत्रों में सच्चाई की चमक, सात दशक की उम्र पार करने के बाद भी शारीरिक दृढ़ता, तेजस्विता, अंग-अंग से स्फुरित होने वाली ऊर्जा इनके तपस्वी जीवन की सूचक है। प्रतीत होता है प्रभु ने इनका सृजन अपनी किसी योजना पूर्ति के लिए ही किया है।

मैं आया था केवल मात्र इनके दर्शनार्थ तथा छात्रावास की व्यवस्था का संक्षिप्त आकलन करने किन्तु महान् व्यक्तित्व के प्रभामण्डल से गहरा अभिभूत हो

गया। भावाभिभूत हृदय ने मन से कहा—कुछ श्रद्धेय संकल्प लो इस कर्मयोगी के जीवन चरित्र व पुनीत कार्यों की प्रेरणास्पद गाथा के विकीरण हेतु। कुछ समय तक मन मूक रहा फिर अपनी मौन मुखरित वाणी में प्रत्युत्तर दिया। इस कर्मयोगी व्यक्ति की गरिमा की जो अनुभूति की है वही सभी करें, इस अमृत फल का स्वाद सभी चखें, इस व्यक्तित्व और कृतित्व का सार्वजनीकरण किया जाय। हृदय ने मन के सुझाव को स्वीकारा और दोनों ने एतदर्थ संकल्प लिया।

यह कृति उसी शिव-संकल्प की प्रस्तुति है।

यह भी एक संयोग-सौभाग्य है कि मैंने शोध-छात्र के रूप में प्रथम शोधकार्य एक महान् संस्कृत मनीषी की कृतियों के अध्ययन, अनुशीलन का किया था तो वार्धक्यवय में एक ऐसे संस्कृति पुरुष के पावन चरित्र व कृतित्व के मनन का अवसर मिला है जिसमें एक साथ हम महर्षि कर्वे, ज्योतिराव फूले, संगरिया के सन्त स्वामी केशवानन्द और वनस्थली विद्यापीठ के संस्थापक श्री हीरालाल शास्त्री के कृतित्व की छाप व छाया स्पष्ट देख सकते हैं।

इस पावन चरित संकलन के विषय में कुछ विवरण ध्यातव्य हैं—

—ग्रन्थ का लेखन स्वामी जी के गृहस्थ जीवन के समय में ही आरम्भ हो गया था अतः सभी में समस्त विचारों के केन्द्र में श्री 'आर्य जी' या 'श्री भैराराम' संबोधन रहा है। इसमें संशोधन करना लेख की गरिमा के अनुरूप नहीं समझा गया।

—संस्मरणों में पुनरावृत्ति दोष नहीं माना जाता अतः इसे पुनीत पारायण के रूप में ही समझें।

—लेखक ने सन्त की जीवनगाथा में जानबूझकर कुछ प्रसंग छोड़े हैं ताकि अधिक पुनरावृत्ति न हो। फिर भी कुछ संदर्भों की आवृत्ति नहीं रोकी जा सकी।

आभार

ग्रन्थ की विद्वत्तापूर्ण प्रस्तावना लेखन हेतु डॉ. छगनलाल जी शास्त्री के प्रति सर्वप्रथम कृतज्ञ भाव प्रकट करता हूँ जिन्होंने अपनी वार्धक्यवय तथा कार्य व्यस्तता में से समय निकाल कर हमारे निवेदन को सफल किया। कृति में प्रकाशित सभी रचनाकारों के प्रति भूरि-भूरि आभार जिनके संस्मरणों के द्वारा ग्रन्थ ने यह आकार ग्रहण किया।

संकलन में एक साथ चार पीढ़ियों के संस्मरणों का समावेश होना स्वामीजी के प्रति असीम स्नेह, सम्मान, आस्था और श्रद्धा का प्रतीक है।

सम्पादन कार्य में विशेष सहयोगी मेरे अभिन्न मित्र श्री गोपाल दास जी सेवग तथा अनुजवत डॉ. बाबूलाल जी शर्मा, उपनिदेशक भारतीय विद्या मंदिर शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर, ये दोनों ही बन्धु हिन्दी और राजस्थानी के समर्थ, सशक्त तथा सुस्थापित लेखक हैं, के प्रति विशेष स्नेह भाव जिन्होंने ग्रन्थ की रूप-सज्जा, लेखों की

पुनर्शब्द संरचना में अपना योगदान दिया। इसी क्रम में मेरे पुत्र डॉ. सुरेश सारस्वत को भी हार्दिक आशीर्वाद है कि उसने अनेक लेखों की पाण्डुलिपि बनाते समय आवश्यकतानुसार भाषा और भाव दोनों दृष्टियों से उन्हें परिष्कृत किया।

मेरे सहयोगी सम्पादक श्री सोहनलाल जी डागा की सतत प्रेरणा तथा पू. स्वामीजी के सम्पर्कित स्वजनों से लेख मंगाने तथा इस अनुष्ठान की सफल सम्पूर्ति में उनका विशेष योगदान समादरणीय है। इस पुनीत कार्य में दूसरा सहयोगी मेरा कनिष्ठ पुत्र चि. विवेक सारस्वत है। जिसने अपनी लेखनी को पावन चरित्रों को रूपायित कर पवित्र किया, उसने प्रत्येक आलेख का अनेक बार पठन कर अपेक्षानुसार संशोधित किया। ये दोनों ही सहयोगी इस प्रस्तुति के आधार-स्तम्भ हैं।

इसी क्रम में 'श्री भैरारामजी आर्य अभिनन्दन समिति' के अध्यक्ष डॉ. ओमप्रकाशजी गुप्त तथा मंत्री श्री हरफूल सिंहजी भी धन्यवाद के पात्र हैं जिनके आर्थिक सहयोग से यह पुनीत कार्य सम्पन्न हुआ।

भाई दीपचन्दजी सांखला विशेष धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने कृति के सुन्दर तथा समय पर मुद्रण की व्यवस्था की।

डॉ. हनुमानसिंहजी कस्वां तो सर्वतोभाव से धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इस महामानव के दर्शनों की प्रेरणा दी।

अन्त में उन पवित्र क्षणों की पवित्र स्मृति के प्रति भी नतमस्तक हूँ जिन क्षणों में इस कृति का प्रथम चिन्तन हुआ।

अक्षय तृतीया, 20 अप्रेल 1996 —परमानन्द सारस्वत

वि.सं. 2053

अनुक्रम

व्यक्तित्व दर्शन

कसवां कुल-परम्परा

डॉ. बाबूलाल शर्मा

सिंध, पंजाब, दिल्ली, राजस्थान और पुराने संयुक्त प्रांत के विभिन्न भाग जाट जाति के प्राचीन काल से मुख्य निवास स्थान रहे हैं। पूर्व मध्यकाल और मध्यकाल में राजस्थान के पश्चिमी भाग में छोटे-बड़े कई जाट ठिकाने थे। भरतपुर और धौलपुर के धवल कीर्ति जाट राजघराने तो इतिहास प्रसिद्ध हैं ही।

जाटों के मूल रूप से भारतीय आर्य होने अथवा उनके मध्य एशिया से राजस्थान के पश्चिमी उत्तरी भू-भाग में आने से संबंधित विद्वानों के तुमुल विवाद के बीच से हम औचित्य की गरिमा से युक्त प्रो. कालिका रंजन कानूनगो के 'हिस्ट्री ऑफ जाट्स' के उद्धरण से अपना कथन प्रारम्भ करना चाहेंगे। प्रो. कानूनगो लिखते हैं कि भारत की सीमा से उत्तर तथा पश्चिम की ओर जाट जाति किस प्रकार गई इसका कोई प्रामाणिक इतिहास नहीं मिलता, क्योंकि भारतीय इतिहास के आरम्भ में उन्होंने किरमान, मसूर के अन्तर्गत ईरान के सहारे के प्रदेशों पर अपना अधिकार जमा लिया था। जैसा कि अरब के इतिहासों से प्रकट है, हिन्दू जाति (भारतीयों) के यही पहले पुरुष थे जिनसे अरब वालों का वास्ता पड़ा। उन्होंने पीछे एक बड़े हिन्दू राज्य को स्थापित किया और मुसलमानों के क्रूर आक्रमणों के पहले से इन्होंने सिन्धु नदी की ओर लौटना प्रारम्भ कर दिया। ईस्वी सन् की आरम्भिक शताब्दियों में मध्य एशिया से आने वाले बहुत से गिरोहों ने जाट तथा अन्य भारतीय जातियों में से कुछ को तो इस संसार से मिटा ही दिया और कुछ को भगाकर सिंध नदी के किनारे पहुँचा दिया। अब सिंध का अगम्य रेगिस्तान जाटों का नवीन स्थान बना और संस्कृत जातियों से संमिश्रण, असंस्कृत (मात्र युद्ध परक) जीवन, जातीय नियमों से प्रतिबद्धता तथा ब्राह्मणों की शिक्षा के प्रति लापरवाह होने के कारण काबुल के अन्य अल्पसंख्यक हिन्दुओं की भांति वे भी म्लेच्छ समझे जाने लगे। संभवतया इसी कारण से चीनी यात्री ह्वानच्वांग सातवीं शताब्दी में सिन्ध देश के राज्य को शूद्र-राज्य कहता है। अलबरूनी ने भी ग्यारहवीं शताब्दी में जाटों को इसी दशा में पाया। वहाँ वे खेती करने लगे थे और पुराने प्रजातंत्रीय संगठन में रहे, परन्तु बाद में उनमें भी एकतंत्र राज्य की नींव पड़ गई।

कर्नल टॉड का भी कथन है कि जिट (जाट) मुलतान के सीमा प्रदेश में जोद के पहाड़ों के निकट से बहने वाली नदी के किनारे रहते थे। हिजरी सन् 416 (1026 ई.) में महमूद गजनवी ने उन पर चढ़ाई की। जिटों ने अपने बाल-बच्चों व चल सम्पत्ति को सिन्धु सागर (पंजाब का एक दो आबा) भेज दिया। तदनंतर भीषण जातीय लड़ाई हुई, जिसमें जिटों की पराजय हुई, वे युद्ध से भागे, कुछ बंदी बना लिये गये। भागे हुए जिटों के दल बीकानेर की भूमि में जाकर बसे जहाँ कालान्तर में उनके जनपद और ठिकाने अस्तित्व में आये। इस तरह सन् 1026 ई. के पश्चात् जाट जाति के लोग बीकानेर संभाग में आकर बस गए और कृषि तथा पशुपालन कर अपना निर्वाह करने लगे। उस समय यहाँ चौहान राजपूतों का आधिपत्य था। इस समय चौहानों का राजनीतिक उत्कर्ष हो रहा था और अजमेर तथा दिल्ली में केन्द्रस्थ रहकर चौहान साम्राज्य का प्रसार बहुत बड़े भू-भाग पर हो गया था। परन्तु विक्रम संवत् 1249 (1192 ई.) में चौहान सम्राट पृथ्वीराज तृतीय की मोहम्मद गौरी से पराजय के साथ ही चौहान साम्राज्य का पतन हो गया और चारों तरफ अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो गई। यद्यपि दिल्ली पर मुसलमान विजेता का आधिपंत्य हो गया था परन्तु साम्राज्य पर वास्तविक आधिपत्य प्राप्त करना तत्काल ही संभव नहीं था। इस अराजक वातावरण का लाभ उठाकर अनेक छोटे-बड़े भू-स्वामी उठ खड़े हुए। ऐसे में जांगल प्रांत (बाद में बीकानेर) के कुछ प्राचीन और प्रमुख चौहान ठिकाने (छापर, लाडनूँ, ददरेवा, रिणी आदि) तो अपना अस्तित्व बनाए रख सके, किन्तु अन्य स्थानों पर नवीन शक्तियाँ उभर आईं।

ग्याहरवीं शताब्दी के प्रारम्भ में इस जांगल प्रांत (बीकानेर) में आकर बसने वाले जाटों को किसी प्रकार के राजनीतिक प्रतिरोध का सामना नहीं करना पड़ा। एक तो वे जिस भाग में आकर बसे थे वह दुर्गम मरुस्थल था। दूसरा इन जाटों की कोई राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा उस समय नहीं थी। उनका उद्देश्य कहीं भी बस जाना था, इससे यहां के भूपतियों को कोई आपत्ति नहीं थी। इन जाटों ने विभिन्न स्थानों पर सरों (तालाबों) का निर्माण कर खेड़े (खेर अर्थात् कुत्सित नगर) बसा लिए, इसीलिये अधिकांश गाँवों के नामों के अंत में 'सर' शब्द आता है। बारहवीं शताब्दी के अन्त में चौहान साम्राज्य के पतन से उत्पन्न हुई अराजक स्थिति से स्वाभाविक रूप से जाटों ने भी लाभ उठाया और इस क्षेत्र में जाट जनपदों का प्रादुर्भाव हुआ। इन जाट जनपदों के मुखिया अपनी परम्परागत जनपदीय रीति के अनुसार शासन करने लगे। इनमें से कुछ तो बहुत छोटे ठिकाने थे जब कि कुछ बड़े और उल्लेखनीय ठिकाने बन गए थे। ये जाट ठिकाने सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में राठौड़ों के इस क्षेत्र में आगमन तक लगभग तीन सौ वर्षों तक इस क्षेत्र के बड़े भू-भाग पर शासन करते रहे।

इन जाट जनपदों का प्रामाणिक इतिहास जानने के लिए इनसे सम्बन्धित साहित्य, शिलालेख, ताम्रपत्र, सिक्के आदि कुछ भी प्रमाण उपलब्ध नहीं हैं। कुछ

छत्रियाँ, सती-स्मारक, देवलियां आदि मिलती हैं जिन पर अधिकांश पर कोई लेख नहीं है। इस क्षेत्र की छत्रियां-देवलियां आदि अधिकतर राठौड़ों के आगमन के पश्चात् 17वीं शताब्दी की हैं। बीकानेर राज्य के इतिहास ग्रन्थों व ख्यातों में बीकानेर राज्य की स्थापना से पूर्व इस क्षेत्र में 7 मुख्य जाट जनपदों का उल्लेख हुआ है। बीकानेर राज्य के प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थ 'दयालदास री ख्यात' में विक्रम की 16वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध (वि. सं. 1522 के बाद) में राठौड़ों के इस क्षेत्र में आगमन के समय यहाँ स्थित निम्नलिखित जाट जनपदों अथवा ठिकानों का वर्णन दिया गया है—

गोत का नाम	मुखिया का नाम	राजधानी	गांवों की संख्या
गोदारा	पाण्डु	शेखसर या लाधड़िया	360
सीहाग	चोखा	सूई	140
सोहुआ	अमरा	धाणसिया	84
सारण	पूला	भाडंग	360
बेणीवाल	रायसल	रायसलाणा	360
कसवां	कंवरपाल	सीधमुख	360
पूनियां	कान्हा	बड़ी लूंछी (लुंछी)	360

दयालदास के उक्त विवरण के अनुसार राठौड़ों के इस जांगल प्रान्त में आगमन से पूर्व यहाँ विभिन्न जाट ठिकाणों के गांवों की संख्या 2024 होती है। कर्नल टाड ने जोहियों को जाट मानते हुए जाट राज्यों के गांवों की संख्या 2200 बताई है। कर्नल टाड के विवरण में गोत्र नाम व गांवों की संख्या में भी अन्तर है। विवरण इस प्रकार है—

गोत्र→	जोहिया	सारण	असियाग	ढोणीवाल	पूनिया	गोदारा
गाँव→	600	300	150	150	300	700

'जाट इतिहास' के अनुसार गांवों की यह संख्या 2534 है।

गोत्र→	सारण	कस्वां	असियाग	गोदारा	जोहिया	बेणिवाल
गाँव→	300	400 (लगभग)	150	700	600	84

उपर्युक्त तीनों सूचियों में गांवों की संख्या में अन्तर दृष्टिगोचर होता है। साथ ही शाखाओं (गोत्रों) के नामों में भी अन्तर है। दयालदास की सूची में जोहिया नाम नहीं है जबकि कर्नल टाड और ठाकुर देशराज कृत 'जाट इतिहास' की सूची में जोहिया नाम है। कर्नल टाड की सूची में कस्वां तथा सोहुवा नाम नहीं हैं। ठाकुर देशराज की सूची में सहुवा तथा पूनिया नाम नहीं हैं।

'चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास' में श्री गोविन्द अग्रवाल का मत है कि इन जाट जनपदों के गाँवों की संख्या बताने में बहुत कुछ कल्पना का सहारा लिया गया है, क्योंकि उक्त सातों राज्यों का कुल क्षेत्रफल 80×50=4000 वर्गमील होता है

और इतने से क्षेत्र में दो ढाई हजार गांवों का स्थित होना संदिग्ध है, जबकि मि. पाउलेट ने अपने गजट में पूर्व बीकानेर राज्य का क्षेत्रफल 23,500 वर्गमील लिखा है और उसने गांवों की संख्या 1814 दी है। श्री अग्रवाल का मत तथ्यपूर्ण प्रतीत होता है, परन्तु यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि बीकानेर राज्य में अकाल आदि की स्थितियों से विभिन्न कालों में गांवों की संख्या में भारी परिवर्तन होता रहा है, फिर पाउलेट ने जो संख्या दी है वह बहुत बाद की है। जैसा कि 'वाक़ए राजपूताना' में लिखा गया है—महाराजा सूरतसिंह के समय में ही इन देहातों की संख्या घट कर आधी रह गई थी। जो हो यह तथ्य है कि राठौड़ राव बीका द्वारा इस क्षेत्र में इन जाट जनपदों को अपने आधिपत्य में लेने के पश्चात् ही बीकानेर राज्य की स्थापना करना संभव हो सका।

कसवां (कस्वां) कुल

'जाट इतिहास' के अनुसार आरम्भ में कसवां समुदाय का जनपद सिंध में था, और ईसा की चौथी सदी से पहले ये जांगल प्रदेश (बीकानेर संभाग) में आबाद हुए थे। ऐसी स्थिति में संभव है जाटों के एक प्राचीन गोत्र कश्य से कसवां बना हो। भाटों की बहियों में इन्हें पड़िहारों से सम्बन्धित लिखा गया है। 'चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास' (श्री गोविन्द अग्रवाल) में इन भाट बहियों का सारांश इस प्रकार दिया गया है—

कसुंपाल पड़िहार मंडोर छोड़कर पहले मातामूंनण फिर कैवाइस कालका गया, वहाँ से ताल-छापर आया, उसके पास 5000 की फौज थी। ताल-छापर में मोहिल सुलतान सिंह—उदयसिंह का राज्य था जिसमें 225 गांव थे। मोहिलों ने कसुंपाल को धोखे से मारने के उद्देश्य से गोठ का निमंत्रण भेजा। कसुंपाल को मोहिलों के ब्राह्मण दाहिमा छाजल ने षड्यंत्र की जानकारी दे दी। तब कसुंपाल ने मोहिलों को पहले अपने यहाँ गोठ पर आने का आग्रह किया। मोहिलों ने इस निमंत्रण को स्वीकार कर लिया। तब कसुंपाल ने बारूद बिछाकर उस पर बिछात करादी और जब मोहिल उस पर जीमने बैठे तो आग लगादी। इस काण्ड में 350 मोहिल मारे गये तथा छापर पर कसुंपाल का अधिकार हो गया। कसुंपाल ने वहाँ थाना बैठा दिया और दाहिमा छाजल को साथ लेकर सीधमुख पर चढ़ाई कर दी, जहाँ रणधीर जोहिया 125 गांवों पर राज्य करता था। युद्ध में रणधीर जोहिया हार गया और सीधमुख पर कसुंपाल का अधिकार हो गया। सीधमुख से चलकर कसुंपाल सात्यूं (चूरू से 24 मील उत्तर पूर्व में) नामक स्थान पर आया, जहाँ सातूं (सांवत) चौहान का राज्य था। वस्तुतः यहाँ सात भाइयों का राज्य था। इनके नाम थे—सातूं सूरजमल, भोमसी, नारसी, तेजसी, कीरतसी और प्रतापसी। प्रत्येक भाई के पास सात-सात गांव और 150 सवार थे। युद्ध में सातों भाई मारे गए और सात्यूं पर कसुंपाल का अधिकार हो गया। सातों चौहान भाइयों पर उनकी स्त्रियाँ सती हुई, जिन पर वाद में मण्डप बनाये गये। इन सतियों ने कसुंपाल को शाप दिया। फिर

कसुंपाल जाटों में सम्मिलित हो गया और जाटों के यहाँ विवाह किया जिससे होने वाली सन्तान कसवां कहलाई। वि.सं. 1150 फाल्गुन सुदी 2 शनिवार (18 फरवरी 1094 ई.) के दिन कसुंपाल का सात्यूं पर कब्जा हुआ। कसवों के पुरोहित सात्यूं के दाहिमा ब्राह्मण ज्ञानाराम की बही के अनुसार कसुंपाल पहले छापर फिर सं. 1125 आसोज बदी 4 मंगलवार (19 अगस्त 1068 ई.) को सीधमुख आया। माघ बदी 13 को सीधमुख छोड़ा और फागुण सुदी 2 शनिवार को सात्यूं पर अधिकार किया। सात्यूं के चौहान की सात स्त्रियां (भटियाणी, नोरंगदे, पंवार, हीरू आदि) सती हुई।

ज्ञानाराम की बही के अनुसार बाद में कसुंपाल के वंश में क्रमशः कोहला (कँवला), घणसूर, महसूर, मला, थिरमल, देवसी और गोवल हुए।

'चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास' में ज्ञानाराम की बही के अनुसार पाद टिप्पणी दी गई है कि गोवल के 9 लड़के थे—चोखा, बरगा, जगा, मलक, महण, ऊहड़, रणसी, भोजा और मंगल। इन्होंने अलग-अलग ठिकाने कायम किए जो 'थांबे' कहे जाते थे। चोखा के अधिकार में 12 गांव दूधवा, बाड़की, घांघू, लाधड़िया (त. चूरू), सिरसली, सिरसला, बिरमी, झाड़सर, और भुरड़की (वर्तमान राजपुरा) आदि थे। बरगा के अधिकार में हडियाल, महणसर, गांगियासर, लुटु, ठेलासर, देपालसर, कारंगा, कालेरा बास (चूरू का पुराना नाम) आदि थे। रणसी के अधिकार में जसरासर, दूधवा मीठा, रिड़खला, सोमासी, झारिया, आसल खेड़ी, गिनड़ी, पिथीसर, धीरासर, ढाढर और बूंटिया आदि थे। ऊहड़ के अधिकार में नोपरा, जिगासरी, सेवाटाडा, मुनड़िया, रूकनसर आदि थे। इसी प्रकार अन्य थाम्बों के नाम और गांव भी उक्त बही में लिखे हुए हैं।

परवाना बही राज श्री बीकानेर से भी ज्ञात होता है कि चूरू के आस-पास कस्वांओं के अनेक गांव रहे थे। यथा चूरू (एक बास), खासोली, खारिया (दो बास), सरसळा, पिथवीसर, आसलखेड़ी, रिड़खला (तीन बास), बूंटिया, रामसरा, थालोड़ी ढाढर, भामासी, बीनासर, बालरासर, भैरूंसर (एक बास), ढाढरिया (एक बास), घांघू, आसलू लखाऊ, दूधवा, जसरासर, लाधड़िया, और चळकोई आदि। बूंटियां के चौधरी मालाराम कसवां के अनुसार बूंटियां से कुछ दूर पहले भाखरों का खेड़ा था, जिन सब को वि. सं. 1545 (सन् 1488 ई.) में तागड़ी पागड़ी मारकर छाला कस्वां ने नया गांव बसाया। उन दिनों यहाँ बूंटीनाथ नामक एक साधु तपता था, उसके नाम पर ही इस गांव का नाम बूंटिया रखा गया।

भाटों की बही के अनुसार कसुंपाल के वंशज चोखा ने सं. 1485 माघ बदी 9 शुक्रवार (दिस. 1428 ई.) को दूधवा खारा पर अधिकार किया। चोखा के वंशज दूला, जालप, नगराज, राजू, जसरथ, और डूंगरसी हुए। डूंगरसी, बीकानेर के राजा करणसिंह के समय में मौजूद था। भाटों की बही के अनुसार उसके पास 140 घोड़े थे।

श्री गोविन्द अग्रवाल ने अपने 'चूरू मण्डल का शोधपूर्ण इतिहास' में भाटों की बहियों से उद्धरित उक्त विवरण में से कतिपय बातों को संदिग्ध घोषित किया है। एक तो यह कि छापर के मोहिल शासकों में सुलतानसिंह, उदयसिंह नाम नहीं पाये जाते। कसुंपाल द्वारा मोहिलों को बारूद से उड़ा देने का प्रसंग भी अविश्वसनीय है क्योंकि 11वीं शताब्दी में इस क्षेत्र में बारूद का प्रयोग प्रचलित ही नहीं था। फिर छापर-द्रोणपुर में मोहिलों के ठिकाने विक्रम की 16वीं शताब्दी के पूर्व तक बने रहे यह इतिहास सिद्ध है। दूसरा सात्यूं में कसुंपाल और चौहानों की लड़ाई में 2000 से अधिक सैनिकों का मारा जाना तर्क पूर्ण नहीं लगता, फिर उस समय में सैनिक सेवा देने वाले खानजादे ही उपलब्ध नहीं थे। जबकि भाटों ने एक साथ 500 खानजादों का काम आना लिखा है।

यहाँ पड़िहार कसुंपाल के संबंध में भी स्पष्टीकरण आवश्यक है। कसवों के भाट बजरंग लाल, हनुमान और शैतानसिंह (मु. हिंगोनिया जि. अजमेर) की बहियों के अनुसार जाटों में 12 नख (शाखाएं) चले जैसे कसुंपाल से कसवां, जखराज से जाखड़ आदि। इस प्रसंग में (जाट इतिहास) के लेखक ठा. देसराज से सहमत होना पड़ेगा कि भाटों की बहियों में विशेषकर प्राचीनकाल से सम्बन्धित प्रसंग अधिकांश में भ्रमपूर्ण अथवा कपोल-कल्पित है। कसुंपाल से सम्बन्धित प्रस्तुत प्रसंग में भी भाटों की बहियों में यह तो उल्लेख है कि सात्यूं के चौहान भाइयों की पत्नियों ने सती होते समय कसुंपाल को शाप दिया और फिर अचानक कसुंपाल ने जाटों में विवाह कर लिया। परन्तु प्रश्न उठता है कि सतियों ने क्या शाप दिया ? और कसुंपाल के समक्ष जाटों में विवाह करने की क्या आवश्यकता आन पड़ी ? यदि वह राजपूत पड़िहार था तो फिर हमें यह भी ज्ञात नहीं है कि मण्डोर के राजपूत किसी कसुंपाल नामक पड़िहार ने 5000 की (उस काल में विशाल) सेना सहित विजय अभियान के रूप में प्रस्थान किया था।

उपर्युक्त संदर्भ में तथ्य यह है कि पूर्व मध्यकाल तक पड़िहार आदि जनों अथवा वंशों के रूप में ही जाने जाते थे और इनमें से कुछ लोगों को राजपुत्र अथवा राजपूत की उपाधि दी गई थी जो बाद में जाति के रूप में जानी जाने लगी। इन पड़िहार आदि जनों अथवा वंशों में से बहुत से लोग जाट, गूजर और मराठा आदि जातियों में भी सम्मिलित हुए थे अतः अधिक संभावना यह है कि कसुंपाल पड़िहार जन से अथवा वंश से सम्बन्धित था अथवा वह पड़िहार जाट था जो 11वीं शताब्दी ईस्वी के अन्तिम वर्षों में जांगल प्रान्त में आया और स्थानीय जाटों में विवाह सम्बन्ध किया।

इस तरह वह या तो पहले से ही पड़िहार जाट था अथवा फिर केवल पड़िहार था, और यहाँ आकर जाटों में सम्मिलित हो गया। कसुंपाल ने सीधमुख और सात्यूं पर आधिपत्य कर कसवां जाट ठिकाने की स्थापना की। श्री गोविन्द अग्रवाल का मत है कि कसुंपाल अथवा कसवों ने चौहान साम्राज्य के पतन (वि. सं. 1249)

(सन् 1192 ई.) के पश्चात् ही किसी समय सीधमुख व सात्यूं आदि में अपने ठिकाने स्थापित किये और फिर धीरे-धीरे समीपवर्ती क्षेत्र में फैल गये। अन्य जाट राज्यों की भांति कसवां राज्य भी 16वीं शताब्दी वि. के पूर्वार्द्ध तक कायम रहा।

जैसा कि पूर्व में लिखा गया है कि कसवों के पुरोहित ज्ञानाराम ब्राह्मण की बही के अनुसार कसुंपाल के पश्चात् उसके वंशज कोहला (कंवला), घणसूर, महसूर, मला, थिरमल, देवसी, जयसी और गोवल कसवा राज्य के अधिकारी हुए। इन नौ पीढ़ियों के पश्चात् गोवल के नौ पुत्रों चोखा, दारगा, जगा, मसक, महण, ऊहड़, रणसी, भोजा और मंगल ने अपने अलग-अलग ठिकाणे बांध लिये जो कसवों के नौ थाम्बे कहे जाते थे। इसके बाद विक्रमी शताब्दी 16वीं के पूर्वार्द्ध में जब राठौड़ बीका जिस समय इस क्षेत्र में आया तब सीधमुख में कसवों का राजा कंवरपाल था। इस समय कसवां राज्य में 360 गांव थे। कर्नल टाड ने अपने इतिहास ग्रन्थ में कस्वों का उल्लेख नहीं किया है। किन्तु दयालदास, पाउलेट तथा मुंशी सोहनलाल ने अपने इतिहास ग्रन्थों में कसवों का उल्लेख प्रमुख जाट ठिकानों में किया है। सीधमुख चूरू जिले की राजगढ़ तहसील में चूरू से लगभग 45 मील उत्तरपूर्व में स्थित है। सोलहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में कसवां राज्य भी अन्य जाट राज्यों की भांति राठौड़ों द्वारा हस्तगत कर लिया गया।

मोमबत्ती-अगरबत्ती

कमरे के एक कोने पर धूपबत्ती जली थी दूसरे पर मोमबत्ती। मोमबत्ती ने तिरस्कारपूर्वक धूपबत्ती की ओर देखा और कहा—देखती नहीं मैं कितनी भाग्यवान हूँ चारों ओर मेरा प्रकाश फैल रहा है। सबकी आँखें मेरी ओर रहती हैं।

धूपबत्ती ने कहा—बहिन सो ठीक है पर परीक्षा के कठिन समय में धैर्य और साहस के साथ अपनी जगह अड़ी रह सको तभी चमक की सार्थकता है। मोमबत्ती ने बात अनसुनी कर दी। हवा का एक तेज झौंका आया। मोमबत्ती बुझ गई पर धूपबत्ती ने अपनी सुगन्ध और भी तेजी से बिखेरना शुरू कर दिया।

ऐसा भक्त व्यक्ति या देवता से मोह न जोड़कर उस परमपिता ईश्वर को ही पूछता है जो आदर्शों का समुच्चय है।

जाट जाति का वर्चस्व : एक विहगावलोकन

डॉ. ब्रह्माराम चौधरी

श्री गुप्त ने 275 ई. के लगभग गुप्त राजवंश की स्थापना की थी। चन्द्रगुप्त प्रथम इनका पौत्र था। 'अजयत् जाटो हूणान्' अर्थात् जाटों ने (गुप्त वंशज) हूणों (चीनियों) को जीता। यह चन्द्रगोमिन ने अपने व्याकरण में उल्लेख किया है। इसके अतिरिक्त सोमदेव ने 'कथा सरित्सागर' में उज्जैन के राजा महेन्द्रादित्य (कुमार गुप्त) के पुत्र (समुद्र गुप्त) द्वारा हूणों को जीतने का वर्णन किया है। इससे अनुमान होता है कि गुप्त जाट थे।

श्री गुप्त (275-300 ई.) महाराज घटोत्कच्छ गुप्त (300-319 ई.) चन्द्रगुप्त प्रथम (320-335 ई.), समुद्र गुप्त (335-375 ई.) राम गुप्त (375-415 ई.), चन्द्र गुप्त द्वितीय (भाई रामगुप्त) का नाम ही विक्रमादित्य है, जिसके नाम से विक्रम सम्वत् भारत सरकार ने माना है। (चौधरी एट-अल 1985) कुमार गुप्त (415-55 ई.), स्कन्द गुप्त (455-467 ई.), (महेन्द्रादित्य कुमार गुप्त की उपाधि थी) पूर्व गुप्त (467-73 ई.), नरसिंह गुप्त (473-76 ई.), कुमार गुप्त द्वितीय (476 ई.), बुद्ध गुप्त, भानु गुप्त (510 ई.) तथा हर्षवर्द्धन (606-647 ई.) के समय में जाट राजा हुए जिनके शासन काल में (647 ई.) में चीनीयात्री ह्वेनसांग उनसे मिले थे (ह्वेनसांग (629-644 ई.)। हर्षवर्द्धन की पेशावर के पास राजधानी थी जो तक्षशिला के नाम से जानी जाती है। ह्वेनसांग (629-44 ई.) तक भारत में भ्रमण करता रहा। यह महान् यात्री भीनमाल भी आये थे जहाँ ब्रह्म गुप्त पुत्र जिशुआ महान् गणितज्ञ और खगोलिकी के प्रकाण्ड विद्वान् रहते थे। ब्रह्म गुप्त ने 'ब्रह्म सिद्धान्त' नामक पुस्तक लिखी जिसका अलबिरूनी ने अध्ययन (1018 ई.) तक किया था (अलबिरूनी 1992)।

सुलतान महमूद (गजनी) ने 1018 में जब भारत पर आक्रमण किया तो रेणी (तारानगर जि. चूरू), गोगनु (तह. जायल, जिला नागौर), मांगलोद, अनाहिलवास (नागौर का प्राचीन नाम अलबिरूनी के अनुसार था) जो भीनमाल से 384 किमी. (16 योजन) दूर था।

7 से 10 वीं सदी के भारत के इतिहास में धीमी गति का काल रहा है। उसके बाद 700 साल परसियन, अफगान, मंगोल एवं मुगलों के हिंसक हमले होते

रहे। कोई भी शासन लम्बे समय तक स्थाई नहीं रहा। पर भारत की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा शैक्षिक और सांस्कृतिक स्वरूप की गतिशीलता पर प्रभाव डालता रहा। इन आक्रमणों के कारण सिन्धु नदी के किनारे से निकल कर मरूस्थल में आकर बसने वाले जाटों ने राजस्थान के पश्चिमी उत्तरी भागों में जाट-जनपद की 13 वीं शताब्दी में स्थापना की।

उसके बाद सांई गोत्र के जाट शिष्य (सिख शिष्य का सरलीकरण है) रणजीतसिंह 7 जुलाई 1799 ई. लाहौर के सिंहासन पर महाराज बनकर आरूढ़ हुए तथा 18 साल की उम्र में शाह झमन को (जो अहमदशाह अब्दाली का पोता था) 1798 ई. में लाहौर में हराया तथा उस समय रणजीत सिंह के पास 5000 घुड़सवारों की सेना थी। औरंगजेब के शासन के प्रथम दशक में अत्याचारों के बढ़ने से आगरा के पास जाट सरदार गौकुला जी ने औरंगजेब की सेना का सामना किया, उन्हें शनिवार 1 जनवरी 1670 ई. को श्री उदयसिंह के साथ आगरा की कौतवाली के सामने अंग अंग काटकर मरवाया गया क्योंकि गौकुला जी ने धर्म त्याग नहीं किया (उपेन्द्र शर्मा 1977)। इस जघन्य अपराध से बदला लेने 'सिनु सींनी' के जाट सरदार राजाराम जी में प्रतिशोध की भावना प्रबल हो उठी। उन्होंने अकबर की कब्र को खोदी, तथा हड्डियाँ निकालकर अग्नि में झोंक दी। 14 जुलाई 1688 ई. को राजाराम जी शहीद हुए।

इसके पूर्व जाटों ने औरंगजेब की मृत्यु के बाद 1709 ई. में बाण्डा के नेतृत्व में विद्रोह किया था और उसके पुत्र बहादुरशाह द्वितीय को हरा दिया था और पूर्वी पंजाब के बड़े भू भाग पर अधिकार कर लिया था।

सन् 1670 ई. में जाटों ने औरंगजेब का सामना किया था।

मोहम्मद गजनी 1018 ई. में सोमनाथ के मन्दिर से सोना, चाँदी, पत्थर की प्रतिमाएं एवं दरवाजे गजनी ले गया था जिनको महाराजा रणजीतसिंह अपने शासनकाल (सन् 1792 से 1839 ई.) भारत लाये।

सन् 1830 ई. में महाराजा रणजीतसिंह ने काबुल के बादशाह सूजा से कहा कि 1030 में महमूद सोमनाथ के मन्दिर से उतारकर चन्दन की लकड़ी के जो दरवाजे ले गया था वह पुनः लौटावे, और इसी प्रकार 1 जून 1813 ई. को शाह सूजा एवं उसकी बैगम बफा बैगम से कोहिनूर हीरा भी पुनः प्राप्त कर लिया क्योंकि शाह सूजा के भाई को काश्मीर की जेल से छुड़ाकर सौंपा था। कोहिनूर हीरा 300 कैरट से कुछ अधिक वजन का था।

महाराज रणजीतसिंह के दीवान का नाम मोहकम चन्द था और उनके प्रधान सेनापति हरिसिंह नलवा थे। हरिसिंह नलवा के नाम से अफगान थरति थे। एटोक के किले को घेर कर अफगानिस्तान की सेना को नलवे ने हराया था। (खुशवन्तसिंह 1965)। राजनैतिक चतुराई के कारण महाराजा रणजीतसिंह ने

ब्रिटिश राजदूत 'मैटकोफ' को जो उनसे मिलने गया था, महाराजा ने कांगड़ा को जीत लिया था, जब मैटकोफ (24 वर्ष का 1808 में तथा महाराजा 27 वर्ष के थे) लाहौर में थे तो अम्बाला एवं फरीदकोट को भी अपने राज्य में मिला लिया। मैटकोफ ने 1808 से 1818 के मध्य भारत के समस्त राजाओं को ब्रिटेन के अधीन कर लिया था। रणजीतसिंह ने हमेशा के लिए इरानियत एवं अफगानियत को भारत में आने के दरवाजों को बन्द कर दिये थे।

1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम में अजगर यानि अहीर, जाट, गुजर और राजपूतों ने साथ होकर अंग्रेजी शासक (फिरंगियों) का सामना किया था। परन्तु भारत के महाराजा एवं धनाढ्य वर्ग ने अंग्रेजों का साथ दिया था।

आजादी की लड़ाई में 90 साल तक किसान मजदूर, जाट, किसान सामन्ती एवं औपनिवेशिकी अत्याचार के दोहरे शासन का सामना कर फिर स्वतंत्रता के सम्मानित युग में आये। महाराज महेन्द्रप्रताप जी इसमें अग्रणी रहे और 1916 से 1947 ई. तक ईरान, जापान तथा चीन में रहकर देश की आजादी में योगदान देते रहे।

29 अप्रेल 1927 को महाराजा महेन्द्रप्रताप जी पेरिस में 'रोमा रोलां' से भी मिले थे जो भारत की आजादी के प्रबल समर्थक थे। (रोमा रोला की डायरी 1993)।

देश के भीतर महात्मा गांधी के नेतृत्व में चौधरी चरणसिंह जी, श्री कुम्भाराम जी आर्य, पंजाब के श्री प्रतापसिंह आदि जाट नेताओं तथा आम जाट कृषकों ने स्वातंत्र्य संग्राम में सहभागी बनकर विजय श्री प्राप्त की।

संदर्भ ग्रन्थ :

1. राणावत मनोहरसिंह 1981—इतिहासकार मुहणौत नैनसी और उसके इतिहास ग्रन्थ
2. पाइलट बी. डब्ल्यू (1874)—गजेटीयर दी बीकानेर स्टेट
3. साकरिया बद्री प्रसाद—मुहता नैणसी री ख्यात भाग 3
4. चारण चन्द्रदान (1994)—किसान स्मारिका, रानी बाजार, बीकानेर
5. खुशवन्तसिंह (1965)—रणजीतसिंह महाराजा ऑफ दी पंजाब
6. शर्मा सत्यनारायण—अनुवाद (1993) रोमा रोलां का भारत, खण्ड एक
7. उपेन्द्र शर्मा (1977)—जाटों का नवीन इतिहास।
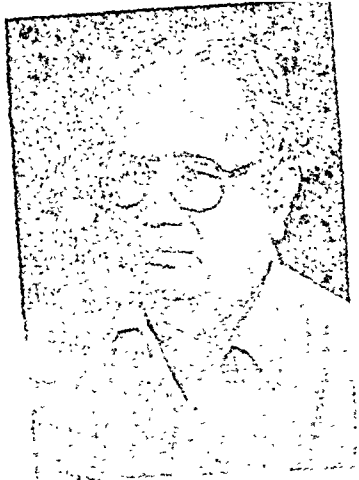
समर्पित समाजसेवी सन्त की जीवन-गाथा

डॉ. परमानन्द सारस्वत

राजस्थान की स्वर्णमयी मरुभूमि का भारत के गरिमा वर्द्धन में महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। यहाँ भक्ति, शक्ति और समृद्धि तीनों की त्रिवेणी के अनेक भगीरथ उत्पन्न हुए हैं। यहाँ मीरा की भक्ति, प्रताप के पराक्रम और राष्ट्र के लिए अपना सम्पूर्ण धन, वैभव समर्पित करने वाले अनेक जगत् सेठों की अनेक अटूट परम्पराएं रही हैं। इसी राजस्थान की पावन धरा के पश्चिमांचल में स्थित सुनहले बालू के टीलों से आवृत्त 'चूरू' जिला पूर्व में हरियाणा प्रान्त तथा पश्चिम में बीकानेर, उत्तर में श्रीगंगानगर तथा दक्षिण में सीकर और झूंझुनू जिलों की सीमाओं से सटा है। चूरू तथा उसके समीपस्थ जिलों की सम्बद्ध सीमा-भूमि ने इस शताब्दी में ऐसे अनेक नररत्न पैदा किये हैं जिन पर संस्कृत की यह उक्ति अक्षरशः चरितार्थ होती है—

'स जातो येन जातेन वंशो याति समुन्नतिम्'

जीवन के भौतिक और आध्यात्मिक दोनों पक्षों को यहाँ के भूमितनयों ने अपनी महनीय उपलब्धियों से समृद्ध किया है। ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का अखण्ड-दीप प्रज्ज्वलित करने वाले संगरिया के सन्त स्वामी केशवानन्दजी का चूरू सीकर जिले के समीपवर्ती ग्राम में जन्म हुआ था। अपने समय के आर्य-समाज के महान् शास्त्रार्थी पंडित गणपति शर्मा, जिन्होंने काश्मीरी पण्डितों को पादरी से शास्त्रार्थ कर, उसे पराजित कर ईसाई होने से बचाया, वे चूरू के ही निवासी थे। सनातन धर्म के अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचार प्रसार में निरत 'गीता प्रेस' जैसे महान् राष्ट्रीय संस्थान के संस्थापक श्री जयदयालजी गोइन्का की जन्मभूमि भी यही नगर है। तथा आजन्म उनके सहयोगी-साथी रहे भाई हनुमानप्रसादजी पोद्दार जैसी विभूति, जिनके विषय में महात्मा गांधी तक की यह मान्यता रही है कि मुझे मेरी दृष्टि में सत्य के स्वरूप श्री पोद्दार ही लगते हैं, रतनगढ़ में जन्मे और संस्कारित हुए थे।

नाथ सम्प्रदाय के प्रसिद्ध नाथ श्री अमृतनाथ जी महाराज तथा उनकी चमत्कारिक शिष्य परम्परा इसी क्षेत्र में पल्लवित हुई, जो आज भी यहाँ अपना विशेष वर्चस्व रखती है। इसी जिले की तारानगर तहसील में राजस्थान के प्रसिद्ध

योगी श्याम पाण्डिया भी तपस्यारत रहे हैं, जिनके स्नानोपरान्त धौत वस्त्र आकाश में सूखा करते थे, ऐसी जनश्रुति अब भी प्रसिद्ध है।

इसी प्रकार जैनाचार्यों के पवित्र और प्राचीन धर्मपीठ इस क्षेत्र में विपुल मात्रा में अब भी धर्मप्राण जैन बन्धुओं के आस्था केन्द्र हैं। कला और संगीत के क्षेत्र में 'कत्थक' नृत्य के प्रवर्तक श्री गोपालजी रतनगढ़ तहसील के 'कड़वारी' गांव में ही आविर्भूत हुए। इस भू-भाग पर राठौड़ों के राज्य के पूर्व अनेक समृद्ध जाट जनपद रहे हैं जिनकी गौरव गाथाएँ श्रुतिपरम्परा में प्रचलित हैं।

शिक्षा धर्म और संस्कृति के उन्नायकों के समान ही यहाँ अनेक ऐसे धनिक घराने भी उत्पन्न हुए हैं, जिनका भारतीय व्यापार में अग्रगण्य स्थान हैं। इनमें बिड़ला, डालमियां, सिंघानिया, मोदी, पोद्दार तथा रूंगटा आदि प्रमुख हैं। इस प्रकार इस मरु-अंचल में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अग्रगण्य नररत्न उत्पन्न हुए हैं, जिनके कारण पृथ्वी का 'वसुन्धरा' नाम सार्थक सिद्ध होता है।

'मरु-भूमि' के कण-कण में जो सुगन्ध है वह अपने आप में अद्भुत् और अविस्मरणीय है। इस प्रदेश के सूखे प्राकृतिक सौन्दर्य में अनुपम आकर्षण है संस्कृत जगत् के ख्यातिप्राप्त मूर्धन्य मनीषी श्री विद्याधरजी शास्त्री ने अपने 'हरनामामृतम्' नामक महाकाव्य में यहाँ के सुनहले सुकोमल बालू रेत के पहाड़ों का मनोहारी वर्णन किया है—'काले भूरे खुरदरे सामान्य पहाड़ों की यह विशेषता कहाँ देखने को मिलती है ? जितनी इन स्वर्णमय टीबों में, और फिर कभी कभी इन सोनलिया टीबों में से एक ऐसी मीठी, मोहक और मादक महक भी उठती है जो न केवल अपने क्षेत्र को अपितु दूर-दूर तक के क्षेत्रों को अपने चुम्बकीय प्रभाव में ले लेती है। प्रत्यक्ष रूप से सम्पर्क और स्पर्श न होने पर भी यह अपना प्रभाव जता ही देती है। स्पर्शानुभव के पश्चात् तो इसके प्रभाव से मुक्त होना सर्वथा असंभव है।'

मनस्विता और चिन्तन की एक ऐसी ही महक 'तारानगर' तहसील के 'गोडास' गाँव में प्रस्फुटित हुई जिसे पहचान के लिए 'श्री भैराराम' नाम दिया गया और अब वे हम सब के श्रद्धेय स्वामी श्री अभयानन्द जी सरस्वती हैं।

पावन कुल

राजस्थान के जाट समाज में 'कस्वां' गोत्र एक उन्नत और अति आदर योग्य गोत्र—कुल है। इसके प्रथम पुरुष, जिनके नाम से 'कस्वां' कुल ख्यात हुआ श्री केसूपाल जी थे। पश्चिमी राजस्थान में राठौड़ों से पूर्व जाट ठिकाने थे। उस समय सिद्धमुख (सीधमुख) जनपद के आप अधिपति थे। भाटों की बहियों के अनुसार राजस्थान प्रान्त के प्रमुख सन्त और लोक देवता बाबा रामदेव की सगी बहिन इनकी दादी थी। इस प्रकार बाबा रामदेव के बहनोई परिहारराय के पुत्र नारडाराम जी आपके पिताश्री थे। इसी कुलीन कुल की नौवीं पीढ़ी में श्री गोडाराम जी हुए हैं जिन्होंने अपने नाम से तारानगर कस्बे के पास 'गोडास' गाँव बसाया। यह ग्राम

तारानगर कस्बे से दक्षिण-पश्चिम में 13 किलोमीटर की दूरी पर स्थित अपनी धोरों की धरती के लिए प्रसिद्ध है। वर्तमान में इसमें लगभग 800 की आबादी है। इसी गाँव से बिलकुल चिपता एक 'आशा की ढाणी' नामक गाँव भी है, इनमें कभी कुछ दूरी थी, अब दोनों एक ही गाँव के दो मोहल्ले हैं। इस गाँव में कस्वां गोत्र के सब से अधिक और उसके बाद सहारण गोत्र के घर हैं।

'कस्वां' गोत्र के भाटों की बहियों से प्राप्त कुल परम्परा इस प्रकार है :

1. श्री केसूपाल जी
2. श्री धनियाराम जी
3. श्री देवाराम जी
4. श्री कंवलराम जी
5. श्री भैंसाराम जी
6. श्री मोडाराम जी
7. श्री भारमल जी
8. श्री जागलराम जी
9. श्री गोडाराम जी
10. श्री प्रहलादराम जी
11. श्री धन्नाराम जी
12. श्री मिन्नाराम जी
13. श्री नाथाराम जी
14. श्री मोटाराम जी
15. श्री खींवसिंहराम जी
16. श्री अमराराम जी
17. श्री पूर्णाराम जी
18. श्री मोतीराम जी

जन्म व परिवार

'गोडास' गाँव को बसाने वाले श्री गोडाराम जी की 9वीं पीढ़ी में श्री मोतीराम जी हुए। ये अपने समय में न केवल अपने गाँव के न्यायप्रिय चौधरी थे अपितु पूरे क्षेत्र में इनकी सहजता, सरलता और परोपकारप्रियता प्रसिद्ध रही है। कोई भी परिचित या अपरिचित कभी भी इनके पास जाकर वांछित सहयोग और सलाह आसानी से प्राप्त कर सकता था। ये अपनी मेहनत की कमाई तथा ईश्वर पर विश्वास करने वाले कर्मठ इन्सान थे। चौधरी शब्द की संस्कृत व्युत्पत्ति 'चहुं-धी' से मानी जाती है। अर्थात् जो आगे, पीछे, ऊपर और नीचे या चारों दिशाओं की स्थिति का अपनी धी (बुद्धि) से निर्णय करे। इस दृष्टि से आप भविष्य के समाज की संभावित रचना से परिचित थे। अतः ग्रामीण जनों में व्याप्त अशिक्षा, अन्धविश्वास तथा रूढ़ियों को दूर करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे। छुआछूत की भावना से उस समय भी आप मुक्त रहे। इसका प्रत्यक्ष उदाहरण आप द्वारा अपने बालकों की सामान्य शिक्षा के लिए एक नायक जाति के व्यक्ति को रखना है।

इसी महापुरुष की धर्मपत्नी श्रीमती लिछमी देवी की कोख से अन्तिम सन्तान के रूप में हमारे चरित नायक श्री भैराराम का जन्म विक्रम संवत 1976 की आषाढ शुक्ला प्रतिपदा (एकम) को हुआ। श्री मोतीरामजी के कुल छः सन्तानें हुई। तीन लड़के और तीन लड़कियां। सब से बड़ी लड़की 'माना' बाई जो दुर्भाग्य से बाल विधवा हो गई थी, आजीवन पीहर में ही रही। उसके बाद श्री मालारामजी, इनसे छोटी नानु बाई तथा इनसे छोटी चीमा, ये दोनों ही बहिनें सादुलपुर के पास जैतपुरा गाँव के एक ही कुलीन परिवार में ब्याही गई। चीमा बाई से छोटे सुरजाराम नामक पुत्र हुए जिनका शैशवावस्था में ही देहान्त हो गया। सब से छोटे हैं श्री आर्य।

श्री भैरारामजी के जन्म के छः माह पश्चात् ही दुर्भाग्य से श्री मोतीरामजी का स्वर्गवास हो गया और परिवार-पोषण, खेती-बाड़ी का दायित्व आपकी पूज्य माताजी तथा बड़े भाई पर, जो आपसे दस वर्ष ही बड़े थे, आ पड़ा। अतः श्री आर्य का शैशव किस करुणामयी स्थिति में बीता इसका अनुमान सहज ही किया जा सकता है ! उस समय इस क्षेत्र में बारानी खेती ही जीविका का एक मात्र साधन थी, फिर रेगिस्तान में दो तीन साल के अन्तराल से अकाल भी अवश्य पड़ते थे, ऐसी स्थिति में इस सम्मानित कृषक परिवार ने कितना कष्ट सहन किया होगा, इसकी सहज कल्पना संभव नहीं।

इस कष्टमय और जीवन यात्रा के संघर्ष के समय में जिस अन्नपूर्णा देवी लिछमी माता ने अपने पूरे परिवार को अपने वैधव्य जीवन की गरिमा को बनाये रखते हुए जिस प्रकार पोषित किया, यह अपने आप में एक महान् तपस्या थी। ऐसी महिमामयी तपस्विनी ममतामयी माता पर सभी को गर्व तो है ही। आज भी उस पुण्य स्मरणीया की स्मृति में उनके सुयोग्य पुत्रों ने गांव गोडास में उनके नाम से कन्या पाठशाला का निर्माण करा कर सही मायने में अपनी मातृश्रद्धा व्यक्त की है। यह देवी 95 वर्षों तक इस धरा धाम पर रही और अपनी योग्य सन्तानों के महान् कार्यों को प्रत्यक्ष देखती रही। आज उनकी अमर आत्मा अपने लाडले पुत्र 'भैरू' की सरस्वती-सृष्टि का अवलोकन करती हुई सन्तुष्ट हो रही होगी।

शिक्षा/संस्कार :

बालक भैराराम जब 7 वर्ष के थे तो उन्हें शिक्षा और संस्कारों के लिए उनकी बड़ी बहिन चीमा बाई के पास उनके ससुराल जैतपुर गांव भेज दिया गया। चीमा बाई का परिवार आर्थिक सम्पन्नता के साथ आर्य समाज के विचारों से संस्कारित भी था। वहाँ आपको सामान्य शिक्षा के साथ-साथ वैदिक संस्कार भी प्राप्त करने का अवसर मिला। लगभग 5 वर्षों तक अपनी बड़ी बहिन और बहनोई की देखभाल में रहे। इस कालावधि में जो आर्य संस्कार मिले वे ही आगे चलकर आपके आदर्श जीवन में मील के पत्थर प्रमाणित हुए। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी यही अवस्था अच्छे या बुरे संस्कारों को ग्रहण करने की हुआ करती है। श्री आर्य (स्वामी जी) कभी-कभी स्वयं भी इसी बात को बताते हैं कि मैं आज जो कुछ भी कर रहा हूँ, उन आर्य सिद्धान्तों की बदौलत ही—जिन्हें मेरे बालमन ने उस समय सुना और ग्रहण किया था। मुझे अब भी जैतपुर के आर्य समाजी जलसे, यज्ञ और भजनीकों से सुने भजन निरन्तर शुभ एवं समाजोत्थान विषयक कार्य करने की प्रेरणा देते रहते हैं।

कृषक बालक 9 या 10 वर्ष की उम्र प्राप्त करते ही अपने परिवार के लिए एक बालिग व्यक्ति के समान उपयोगी हो जाता है। खेत की रखवाली, पशु चराना तथा अन्य छोटे-मोटे कामों को करने में उसकी उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता। अतः श्री आर्य जब 10-11 वर्ष के थे तब अपनी माता और बड़े भाई को

खेती-बाड़ी के काम में सहायता देने के लिए वापिस अपने गांव गोडास आ गये तथा पूरी लगन और तत्परता के साथ घर व खेत के कामों में हाथ बँटाने लगे।

जैतपुर में प्राप्त आर्य समाजी संस्कार तथा पिताजी के समान ही अपने बड़े भाई श्री मालारामजी के शिक्षा के प्रति प्रेम, लगाव व जागरूकता ही खेती की रखवाली व पशुपालन के साथ-साथ विधिवत जीवनोयोगी प्रारंभिक शिक्षा प्राप्ति का हेतु बनी। जिस उम्र में इस वय के बालक अपना सारा समय मौजमस्ती तथा खेलकूद में बीताते हैं उस बाल्यावस्था में श्री आर्य अपने अग्रज द्वारा दिये गये पाठ और पहाड़े याद करते। सायंकाल खेत-खलिहान की सूचना के साथ उन्हें स्मरण किया हुआ पाठ भी सुनाते तथा दूसरे दिन के लिए अध्ययन कार्य भी लेते। दूसरे संगी-साथियों के साथ खेलने-कूदने तथा अलगोजों की मधुर तानों पर झूमने की अपेक्षा बालक भैराराम को पढ़ने में अधिक आनन्द आता था। स्वर साधना की कभी इच्छा होती तो आर्य भजनीकों द्वारा सुनाये गये भजनों व प्रेरक गीतों को स्वयं गाते तथा अन्य साथियों से भी सहयोग लेते। सरल हिन्दी पाठ्यपुस्तकों को पढ़ने का अभ्यास हो गया तो फिर आर्य समाजी साहित्य की छोटी-छोटी उपदेशात्मक पुस्तकें पढ़ने लगे। शिक्षा प्राप्ति का यह क्रम विवाह के पूर्व तक निरन्तर चलता रहा। इस अल्प समयावधि में जितना जो कुछ सीखा वही आगे के अध्ययन-अभ्यास का आधार बना।

औपचारिक कहें या अनौपचारिक इस दृष्टि से शिक्षा का कक्षास्तरीय प्रमाणपत्र आपने प्राप्त किया, 1956 ई. में। जब आप अपने गाँव के निर्विरोध सरपंच चयनित हुए तब राज्य सरकार द्वारा सभी पंचों और सरपंचों से यह आग्रह किया गया कि वह कम से कम प्राथमिक शिक्षा के स्तर तक की योग्यता अवश्य प्राप्त करें ताकि अपने दायित्व का निर्वाह पूर्ण सावधानी से कर सकें। इस आग्रह को स्वीकार करते हुए उपर्युक्त वर्ष में गाँव की प्राथमिक शाला में स्वयंपाठी के रूप में आपने कक्षा 5 की परीक्षा उत्तीर्ण की। स्मरण रहे उसी वर्ष आपके ज्येष्ठ पुत्र डॉ. हनुमानसिंहजी भी उसी विद्यालय में कक्षा 2 में अध्ययनरत थे। पिता और पुत्र दोनों का एक साथ परीक्षा देने जाना गांव के लोगों के लिए एक अद्भुत आनन्द का विषय रहा।

आर्य समाज से सम्पर्क :

अग्रज श्री मालारामजी के कट्टर आर्य समाजी, देशभक्त, स्वतंत्रता सेनानी एवं समाज सुधारक होने के कारण उनका प्रभाव संस्कार रूप में आप पर पड़ना स्वाभाविक था। अतः आप 15 वर्ष की आयु में प्रथम बार 'झुंझुनू' जिले के 'टमकोर' कस्बे में आर्य समाज के जलसे में गये और वहाँ आर्य विद्वानों के प्रवचन तथा भजनीकों के जोशीले भजनों को सुनकर इतने प्रभावित हुए कि आर्य समाज के प्रचारक बनने का पावन शिव-संकल्प ले लिया। वहीं पर आपका पं. दत्तूरामजी

भजनीक से परिचय हुआ जो उस क्षेत्र के एक समर्पित आर्य प्रचारक और प्रभावी वक्ता थे। यह परिचय धीरे-धीरे प्रगाढ़ होता गया और आप दत्तूरामजी के अधिकाधिक निकट आते गये। इनकी प्रेरणा तथा मार्गदर्शन में 'सत्यार्थप्रकाश' का गहन अध्ययन किया और अन्य आर्य साहित्य भी पढ़ा। वास्तव में आर्य सिद्धान्तों की शिक्षा-दीक्षा के आपके गुरु श्री दत्तूरामजी हैं। गुरु-शिष्य अथवा संगी-सहयोगी कुछ भी कहें आप दोनों ने मिलकर अपने ग्रामीण अंचल में वैदिक धर्म के प्रचार कार्य का खूब फैलाव किया। आपके इस वैदिक धर्म के कार्य में श्री मनीरामजी आर्य भी, जो बाद में विधायक भी बने, बड़े सहयोगी रहे।

टमकोर के इस प्रथम जलसे के पश्चात् तो श्री आर्य दूर निकट जहाँ कहीं भी आर्यसमाज के समारोह होते अवश्य जाते। इस समारोह के कुछ समय पश्चात् ही झुंझुनू में वैदिक प्रचार हेतु आर्य-समाज का एक विशाल जलसा हुआ, जिसमें देश भर के प्रसिद्ध आर्य संन्यासी एवं अनेक प्रचारक आये। तीन दिनों तक चले इस आयोजन में आप भी सम्मिलित हुए। उसके संस्मरण को सुनाते हुए श्री आर्य ने कहा कि मेरे जीवन में वैदिक प्राण का संचार टमकोर में हुआ और शरीर को गति की प्रेरणा झुंझुनू के जलसे से मिली। इसके पश्चात् तो प्रतिवर्ष जहाँ कहीं भी इस संस्था के उत्सवादि होते उसमें वे पूरे समय तक संभागी के रूप में अवश्य रहते। यह क्रम अब भी यथावत चल रहा है। अभी 78 वर्ष की आयु में संन्यास दीक्षा लेने के पश्चात् दिल्ली में माह फरवरी 1996 में आयोजित 20 दिनों के वानप्रस्थी अभ्यास वर्ग में आप ने भाग लिया है जो आपकी जीवन्त जिज्ञासा का सूचक है।

प्रबल प्रेरक अग्रज श्री मालारामजी

श्री आर्य के वास्तविक प्रेरणास्रोत तथा जीवन को सही दिशा देने वाले आपके अग्रज श्री मालारामजी रहे हैं। आप श्री आर्य से 10 वर्ष बड़े थे। शिक्षा और संस्कारों की दृष्टि से आपने ही अपने अनुज को सेवा-समर्पण का संस्कार देने के साथ रूढ़ियों व अन्धविश्वासों के विरुद्ध लड़ने के लिए 'हारिये न हिम्मत' की सशक्त प्रेरणा दी। आपमें संकल्पों के प्रति जो दृढ़ता और उन्हें कार्य रूप में परिणत करने की जो अपार इच्छा शक्ति है वह श्री मालारामजी के व्यक्तित्व की ही देन है।

श्री मालारामजी स्वयं आदर्श व्यक्तित्व के धनी थे। लम्बा चौड़ा मस्तक, मोटी मोटी आंखें, रोबीला चेहरा, घनी मूंछें, गौर वर्ण तथा आवाज में बुलंदी तथा सच्चाई के लिए मर मिटने की तमन्ना के आप धनी थे। कट्टर समाज सुधारक, आर्य विचारों के पक्षधर, शिक्षा के प्रचार प्रसार को समाज के विकास की धूरी मानने वाले तो आप थे ही किन्तु इसके साथ ही आजादी के दीवाने स्वतंत्रता सेनानी भी रहे।

भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोलन का शंखनाद देशी रियासतों में बजाने वालों में आप अग्रिम पंक्ति में थे। 1946 ई. में बीकानेर राज्य में जो सामन्तशाही के खिलाफ किसान-आन्दोलन हुआ, उसमें आपने लम्बे समय तक जेल यंत्रणा भी

भोगी। देश के स्वतंत्र होने पर स्वतंत्रता सेनानी होने के फलस्वरूप आपको सम्मानार्थ ताम्रपत्र भी राष्ट्रपति की ओर से भेंट किया गया तथा जीवन पर्यन्त आप स्वतंत्रता सेनानी की पेन्शन भी प्राप्त करते रहे। आपके प्रत्येक कार्य में अनुज भैराराम कभी लक्ष्मण तो कभी हनुमान के समान सहयोग देते रहे। दोनों भाइयों में जो आत्मीय स्नेह सम्बन्ध था वह आजीवन बना रहा। कभी भी जमीन व जायदाद आदि पारिवारिक कारणों से यह स्नेह नहीं टूटा। यही स्थिति व सम्बन्ध अब आपके सुपुत्र एवं भैराराम जी में भी हैं। अब भी जहाँ कहीं भी दान व सहयोग रूपेण धन किसी संस्था विशेष व अन्य सामाजिक कार्यों में दिया जाता है तो वह संयुक्त रूप से घोषित किया जाता है।

आपके दो पुत्र हैं। बड़े श्री दत्तूरामजी जो शिक्षित व धार्मिक विचारों के हैं, किन्तु शारीरिक विकलता के कारण गांव में ही रहते हैं तथा अविवाहित हैं। दूसरे पुत्र श्री हरफूलसिंह हैं जिन्हें सारा तारानगर मास्टरजी के नाम से जानता है। आपने स्नातक कक्षा तक शिक्षा प्राप्त की है। पहले राज्य-सेवा में शिक्षक रहे, फिर लम्बे समय तक पंचायतों पर निरीक्षक। गत 15 वर्षों से राज्य-सेवा को स्वेच्छा से छोड़ कर स्वयं का व्यवसाय तारानगर में कर रहे हैं। राजनीति में सक्रिय होकर जनसेवा में संलग्न हैं। आपका व्यक्तित्व एवं कार्यशैली भी अपने पिता श्री के समान ही है। अपने चाचा श्री भैराराम आर्य के सभी कार्यों में आपकी सदैव ही प्रथम सहभागिता रही है। एक अच्छे भरे-पूरे परिवार के आप प्रमुख हैं। श्री मालारामजी का कुछ वर्षों पूर्व ही सन् 1987 में सामान्य बीमारी के कारण स्वर्गवास हो गया।

विवाह एवं गृहस्थी

अनेक बार व्यक्ति के जीवन में ऐसी परिस्थितियां आती हैं जिनसे उसे अपनी मान्यताओं के प्रति शिथिलता बरतनी ही पड़ती है। श्री आर्य की प्रबल इच्छा रही कि वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार 25 वर्ष की आयु प्राप्त करने के पश्चात् ही गृहस्थाश्रम में प्रवेश करूँ। किन्तु विधवा मां की स्नेहमयी ममता तथा तत्कालीन समाज की परम्परा एवं कृषक संयुक्त परिवार में जन-बल की आवश्यकता को देखते हुए आपका विवाह गाँव 'भामासी' के श्री सरदारारामजी सहारण की ज्येष्ठ कन्या 'जैसा देवी' के साथ विक्रम सम्वत 1994 की वैसाख सुदी 3 (अक्षय तृतीया) को सम्पन्न हुआ। इस विवाह की विशेषता यह रही कि सारा वैवाहिक कार्य वैदिक विधि के अनुसार तो हुआ ही किन्तु इसके साथ ही तीन चार दिनों तक इस मांगलिक अवसर पर वेद-प्रचार, आर्य समाज के प्रचारकों के उपदेश व भजनों का आनन्द भी बारातियों तथा गांव भामासी के लोगों ने उठाया। विवाह के तीन दिन पूर्व आपका यज्ञोपवीत संस्कार भी हुआ। द्विजत्व ग्रहण के समय लिये संकल्प के अनुसार उस समय से आरंभ किया गया दोनों समय संध्योपासन व गायत्री जप अब भी अनवरत चालू है।

इस विवाह के 8 वर्ष बीत जाने पर भी जब प्रकृति ने आपको पितृ-ऋण से मुक्ति का अवसर नहीं दिया तो आपकी धर्मपत्नी श्रीमती जैसादेवी ने विशेष आग्रह

किया कि उसकी छोटी बहिन गोरा देवी के साथ पाणिग्रहण करें ताकि वंशबेल में वृद्धि हो। ऐसा ही आग्रह माता लिछमादेवी और श्वसुर श्री सरदारारामजी का भी रहा। सभी के आग्रह व आदेशों का आदर करते हुए आपने द्वितीय विवाह श्रीमती गोरा देवी के साथ वि. सं. 2002 में किया। यहाँ पुण्यमयी 'जैसा देवी' के ममतामय जीवन के पावन स्मरण में इतना ही लिखना पर्याप्त रहेगा कि यह महान् भारतीय नारी अपने उच्च भारतीय संस्कारों के अनुसार जीवन पर्यन्त पूर्ण निष्ठा के साथ अपने पति के प्रति समर्पित ही नहीं रही अपितु अपनी छोटी बहिन की सन्तानों के प्रति वही ममता व वात्सल्य बनाये रखा जो एक मां में होता है तथा उन्हें भी सभी का वही आदर-सम्मान व प्यार मिला। इस आधुनिक मैत्रेयी का स्वर्गवास दिनांक 27-10-1992 को हुआ। इस ममतामयी मां के चरणों में शतशः नमन।

'श्रीमती गोरा देवी' के विवाहोपरान्त प्रभुकृपा से वंशबेल पल्लवित, पुष्पित और फलित हुई। दि. 16-8-1948 ई. को प्रथम पुत्र डॉ. हनुमानसिंह का जन्म हुआ। उसके पश्चात् ज्येष्ठ कन्या अमरावती का जन्म 1950 में तथा तृतीय सन्तान व द्वितीय पुत्र जीतसिंह का जन्म 1953 में एवं अन्तिम सन्तान मनोरमा का जन्म 1956 ई. में हुआ।

परिवार वृद्धि के साथ दायित्व का भार भी बढ़ा। आर्थिक आवश्यकताओं में भी वृद्धि अनुभव की गई। इस प्रसंग में यह उल्लेख करना समीचीन रहेगा कि सार्वजनिक क्षेत्रों में काम करने वाले महापुरुषों का सोच अपने परिवार तक सीमित न रहने का खामियाजा उनके परिजनों को भोगना पड़ता है। स्वतंत्रता सेनानियों के अनेक परिवार इसके उदाहरण हैं। पर श्री आर्य ने अपने गृहस्थ जीवन के दायित्व को भी पूरी निष्ठा और कर्तव्यपरायणता से निभाया। सर्वप्रथम 1946 ई. में परिवार प्रमुख अग्रज श्री मालाराम के सामन्तशाही शासन के विरोध में सत्याग्रह करने व जेल जाने पर उनकी अनुपस्थिति में आपने घर का दायित्व निभाने के साथ-साथ उनके राष्ट्रीय जागरण के कार्य को भी निरन्तर चालू रखा। गृहस्थ-जीवन के दायित्व-निर्वाह एवं संघर्ष को उन्हीं के शब्दों में लिखना उचित होगा :

'इसके बाद वि. सं. 2010 में जीतसिंह का जन्म हुआ। उसके बाद वि.सं. 2014 में मनोहर बाई का जन्म हुआ। इसके बाद चारों भाई-बहिनों की पढ़ाई शुरू हुई। साथ में तारानगर में आटा-चक्की, कुत्तर की मशीन, रूई पींजने का काम शुरू किया।

'गांव गोडास में खेती का काम हनुमानसिंह की दोनों माताजी संभालती थी। साथ में भंवरलाल पुत्र सुगनाराम सुनार ग्राम बुचावास को हाळी राख्यो। 2016 वि. में हनुमान ने तारानगर में कक्षा छठी में भरती करायो। उस वक्त तारानगर में बिजली नहीं थी। लैम्प के च्यानणै में पढ़ाई करता था। वि.सं. 2018 तक आठवीं कक्षा तक तारानगर में पढाई करी। उसके बाद बागला स्कूल चूरू में साइन्स दिलाई और अमरावती बाई ने मलसीसर जिला झुंझुनू में भरती कराई। जीतसिंह तारानगर

में पढ़ता था। और मनोहर बाई ने बगड़ में भरती कराई। इसलिए आर्थिक हालत कमजोर हो गई। मैंने खुद ने व्रत ले लिया कि मैं अपना काम खुद करूंगा। आटे की चक्की चलाना, कुत्तर काटना, रजाई भरनी तीनों काम साथ में कर-कर चारों घरों को बचा लिया। जो खर्चा पहले मुश्किल से चलता था, इससे राहत मिली और हिम्मत बढ़ी। उधर खेती और पशुपालन का काम धर्मपत्नी जैसा देवी व गोरा देवी खुद संभालती। चून भी पीसा करती। आपस में बहुत प्यार से रहा करती थीं। इसी से मैं संकट में संघर्ष करता रहा और घर-गृहस्थी को निभाया। चारों भाइयों व बहिनों की शादी आदर्श वैदिक सिद्धान्त से कराई। कोई भी कार्य वैदिक सिद्धान्त के विरुद्ध नहीं किया। दहेज लेना व देना, बरात चढानी, दिखावा करना यह सब नहीं किया। शादियों में वेद प्रचार करना, परदा रिवाज को बन्द करना, मृत्युभोज छुड़ाना जैसे काम किये। 'ढाणी आसा' के स्कूल को प्राइमरी से मिडिल बनवाया। उसके लिए 1963 ई. में डेलिगेशन लेकर जयपुर गया। धरना देकर मिडिल स्कूल कराई। ग्राम ढाणी आसा में पोस्ट-आफिस खुलवाया। अपनी माता लिछमा देवी के नाम से ग्राम गोडास में स्कूल खुलवाया व शाला का निर्माण कराया।'

यह है एक सद्गृहस्थ की संघर्ष यात्रा, जिसने अपने आदर्शों की पालना, उद्देश्य की पूर्ति व लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सामाजिक, नैतिक व राष्ट्रीय दायित्वों के साथ-साथ अपनी गृहस्थी के दायित्व का निर्वाह भी किया। यह लगन, ऐसा समर्पण स्वतः संस्कारित होकर ही फलता फूलता है।

आदर्श शिक्षकों के परिवार के जनक

आदर्शों की बातें मंचों पर बड़े जोरों से कही जाती हैं किन्तु उनका पालन वक्ता स्वयं ही नहीं करता, ऐसा प्रायः देखने में आता है। जो कहे वही करे। जैसा है वैसा ही स्वीकारे तथा वहीं से आगे बढ़े यही विकास का सरलतम, सीधा एवं सच्चा मार्ग है। श्री भैरारामजी ने जो सोचा, उसे पहले समझा, पहले तोला, तब फिर उसका प्रत्यक्ष उदाहरण समाज के सामने रखा। सुधार की प्रक्रिया प्रथमतः स्वयं से आरंभ होकर परिवार में से होते हुए फिर समाज में संक्रमित होती है। श्री आर्य ने जो भी सुधार चाहे, वे रूढ़िगत अन्धविश्वासों से सम्बन्धित हों चाहे धार्मिक, शैक्षिक और आर्थिक हों सभी का श्रीगणेश अपने घर से किया। यही कारण है कि आज उनकी सन्तति—दोनों पुत्र तथा दोनों पुत्रियां, पुत्र-वधुएँ तथा जामाता आदि सभी का यही एकमात्र आदर्श है—

'पितरि प्रीतिमापन्ने प्रियन्ते सर्व देवता:'

[पिता के प्रसन्न होने पर सभी देवतागण प्रसन्न होते हैं]

इन पंक्तियों के लेखक को इस आर्य-परिवार के प्रायः सभी सदस्यों से अनेक बार मिलने व वार्तालाप के अनेक अवसर मिले हैं जिसके अनुभव के रूप में निश्चित ही कहा जा सकता है कि सभी के श्रद्धेय हैं श्री आर्य। सभी को इस परिवार में जन्म

लेने या सम्बन्ध होने पर गर्व है। साथ ही यह भी एक सुखद संयोग है कि इस संस्कृति पुरुष की सभी सन्तानें शिक्षा प्राप्त कर शिक्षक के रूप में ही उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हुई हैं।

श्री आर्य के सबसे बड़े पुत्र डॉ. हनुमानसिंहजी बीकानेर के जाने-माने प्रसिद्ध सर्जन हैं। आप बीकानेर स्थित पटेल मेडिकल कालेज के सर्वश्रेष्ठ छात्र रहे हैं। आपने 1972 ई. में एम. बी. बी. एस. की परीक्षा उत्तीर्ण की। तत्पश्चात् 1976 ई. में एम. एस. सर्जरी की डिग्री प्राप्त की तथा एस. बी. पटेल मेडिकल कालेज में असिस्टेन्ट प्रोफेसर नियुक्त हुए। डॉ. कस्वां द्वारा शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में किये गये अनुसंधानों के कारण ही 1984 में इन्हें एफ. आई. सी. एस. की नेशनल फैलोशिप मिली तथा 1994 में वृद्ध आयु के नागरिकों की शल्य चिकित्सा में दक्षता प्राप्त करने के कारण पुनः एफ. आई. सी. जी. की फैलोशिप से आप सम्मानित हुए। वर्तमान में आप एसोसिएट प्रोफेसर हैं।

पिछड़े वर्ग के प्रति आपका लगाव एवं सेवा भावना अति सराहनीय है। ग्रामीण क्षेत्र की प्रतिभाएं चिकित्सा के क्षेत्र में आवें और यशस्वी बनें इसकी प्रेरणा के लिए आपने ग्रामीण क्षेत्र के सर्वश्रेष्ठ छात्र को प्रतिवर्ष 'कस्वां स्वर्ण पदक' से सम्मानित करने की परम्परा शुरू की है जो अति श्लाघनीय कार्य है। इस स्वर्णपदक के द्वारा अनेक प्रतिभाएं सम्मानित हो चुकी हैं तथा इस क्षेत्र में कार्यरत अनेक चिकित्सकों को भी सेवा कार्य की प्रेरणा मिली है।

डॉ. कस्वां चिकित्सा—सेवा के अतिरिक्त भी बीकानेर नगर की अनेकानेक सामाजिक, सांस्कृतिक तथा शैक्षिक गतिविधियों में पूर्ण सहयोग प्रदान करते हैं। राजकीय अन्धविद्यालय बीकानेर के तो आप अघोषित संरक्षक ही हैं। आपकी सामाजिक सेवा में सहभागिता तथा प्रत्येक रुग्ण व्यक्ति के प्रति आत्मीयतापूर्ण व्यवहार देखकर एक बार एक उच्च आई. ए. एस. अधिकारी ने डॉ. कस्वां से कहा कि लगता है कि सेवा के प्रति यह समर्पण आपको वंश परम्परा से प्राप्त है क्योंकि बिना आनुवंशिकता के इतनी अनथक लगन व तत्परता संभव नहीं। सहयोग व सेवा का स्वरूप तन, मन और वाणी तक ही सीमित नहीं है अपितु यथावसर अपेक्षानुसार आर्थिक अनुदान भी किसी संस्था विशेष को देने में आप मुक्त हस्त हैं। रोगियों के प्रति उनकी उम्र के अनुसार दादा, काकाजी, बेटा, बेटी और माताजी जैसे आत्मीय मधुर सम्बोधनों से रोगियों को बतलाते हैं इससे कितनी राहत मिलती है यह रोगी ही जानते हैं। प्रातः से सायं-काल तक पूर्ण व्यस्त रहने पर भी मधुर मुस्कान सदैव आपके चेहरे पर देखने को मिलेगी। यहाँ यह लिखना भी अप्रासंगिक नहीं होगा कि मित्रों, कॉलेज तथा अस्पताल की अनेक समस्याओं को निपटाने में भी आप निष्ठावान है। रोगियों की पंक्ति में अनेक बार ऐसे व्यक्ति भी देखने को मिले हैं जो अपनी स्वास्थ्येतर समस्याओं के समाधान भी डॉक्टर सा. से पूछते हैं।

अपने गुरुजनों एवं श्रद्धेय व्यक्तियों के प्रति आदरभाव भी आप में कूट-कूट कर भरा है। अपने प्राथमिक शाला, मिडिल और बागला हायर सैकण्डरी स्कूल के

अनेक गुरुजनों को बड़ी श्रद्धा के साथ स्मरण किया करते हैं और मिलने पर चरणस्पर्श किये बिना नहीं रहते। आप अच्छे वक्ता एवं सफल संयोजक हैं। इस गुण के बारे में मैंने जब आपसे पूछा तो आपने बड़े श्रद्धा और गर्व के साथ चूरू की बागला स्कूल के हिन्दी अध्यापक श्री कुंजबिहारीलालजी का नाम लिया कि यह सब उन्हीं के व्यक्तित्व की कृपा है। श्री बिहारीजी चूरू नगर के एक सर्वमान्य आदरणीय शिक्षक और लोकप्रिय मधुरभाषी वक्ता और कवि थे। गुरुजनों के प्रति ऐसी अगाध श्रद्धा के आप धनी हैं।

अपने पूज्य पिताश्री द्वारा स्थापित वैदिक कन्या छात्रावास के निर्माण कार्य में लाखों की सहायता की तथा गत वर्ष 9 अगस्त 1995 को संगरिया विद्यापीठ में श्री आर्य के सम्मानार्थ जो ग्यारह हजार की राशि उन्हें भेंटस्वरूप दी गई उसमें अपनी तरफ से तीस हजार और मिलाकर 41 हजार की धनराशि वैदिक कन्या छात्रावास को पिताश्री की इच्छा अनुसार समर्पित की तथा अक्टूबर 1995 ई. में 'आशा ढाणी' में उच्च प्राथमिक शाला के माध्यमिक स्तर तक प्रोन्नत होने पर इक्कावन हजार रुपयों की सहायता निधि भेंट की। यहाँ यह भी लिखना आवश्यक है कि 'ढाणी आशा' में सैकेण्डरी कक्षा खुलवाने में शिक्षा निदेशालय बीकानेर के मुख्यालय में आपको निदेशकजी से अनेक बार मिलना पड़ा तथा बातचीत के लिए कई बार घंटों तक प्रतीक्षा भी करनी पड़ी। यह सब मैंने स्वयं देखा है। वे अपने पूज्य पिता श्री के प्रति कितने गहन श्रद्धावान एवं समर्पित भाव रखते हैं यह आपके द्वारा लिखित इस ग्रन्थ में मुद्रित आलेख से स्पष्ट है कि डॉ. कस्वां की यह सेवा संकल्पना भविष्य के आपके महान् व्यक्तित्व के उभार की निश्चयात्मकता की सूचक है।

डॉ. कस्वां के दो कन्याएँ तथा एक पुत्र है। बड़ी लड़की कुमारी डॉ. सुमीता भी अपने पिता के समान ही प्रतिभासम्पन्न है। डॉ. सुमीता ने प्रथम वर्ष बी.डी.एस. में गोल्ड मैडल तथा तीन विषयों में विशेष योग्यता 1994 ई. में प्राप्त की तथा रूरल डेण्टल कालेज लोनी, अहमदनगर, पूना विश्वविद्यालय से मेटेरियल साइन्स में 78.6% अंक प्राप्त किये। फिजियोलोजी तथा एनाटोमी डेण्टल मेटेरियल में प्रथम स्थान प्राप्त किया। सत्र 1995 ई. में भी द्वितीय वर्ष बी.डी.एस. में गोल्ड मेडल एवं पैथोलोजी में विशेष योग्यता प्राप्त की। आपकी अन्य दोनों सन्तान सुमेश और सपना भी प्रतिभा सम्पन्न एवं अध्ययनशील प्रवृत्ति के हैं।

डॉ. सा. की पत्नी श्रीमती विमला झुंझुनू जिले के शोभा का बास के सेवानिवृत्त आदर्श प्रधानाध्यापक श्री तनसुखराय मेहला की सुसंस्कारित लड़की है। जिसे इस परिवार की ज्येष्ठ पुत्र वधू होने का सौभाग्य मिला है। श्रीमती विमला शान्त और सरल स्वभाव की कर्त्तव्यपरायण महिला हैं।

श्री भैराराम के द्वितीय पुत्र श्री जीतसिंहजी सरदार शहर में एक प्रतिष्ठित शिक्षा संस्थान में अध्यापक हैं। शिक्षा के प्रति समग्र रूप से समर्पित श्री जीतसिंह की पत्नी श्रीमती सत्यभामा भी इसी कस्बे में उच्च माध्यमिक विद्यालय में विज्ञान विषय

की प्राध्यापिका हैं। श्रीमती सत्यभामा दूधवा-खारा के निवासी श्री भूराराम जी मेड़ा की पुत्री हैं। मेडा परिवार भी दूधवा-खारा में एक समाज सुधारक तथा शिक्षानुरागी परिवार है। यह शिक्षक दम्पती सरदार शहर में अपनी कर्त्तव्यपरायणता के लिए सभी के आदर के पात्र हैं। आपके एक पुत्र राहुल तथा दो कन्या सीमा, प्रियंका है। दोनों ही बालक प्रतिभाशाली हैं।

श्री आर्य की बड़ी लड़की श्रीमती अमरावती का विवाह जैतपुर के निवासी श्री ऊदारामजी ओला के सुपुत्र श्री जसवन्तसिंहजी के साथ हुआ। श्री सिंह इसी गांव में राजकीय विद्यालय में अध्यापक हैं। इनके एक लड़का और तीन लड़कियां हैं। लड़का गुरुकुल झज्झर में पढ़ता है। इनका परिवार आर्य समाजी है।

द्वितीय लड़की श्रीमती मनोरमा हैं जो झुझुनू जिले के ढीलसर गाँव में श्री हुक्मारामजी कपूरिया के सुपुत्र श्री प्यारेलालजी को ब्याही हैं। ये दोनों पति-पत्नी भी श्रीडूंगरगढ़ में राजकीय विद्यालयों में शिक्षणरत है। इनके तीन लड़के हैं। इस प्रकार शिक्षा के लिए समर्पित इस शिक्षक परिवार पर किसे गर्व नहीं होगा किन्तु इन सब के निर्माता और जनक श्री भैरारामजी आर्य ही हैं।

वैदिक सिद्धान्तों के निर्देशानुसार व्यक्ति के जीवन की सार्थकता शास्त्र निर्दिष्ट तीनों ऋणों (पितृ-ऋण, ऋषि-ऋण और देव-ऋण) से मुक्ति ही है। श्री आर्य ने प्रथम ऋण की मुक्ति के लिए जो संघर्ष और प्रयत्न किये उसका सुफल सब के समक्ष है। जिस लगन एवं निष्ठा के साथ इस ऋणमोचन के प्रयत्न किये उससे भी अधिक तीव्रता एवं प्रखरता के साथ शेष दोनों ऋणों से मुक्ति के लिए भी प्रयासरत हैं। इस दिशा में आपकी लम्बी यात्रा अनेक पथ बाधाओं, पड़ावों, संघर्षों एवं सफलता की कहानी है, जिसके मूल में श्री आर्य की लगन, निष्ठा, विश्वास, सेवा-भावना, विवेकपूर्ण निर्णय और उपेक्षित तथा महत्त्वहीन माने गये मूलभूत उपयोगी कार्यों को सम्पन्न करने का उनका निश्चय है। वस्तुतः उनकी जीवनी शिक्षा, समाज सेवा एवं राजनीति के क्षेत्रों में किये गये कार्यों का त्रिमुखी आयाम है।

शिक्षा

पं. दत्तूरामजी श्री भैरारामजी आर्य को आर्य-ग्रन्थों का अध्ययन कराने वाले शिक्षा-दीक्षा गुरु रहे हैं। उनका स्वयं का जीवन भी बड़ा उदात्त और वैदिक विचारों के प्रचार प्रसार में बीता था। आर्य समाजी उपदेशकों में सिद्धान्तों के प्रति उग्र समर्पण तथा विषय वस्तु को समझने की तर्क तथा विवेक दृष्टि होती है, वह श्री दत्तूरामजी में थी। अतः उन्होंने श्री आर्य को विचारों में प्रखरता और स्पष्टता लाने के लिए सत्यार्थप्रकाश के साथ-साथ अन्य वैदिक ग्रन्थों के अध्ययन मनन की भी प्रेरणा दी। इन ग्रन्थों के पठन और चिन्तन के फलस्वरूप श्री आर्य को यह प्रतीति हुई कि सारी बुराइयों की जड़ अशिक्षा है और चूंकि बहुसंख्यक जन-समाज ग्रामवासी हैं तथा वे ही सर्वाधिक उपेक्षित भी हैं अतः उनके लिए शिक्षा की प्रथम आवश्यकता है।

इस विचार से प्रेरित होकर संगरिया के सन्त स्वामी केशवानन्दजी का अनुकरण करते हुए सन् 1945 ई. में अपने गांव से कुछ दूर खालसे के गांव 'ढाणी आशा' में प्राथमिक शाला आरंभ कराई, क्योंकि सामन्तशाही के उस युग में 'गोडास' के जागीरदार ने अपने गांव में विद्यालय खोलने की अनुमति नहीं दी थी। 1965 ई. में सरपंच बनने पर आपने गोडास में भी स्कूल खुलवाया। अपने सरपंच के कार्यकाल में शिक्षा के औपचारिक और अनौपचारिक दोनों ही स्वरूपों के व्यापक प्रसार में बहुत योगदान दिया। स्कूल चलो अभियान के तो आप सर्वेसर्वा ही थे। दिन-रात एक करके ग्रामीण बन्धुओं को अपने बालकों को शालाओं में प्रवेश कराने की प्रेरणा दी। आज उस क्षेत्र के सुशिक्षित, अच्छे-अच्छे पदों पर आसीन अनेक युवकों की शिक्षा की शुरूआत आपकी सत्प्रेरणा से ही हुई थी। शिक्षा के क्षेत्र में कार्य की सक्रिय प्रेरणा आपको स्वामी केशवानन्दजी से मिलती रही। संगरिया विद्यापीठ के प्रत्येक जलसे में आप जाते और सदैव स्वामीजी से मार्गदर्शन प्राप्त करते थे।

शिक्षा के इस संस्कार को एक आदत, स्वभाव एवं घुट्टी के रूप में जन-जन में स्थायी रूप से पहुँचाने के कार्य को आपने बहुत महत्त्व दिया। अपनी पूज्य माताजी की पुण्य स्मृति में 1965 ई. में, उनका स्वर्गवास होने पर गोडास में कन्या विद्यालय का भवन भी स्वयं बनाकर दिया। इस प्रकार नारी शिक्षा के प्रचार का श्रीगणेश अपने घर व गांव से ही किया। यह कार्य का पहला चरण था तो तारानगर का वैदिक कन्या छात्रावास स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में आपके चिन्तन की क्रियान्विति का पहला पड़ाव माना जा सकता है।

केवल मात्र 8 ग्रामीण बालिकाओं को लेकर 1989 ई. में आरंभ किया गया यह वैदिक कन्या छात्रावास अनेकानेक विघ्न बाधाओं का सामना करते हुए संघर्ष व सत् संकल्प का सहारा लेकर आज पन्द्रह लाख से भी अधिक की धनराशि से बना 22 विशाल कक्षों वाला यह कन्या आवास है जिसमें 125 ग्रामीण अन्तेवासी छात्राओं के लिए शिक्षण, पोषण व चरित्र निर्माण की व्यवस्था है। अब 'स्वामी अभयानन्द सरस्वती चैरिटेबल ट्रस्ट वैदिक कन्या छात्रावास तारानगर' के नये नाम से ट्रस्ट पंजीकृत कराकर उसे इस छात्रावास के विकास का दायित्व सौंपा गया है।

श्री भैरारामजी का यह साकार स्वप्न राजस्थान में अपने प्रकार का एक अनुपम संस्कार केन्द्र है, जहाँ आधुनिक शिक्षा से सम्पन्न होती हुई बालिकाएं भारतीय संस्कृति और सभ्यता के प्रति भी आस्थावान बन रही हैं। स्त्री शिक्षा को मानव कल्याण तथा समाजोत्थान का सर्वोत्तम आदर्श मानकर श्री आर्य ने इसी पुनीत कार्य में अपने आपको पूर्ण निष्ठा के साथ समर्पित कर दिया है। छात्रावास की दैनिकचर्या गुरुकुल पद्धति पर है। यथा—

* प्रातः सायं सामूहिक संन्ध्या एवं वैदिक मंत्रों का उच्चारण।
* साप्ताहिक हवन।
* सात्विक भोजन की कम लागत में व्यवस्था।
* जातिगत भेदभाव से मुक्त होकर सभी के प्रवेश की सुविधा

* आत्मरक्षा की पूर्ण शिक्षा।
* शिक्षाशास्त्रियों एवं सन्तों के प्रवचनों का समय समय पर आयोजन।
* वैदिक पर्वों एवं उत्सवों को सोल्लास मनाने की प्रेरणा।
* प्रारंभिक गृहोपयोगी चिकित्सा, पशु चिकित्सा एवं कृषि की जानकारी।

यह संस्कार केन्द्र निश्चय ही भारतीय नारी के वास्तविक गौरव-वर्द्धन में सहायक है।

सामाजिक क्रान्ति में सहभागिता :

मझला कद, छरहरा वदन, सौम्य; पर ओजस्वी मुख-मुद्रा, हलके-हलके खिचड़ी केश, घुटनों तक धोती, हाथ से बुना और सिला खादी का कुरता और देसी पगरखी, इस बाहरी डीलडोल व पहनावे से श्री आर्य चाहे प्रभावी नहीं दिखते हों पर इस सरल सामान्य परिवेश में कितना उद्‌बुद्ध, कर्मशील, सेवाभावी तथा उद्यमी व्यक्तित्व छिपा है, इसकी यथार्थता उनके कृतित्व को देखने पर सामने आती है। उन्हें 'तारानगर का गांधी' कहा जाता है। यह सम्बोधन उनके प्रति संभाग के जन-जन की सम्मानमयी भावना का सूचक है।

आर्य-समाज की परम्परा के अनुरूप आपने जन-जन से सम्पर्क करने और उन पर अपना वैचारिक प्रभाव डालने के लिए जहाँ आर्य ग्रन्थों वेद, रामायण तथा महाभारत आदि तथा अन्य आर्य समाजी साहित्य का अध्ययन किया, वहीं ग्रामीण जनों में आर्यसमाजी विचारों के प्रचार के लिए उनमें सामाजिक चेतना को जगाने के लिए संगीतमय भजनों को माध्यम बनाना भी उचित समझा और इसी कार्य को समग्रता से निष्पन्न करने के लिए आपने संगीत की शिक्षा भी प्राप्त की। संगीत की मधुरतान व स्वर लहरी के साथ ओजस्वी वक्ता के रूप में अपनी पहचान बनाते हुए वैदिक परम्परा के अनुरूप आप सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन में लग गये।

धार्मिक संस्कारों की अलख जगाने के साथ-साथ सामाजिक बुराइयों को दूर करने, कुरीतियों को मिटाने, नारी जाति के गौरव को बढ़ाने, छुआछूत मिटाने व हिन्दी भाषा का प्रचार करने में भी श्री आर्य कभी पीछे नहीं रहे। आज भी श्री आर्य द्वारा 15-20 वर्षों पूर्व अपने क्षेत्र में वैदिक विधि से हरिजन समाज में विवाह तथा अन्य नामकरण संस्कार आदि जिन सैकड़ों परिवारों में कराये गये थे, वे सभी परिवार आपके प्रति कृतज्ञता का भाव रखते हैं। जहाँ तथाकथित उच्च कुलीन ब्राह्मण जाने में संकोच व घृणा करता था वहाँ सभी कार्य श्री आर्य ने सम्पादित करा हरिजन बन्धुओं के दिलों को जीता। 'मृत्यु-भोज' जैसी बुरी प्रथा को मिटाने के लिए इन्हें रूढ़िवादियों से कड़ा मुकाबला करना पड़ा। किन्तु साम, दाम, दण्ड, भेद आदि नीतियों का अवसरानुकूल सहारा लेकर श्री आर्य ने सदा विजय प्राप्त की।

वैदिक धर्म शास्त्रानुसार जहाँ मृतक का अन्तिम संस्कार होता है, वहाँ चिता के पास ही चार घंटों तक घृत तथा हवन सामग्रियों से मंत्रोच्चारण सहित आहूतियां

देकर पर्यावरण शुद्धि की जाती है। श्री आर्य ने इसका आरंभ अपने गांव गोडास से करके आसपास के अनेक गाँवों में इसका प्रसार किया, जो अपने आप में श्रेष्ठ कार्य है। ऐसी शास्त्रीय विधि व्यवस्था गाँवों में तो दूर शहरों में भी जहाँ कर्मकाण्डी विद्वान दाह संस्कार कराते हैं, देखने को कम ही मिलती है।

राजस्थान में सुखाड़ियाजी के मुख्यमंत्रित्व काल में चूरू नगर में आर्यविधि से एक पंचकुण्डी महायज्ञ सम्पन्न हुआ था। उसमें श्री मोहनलाल सुखाड़िया स्वयं आये थे। यज्ञ कार्य में श्री आर्यजी की विशेष सक्रिय सहभागिता देखकर मुख्यमंत्री बड़े प्रभावित हुए और इन्हें किसी भी प्रकार के विकास कार्य में सहायता प्राप्ति हेतु सीधे सम्पर्क की छूट दी तथा इनकी कार्यशैली की बड़ी सराहना की।

आप छुआछूत मिटाने के लिए बड़े से बड़ा संघर्ष करने को सदैव तत्पर रहे हैं व उसमें सफल भी रहे हैं। इस प्रसंग की एक घटना को अब भी तारानगर तहसील के लोग नहीं भूले हैं। धीरवास, तारानगर तहसील का एक बड़ा गांव है। वहाँ के सवर्ण जाति के लोगों ने हरिजनों पर गांव के जोहड़ से पानी लाने पर रोक लगा दी। सवर्णों और असवर्णों के इस विवाद को सदा-सदा के लिए समाप्त करने के लिए श्री आर्य ने हरिजन बन्धुओं का एक विशाल हरिजन सम्मेलन वहाँ आयोजित किया। तत्कालीन राजस्थान सरकार के मंत्रिमण्डल के एक प्रभावी सदस्य श्री सम्पतराम वहाँ आये और दोनों वर्गों के मुखिया लोगों को एक मंच पर लाकर यह विवाद समाप्त करा दिया। श्री आर्य की दूरदर्शिता एवं समस्या के समाधान की इस शैली की सभी ने सराहना की।

शराबबन्दी के लिए जन चेतना का कार्य तो वर्षों से गांव-गांव में करते ही रहे किन्तु इसे आर्यसमाज की ओर से एक व्यापक आन्दोलन के रूप में भी प्रान्त के अनेक कस्बों और गावों में आर्य विद्वानों तथा संन्यासियों के साथ भ्रमण कर सक्रिय किया तथा जनमानस को जगाया। राज्य सरकार को भी इस सामाजिक और मनुष्य का सर्वनाश करने वाले दुर्व्यसन के खिलाफ कानून बनाने के लिए मार्च 1995 में प्रान्त की राजधानी जयपुर में अपने सैकड़ों साथियों के साथ धरना दिया। इस शराबबन्दी हेतु प्रान्त के मुख्यमंत्री श्री भैरोंसिंह शेखावत को जो ज्ञापन दिया उसमें स्पष्ट मांग व घोषणा की गई है—

'यह शराब राजस्थान की भूमि में नहीं चलेगी। हम ऋषि-मुनियों की सन्तान हैं अतः रामकृष्ण, बुद्ध, महावीर और ऋषि दयानन्द की भूमि पर शराब नहीं चलेगी। इसकी बन्दी के लिए हम मर मिटने को भी तैयार हैं। मीरा, सूरजमल और दादू के इस प्रान्त से ही शराबबन्दी का आप श्रीगणेश करें।'

वैदिक धर्म प्रचार द्वारा सामाजिक जागृति उत्पन्न करने के किसी भी अवसर को आपने हाथ से नहीं जाने दिया। अपनी 15 वर्ष की आयु में जब प्रथम बार गांव 'टमकोर' में आर्य समाज के जलसे में आपने भाग लिया था, तब से जहाँ कहीं भी,

जब भी आर्य समाज के उत्सव होते हैं, चाहे वे हरियाणा प्रान्त में हो या दिल्ली में, उत्तर प्रदेश में हों या राजस्थान में, आप जाते हैं तथा उनमें सामाजिक चेतना हेतु पारित प्रस्तावों की क्रियान्विति अपने क्षेत्र में करने हेतु अवश्य प्रयत्न करते हैं। अपने गांव, तहसील तथा आस-पास के अनेक गांवों में आर्य समाज के जलसे, प्रचारकों के प्रवचन एवं भजनीकों के जोशीले भजन आप सदैव कराते रहे हैं। तारानगर कस्बे में अपने निकटतम मित्र एवं आर्यसमाजी डॉ. ओम प्रकाशजी गुप्ता के सहयोग से आर्य समाज की स्थापना की, जो अब इस क्षेत्र का प्रेरणा केन्द्र है। इस प्रकार स्वामी दयानन्द के विचारों के अनुरूप समाज के नवनिर्माण में श्री आर्य सदैव सतत संलग्न रहे हैं।

राजनीति के क्षेत्र में

शिक्षा, समाज और गृहस्थ धर्म सब के सम्यक् निर्वाह के लिए राजनीति के क्षेत्र में स्वतन्त्र तथा स्वस्थ चेतना के साथ सुव्यवस्था की आवश्यकता रहती है। श्री आर्य ने इस क्षेत्र में शुद्धिकरण की आवश्यकता अनुभव की तथा समय की मांग के अनुसार यथाशक्ति सक्रिय भी हुए। स्वतन्त्रता के पूर्व सामन्तशाही के विरोध में अग्रज के जेल जाने की घटना से इस क्षेत्र में विशेष सक्रियता के साथ इनका योगदान करने का मानस बना। वे भाई की जेल-यात्रा में उनके घर-परिवार व विचार-चेतना की रक्षा में सतत संलग्न रहे।

राज्य में पंचायत राज्य होने पर आप प्रथम बार तो अपनी पंचायत के निर्विरोध सरपंच चुने गये और फिर तीन बार बहुमत से सरपंच निर्वाचित हुए। अपने सरपंच के कार्यकाल में अधीनस्थ गांवों में सहकारी सहायता से प्राथमिक शालाएं, कुए, जोहड़ तथा कच्ची-पक्की सड़कों का निर्माण कराया। इसी क्रम में पशुनश्ल सुधारने के लिए व्यापक कार्यक्रमों में संभागी रहे। गांवों की गोचर, जोहड़ व ताल आदि की भूमियों पर जो अतिक्रमण हो रहे थे उनका सशक्त विरोध कर अतिक्रमण हटाने में सफल रहे। अतिक्रमणों के हटाने के प्रसंग में उनके गांव की एक घटना उल्लेखनीय है। गांव गोडास की जोहड़ की जमीन पर कुछ स्वार्थी तत्वों ने कब्जा कर लिया तथा बीड़ की जमीन को भी सुनियोजित ढंग से दबाने की योजना बनाने लगे। इसे हटाने के लिए श्री आर्य के नेतृत्व में ग्रामीणों ने सरकार से हस्तक्षेप करने की प्रार्थना की। 4 वर्षों तक राज्य सरकार से लिखा-पढ़ी करने पर भी जब तारानगर कस्बे के तत्कालीन तहसीलदार के असहयोग के कारण सफलता नहीं मिली तो 21-10-88 को जिलाधीश कार्यालय चूरू के समक्ष सैकड़ों ग्रामवासियों के साथ धरना दिया और राज्य विधानसभा में भी किसान विधायकों द्वारा प्रश्न उठाया गया और अन्त में उस अतिक्रमण को हटवाने में सफल हुए।

ग्रामीणों को उन्नत बीज उपलब्ध कराकर अन्न के अधिक उत्पादन हेतु प्रेरित किया, एतदर्थ कृषि कार्यों में नवीनतम तकनीकों की जानकारी प्राप्त करने और कराने के लिए स्वयं तथा अन्य किसान भाइयों के साथ राज्य सरकार द्वारा आयोजित कृषि

शिविरों में संभागी बने। तारानगर तहसील का कृषक वर्ग इन कार्यक्रमों की सहभागिता के लिए सदैव आपका आभारी रहेगा। आपके सरपंच के कार्य-काल में ही राजस्थान प्रान्त के चार सौ पंचों-सरपंचों एवं प्रमुख किसानों का एक दल भारत भ्रमण पर भी गया। उसमें आप भी शामिल थे। इस भारत दर्शन यात्रा में देश के विभिन्न प्रान्तों के अनेक विकास कार्यक्रमों के स्वरूपों को देखने का आपको अवसर मिला। यह अनुभव भी आर्यजी के लिए बड़ा उपयोगी रहा क्योंकि एक देशभक्त को अपने देश के विराट रूप को देखने का मौका मिल जाता है तो उसे भगवान के साक्षात्कार के समान आनन्द प्राप्त होता है।

15 वर्षों तक सरपंच का गुरु दायित्व वहन करने के बाद आप पंचायत समिति तारानगर के एक सदस्य और उप प्रधान निर्वाचित हुए। सन् 1967 ई. तक पंचायत समिति के सदस्य के रूप में समिति के क्षेत्र के गांवों में साक्षरता, शिक्षा प्रचार, वृक्षारोपण, नशाबन्दी तथा मृत्युभोज बन्द करने के लिए चेतना जागृत करने के प्रयास के साथ-साथ ग्राम पंचायतों की आर्थिक स्थिति को भी सुधारने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील बने रहे। ग्रामोत्थान की अनेक योजनाओं की क्रियान्विति उसी प्रकार पूरे पंचायत समिति क्षेत्र में की, जैसे अपने सरपंच के कार्यकाल में अपने पंचायत क्षेत्र में की थी। किन्तु विकास-गंगा के भगीरथ ने जब देखा कि पंचायत समिति में दूषित राजनीति तथा भ्रष्ट तत्त्वों का समावेश हो गया तो आपने सदस्यता से त्याग पत्र दे दिया।

पंचायत समिति के सदस्य के रूप में आपका कार्य अन्य सदस्यों से श्रेष्ठ तथा अधिक प्रभावी रहा। तत्कालीन विकास अधिकारी आपके कार्य करने की शैली व प्रभाव एवं कार्य-क्षमता से प्रभावित रहते थे। भेदभाव रहित व्यवहार, सच्चाई के प्रति प्रबल आग्रह तथा सिद्धान्तों के प्रति निष्ठा में आप सदैव अडिग रहे। सरपंच और पंचायत समिति के सदस्य के रूप में आप द्वारा किये गये ग्रामीण विकास के कार्यों को आज भी लोग बड़े सम्मान के साथ याद करते हैं और वे सदस्यों को प्रेरणा देने के लिए उदाहरण स्वरूप माने जाते हैं। राजनीति की उठा-पटक में आप कभी भी सम्मिलित नहीं हुए। यही कारण है कि उस समय से लेकर आज तक जिला स्तर के सामान्य कार्यकर्ता से लेकर बड़े नेताओं तथा मुख्यमंत्रियों तक ने आपको सम्मान दिया है। सब से महत्त्वपूर्ण बात तो यह है कि इन राजनैतिक दायित्वों का वहन करते हुए भी आपने अपने वैदिक मिशन को विस्मृत नहीं किया। जहाँ भी गये, जब भी बोले संस्कारों की ही चर्चा की। उन्नत चिन्तन ही किया।

भूदान यज्ञ में गोकुल भाई भट्ट के साथ गाँव-गाँव में घूमकर उस पुनीत कार्य में सहयोग किया। भट्ट जी श्री आर्य की कार्यकुशलता, कर्मनिष्ठा तथा सतत कार्य परायणता से बड़े सन्तुष्ट हुए तथा अनेक वार अनेक सभाओं में कहा कि कार्यकर्त्ता हो तो श्री भैराराम आर्य जैसा हो। यदि प्रत्येक ग्राम में एक-एक भैराराम मिल सके तो गांव में कोई समस्या ही नहीं रहेगी। तारानगर कांग्रेस कमेटी द्वारा कस्बे में चलाये गये स्वच्छता अभियान में आपकी भागीदारी सराहनीय रही।

कांग्रेस द्वारा आयोजित राष्ट्रीय जागरण के कार्य में आप श्री कुंभारामजी, श्री दौलतरामजी सहारण, श्री शीशरामजी पूनिया, श्री मनीरामजी आर्य, श्री चन्दनमल जी वैद, मास्टर दीपचन्दजी कस्वां आदि के निकटतम साथियों में रहे हैं तथा अन्य स्वतन्त्रता सेनानियों में आपके सहयोगी साथी अग्रज श्री मालारामजी के साथ, दूधवाखारा के श्री गणपतजी श्री हनुमानसिंहजी बुडानिया, श्री सांवतराम, श्री मानाराम पचार, श्री चोलाराम कस्वां, श्री सहीराम सुथार आदि प्रमुख हैं।

श्री मनीरामजी आर्य पूर्व विधायक, जिनका जीवन भी एक संघर्षशील कृषक पुत्र की जीवट गाथा है, आप से 10 वर्ष बड़े होने पर भी स्वयं आर्य समाजी भजनीक होने के कारण आपके वैदिक प्रचार के कार्यों में प्रेरक भी रहे तथा साथी भी रहे। श्री मनीरामजी आर्य की जीवन-यात्रा की कथा भी बड़ी रोचक तथा संघर्षों से भरी क्रान्ति-गाथा है। यदि उनके जीवन वृत्तान्त को प्रकाश में लाया जावे तो आज की युवा पीढ़ी को बड़ी प्रेरणा मिल सकती है। ऐसे महान् व्यक्तित्त्व के धनी भी श्री आर्य के प्रति अत्यन्त स्नेहभाव रखते हैं। ऐसे व्यक्तित्वों की निकटता के कारण ही राजनीति की उबड़-खाबड़ पथरीली राह श्री भैराराम आर्य की गति को न रोक सकी और न उनके उज्ज्वल चरित्र को किंचित् मात्र भी कलुषित कर सकी। अपनी इस आदर्श स्वच्छ छवि के कारण इस क्षेत्र के कार्यकर्ताओं के लिए आप प्रेरक पुरुष हैं।

ऋषि परम्परा के पथ पर

श्री भैराराम आर्य एक कर्मयोगी के रूप में अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को सार्थक बनाने में लगे रहे। बचपन में पशु चराना हो या अक्षर ज्ञान प्राप्त करना हो, खेती करना हो या कुआ खोदना हो, ईंटे बनाना हो या घर बनाना, चक्की चलाना हो या रूई पींजना, सरपंच का कार्य करना हो या पंचायत समिति सदस्य का काम हो तथा गृहस्थ धर्म निभाना हो या समर्पित कार्यकर्ता बनना हो, इन सभी दायित्वों को समभाव से निभाया। एक अनुज के रूप में अग्रज के प्रति श्रद्धामिश्रित भय और परिवार के मुखिया के रूप में सब के प्रति कर्त्तव्य, दायित्व बोध उनमें सच्चे सन्त के दर्शन कराता है, जो अपने कर्त्तव्य पालन को ही धर्म, पूजा व सेवा मानकर चलता है। यह सब चिन्तन तो अनेक विशिष्ट जनों में भी पाया जाता है। किन्तु श्री आर्य के संस्कारों में वैदिक परम्पराओं का प्रभाव बहुत गहरा है, जिसमें मानव जीवन के लिए आश्रम व्यवस्था प्रमुख है। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ और वानप्रस्थ आश्रमों को तो इन्होंने निर्धारित व्रत-नियमों की पालना के साथ जी लिया। आयु के चौथे आश्रम के लिए निश्चित व्यवस्था के क्रम में उनका चिन्तन उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार है :—

'मन बार-बार यह कह रहा है कि आर्यव्रत का पूर्ण पालन करते हुए अपना जीवन सफल करो। अब वानप्रस्थ की अवस्था पूर्ण हो चुकी है अतः ऋषि परम्परानुसार संन्यास व्रत धारण की प्रबल इच्छा हो रही है। किन्तु जब भी इस विषय में परिवार के सदस्यों, बन्धुओं, मित्रों व सहयोगियों से अनुमति हेतु चर्चा

करता हूँ तो सभी विरोध करते हैं। अतः ऐसी स्थिति में स्वयं को ही इस शिव संकल्प की पूर्ति हेतु अग्रसर होना पड़ेगा।'

इस सम्बन्ध में इन पंक्तियों के लेखक का भी यही अनुभव है कि जब मैं स्वामीजी (श्री आर्य) के व्यक्तित्व के विषय में पूर्ण जानकारी प्राप्त करने तथा छात्रावास की प्रत्येक गतिविधियों को निकट से देखने तारानगर गया तब तीन दिनों तक स्वामीजी के सान्निध्य का लाभ मिला। उस समय अनेक प्रसंगों में अपने इसी संकल्प की पूर्ति हेतु उन्होंने संकेत दिया था। तत्पश्चात् गत वर्ष 9 अगस्त 1995 ई. को ग्रामोत्थान विद्यापीठ संगरिया में आपका अभिनन्दन होने जा रहा था। उस समय अभिनन्दन से पूर्व किसी कार्यवश वे बीकानेर आये। मैं दर्शनार्थ उनके पुत्र डॉ. हनुमानसिंह कस्वां सा के आवास पर पहुँचा। उस समय वार्तालाप में बड़े आग्रह के साथ उन्होंने मुझ से कहा कि सारस्वतजी मेरी दो इच्छाएं हैं उनकी घोषणा 9 अगस्त को आयोज्य समारोह पर मैं करना चाहता हूँ। प्रथम संन्यास की तथा द्वितीय जो भी सम्मान-स्वरूप धन-राशि मुझे मिले उसे दुगुनी कर वैदिक कन्या छात्रावास को देना। इन दोनों कार्यों के लिए आप डॉ. हनुमान को सहमत करावें। मैं स्वयं डॉक्टर से इस विषय में कुछ भी नहीं कहना चाहता तथा यह भी आदेश दिया कि यह सब मेरे यहाँ से जाने पर ही कहें। डॉ. कस्वां ने धन-राशि तो तिगुनी कर दी किन्तु प्रथम इच्छा के लिए सारे परिवार की अनिच्छा बताते हुए मुझ से ही इस विषय में उन्हें पुनर्विचार हेतु पत्र लिखाया। मैंने श्री आर्यजी से अपने पत्र में यही आग्रह किया कि आप मानसिक रूप से तो संन्यासी ही हैं किन्तु अभी श्वेतवेष के स्थान पर भगवा वस्त्र धारण नहीं करें तो उत्तम है क्योंकि कन्या छात्रालय के रुके हुए कुछ कार्य आने वाले तीन चार वर्षों में आप ही के द्वारा सम्पन्न हो सकते हैं अतः तीन चार वर्षों तक हमारी प्रार्थना स्वीकारें। श्री आर्यजी ने मेरे पत्र को पढ़ा तथा कुछ मुस्कराकर पत्र रख लिया। उत्सव पर जब संन्यास की घोषणा नहीं की तो हम सब आश्वस्त हो गये। किन्तु एक माह पश्चात् ही डॉ. कस्वांजी का फोन आया कि गुरुजी, आप घर पधारें एक नई सूचना है। मैं उनके आवास पर पहुँचा। डॉ. साहब ने एक पत्र मेरे हाथ में दिया। पत्र पढ़ा। पत्र श्री यशवन्तसिंहजी एडवोकेट का था। उन्होंने भादरा से पत्र लिखा था। यह पत्र क्या है एक परिवार की गरिमा का दस्तावेज है अतः उसे यों का यों ही प्रस्तुत कर रहा हूँ—

भाई डॉ. हनुमानसिंहजी !

सस्नेह नमस्कार।

आपका परिवार हमारे क्षेत्र में वैदिक परम्परा और मर्यादा का अनुपम आदर्श है। आपके प्रातः स्मरणीय पूज्य पिता श्रद्धेय चौधरी श्री भैरारामजी आर्य के दर्शन सौभाग्य से महर्षि दयानन्द सरस्वती की जागृत चेतना के साक्षात्कार की अनुभूति होती है। उन्होंने 12 सितम्बर की सायं अपने अनुयायियों सहित स्वामी केशवानन्दजी की तपोभूमि में पधारकर स्वामीजी के आश्रम में रात्रि सान्निध्य प्रदान कर कृतार्थ किया।

वेदों में निर्दिष्ट मानव जीवन की चार व्यवस्थाओं के अनुसार अन्तिम संन्यास आश्रम में पदार्पण का दृढ़ संकल्प लेकर वे स्वामी केशवानन्दजी महाराज के पुण्य निर्वाण दिवस पर संन्यास लेने की घोषणा करने के उद्देश्य से पधारे थे। उन्होंने मुझे एकान्त में बुलाकर इस संकल्प की सर्वप्रथम सूचना प्रदान की। और अपने शब्दों में कहा, 'थे हड़मान नै पत्तर लिख बीकानेर ई बात की जाणकारी काल करादेइज्यो। वीं नै ई बात स्यूं चिन्ता नहीं होणी चाइज्ये। ओ तो कर्म सिद्धि को भलो, पवित्र, समाज सेवको रास्तो है।'

इस प्रकार उन्होंने अपने मन के उच्च आदर्श का मन्तव्य प्रकट कर डाला। उनके साथ आने वालों को इसकी भनक तक नहीं थी। तारानगर में लगातार स्वामी सुमेधानन्दजी के निर्देशन में चले यज्ञ में सम्मिलित होकर वे संगरिया पधारे थे। संन्यास धर्म धारण करने से पहले वैदिक विधि के अनुसार संन्यास लेने वाले को 24 घंटों का उपवास रखने का विधान है, इसके अनुसार 13 सितम्बर को प्रातः से वे निराहार हो गये और तन पर एक मात्र धोती ही धारण की। संन्यासी के रूप में धारण किये जाने वाले वस्त्र वे तारानगर से ही गेरूआ करके थैले में बन्द कर अपने साथ लाये थे। श्रद्धापर्व उत्सव की पावन वेला पर संस्था स्थापना दिवस गत 9 अगस्त पर अभिनन्दित होने वाले कर्मयोगी समाज सेवा में समर्पित श्रद्धेय भैरारामजी द्वारा वैदिक धर्म के अनुसार स्वामी केशवानन्दजी के शिक्षा प्रसार और समाज सुधार के कार्य को अपने क्षेत्र में अनवरत चलाने के लिए 14 सितम्बर 1995 को तारानगर तहसील के एक पवित्र जोहड़ पर संन्यास लेने की घोषणा होने पर उपस्थित जन समुदाय भाव-विभोर हो उठा। मंच पर उनका अभिवादन करके पुष्पांजलि अर्पित की गई।

उन्होंने मुझे बताया कि घर में बेटियों की नजरें गेरुए किये हुए धोती-कुरते पर पड़ने से मुझे झूठ बोलना पड़ा कि ये संगरिया में स्वामीजी की समाधि पर चढ़ाने हैं। अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं, उनके निश्चय और निर्णय सदा अटल रहे हैं। परिवार व स्वजनों का कुछ दिन दुखित व व्यथित रहना स्वाभाविक है। हमें यह मानकर चलना है कि स्वामी केशवानन्दजी की तरह अपनी बिरादरी और अपने परिवार की अमर कीर्ति का यह प्रकाश पुंज प्रज्ज्वलित हुआ है, जो कुछ हो गया वह विगत है वह कभी वर्तमान नहीं बन सकता। अतः आप संभलें व परिवार को संभालें। अब तक पिता के रूप में हम पुत्रवत उनके आज्ञाकारी रहे, अब महर्षि के रूप में उनके आदर्शों को ग्रहण कर सेवा मार्ग पर चलें। इसी से उनका आशीर्वाद मिलता रहेगा।

'कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा भाग्यवती च तेन'

(जिसके जन्म से कुल पवित्र हो व जन्मदात्री माता कृतज्ञ हो उसी से यह पृथ्वी भी भाग्यवती मानी जाती है।)

सधन्यवाद—

सदैव आपका
—यशवन्त सिंह

पत्र पढ़कर मैंने डॉक्टर सा. की ओर देखा। मेरी आंखों में श्रद्धा के अश्रुकण आ गये। मेरी भाव विह्वल मनःस्थिति को देखकर डॉक्टर सा. ने अपने ऊपर नियंत्रण रखकर कहा, बाबूजी ! पिताजी ने अन्ततः अपना शिव संकल्प पूरा कर ही लिया। हम सभी उनके प्रति श्रद्धावत हैं। किन्तु अभी आप इसकी चर्चा घर पर न करें। क्योंकि लगता है तारानगर में भी इसकी अभी कोई सूचना नहीं है। यदि होती तो पत्र या फोन द्वारा जानकारी अवश्य मिल जाती।

उसके पश्चात् दिनांक 19-9-95 को तारानगर से श्री रामदत्तजी आर्य का लिखा पत्र दिनांक 21-9-95 को मिला, जिससे यह जानकारी प्राप्त हुई कि श्री आर्य जी ने दिनांक 16-9-95 को संस्कृत विद्यालय, जाखोद जिला झुंझुनू में स्वामी सुमेधानन्द सरस्वती-मंत्री सार्वदेशिक प्रतिनिधि सभा दिल्ली से संन्यास दीक्षा ले ली है। श्री भैराराम आर्य को 'स्वामी अभयानन्द सरस्वती' नाम दिया गया तथा ट्रस्ट का नामकरण भी 'स्वामी अभयानन्द सरस्वती चैरिटेबल ट्रस्ट वैदिक कन्या छात्रावास तारानगर' किया गया है।

यह पुनीत-पावन प्रक्रिया सम्पन्न होने के बाद स्वामी अभयानन्दजी सरस्वती के निम्नलिखित मनोद्‌गार हम सब के लिए प्रकाश-स्तंभ हैं।

'मन को सबसे अधिक प्रसन्नता और सन्तोष इसी दिन मिला, सचमुच ऐसा लगा कि आर्यव्रत का पालन अब पूरित हुआ है। ईश्वर इस अध्याय की पूरी जिम्मेदारियों को निभाने के प्रति जगाता रहे और मैं आर्यव्रत निभाता रहूँ। बस यही कामना है।'

'देश को प्रभु इतना तो वर दो कि दूसरों के हित में कुछ करने के लिए कभी सामर्थ्य और साधन में कमी न पा सकूं और अपने लिए मांगने तुम्हारे द्वार पर कभी नहीं आवूं।'

(सीतेश आलोक)

सत्कार सम्मान

लोककृतः पथिकृत्तो देवानाम् यजामहे

[लोकों (समाजों) के रचयिता एवं मार्गदर्शक देवपुरुषों की हम पूजा करें—अथर्ववेद]

समाज के लिए अपने जीवन को अर्पित करने वाले व्यक्ति शान्त, एकाग्र तथा निस्पृह भावना से अपने कार्य को ही देवपूजा का मार्ग समझते हैं। सामाजिक विकास के पावन लक्ष्य की प्राप्ति हेतु वे अर्जुन की लक्ष्यभेदी प्रवृत्ति के समान सदैव तत्पर रहते हैं। उनके कार्य के विषय में लोग क्या सोचते हैं, उनकी प्रशंसा हो रही है अथवा निन्दा, इससे उनको कोई सरोकार नहीं होता। वे मनस्वी होते हैं और 'मनस्वी कार्यार्थी न गणयति दुःखं न च सुखम्' दुःख सुख उनके लिए समान हैं।

यह सदा देखने में आता है कि समाज सुधार के कार्य का पहले सदा विरोध होता है, सुधारक की हँसी उड़ाई जाती है किन्तु अन्ततः समाज को उनके महान् कर्तृत्व के समक्ष झुकना ही पड़ता है। तब उनके विकास कार्यों में सहयोग कर सब

उनकी सराहना करते हैं और अन्त में उनका सत्कार सम्मान कर समाज स्वयं को उपकृत मानता है।

श्री आर्य के लिए 'तारानगर का गांधी' की उपाधि उनकी लगन, उनकी सादगी और समर्पित जीवन की ख्याति की ही सूचक है। श्रेष्ठता की सुगन्ध की गति धीमी हो सकती है किन्तु रुकती कभी नहीं। श्री आर्य के सत्कार्यों की चर्चा और प्रशंसा होने लगी और अब समाज ने अपने हीरे को पहचानना आरम्भ कर दिया है। समाज द्वारा इन सत्कार शृंखलाओं में प्रमुख तीन का विवरण इस प्रकार है :—

स्वामी केशवानन्दजी की संगरिया विद्यापीठ के प्रमुख सहयोगी श्री रामनारायणजी ज्याणी तथा श्री बहादुरसिंहजी भोबिया द्वारा 1977 वि. में संगरिया में जाट एंग्लो संस्कृत मिडिल स्कूल की स्थापना की गई थी। श्री बहादुरसिंहजी की याद में जाट जागृति धर्मार्थ ट्रस्ट संगरिया की ओर से गत दो वर्षों से शिक्षा और सामाजिक क्रान्ति के लिए अर्पित व्यक्तियों को सम्मानित करने का शुभारम्भ किया गया है। श्री आर्य के बालिका शिक्षा के प्रचार प्रसार की जानकारी मिलने पर संगरिया के प्रमुख कार्यकर्त्ताओं का एक दल तारानगर आया और छात्रावास की प्रत्येक गतिविधि का गंभीरता से अवलोकन कर बड़ा प्रसन्न हुआ। श्री आर्यजी के व्यक्तित्व से तो वे पहले ही प्रभावित थे। अतः संगरिया विद्यापीठ के वार्षिक समारोह—9 अगस्त 1995—के अवसर पर श्री आर्य को समाज-सेवा तथा नारी-शिक्षा के क्षेत्र में किये कार्यों के उपलक्ष्य में सम्मानित करने का निश्चय किया गया।

इस सम्मान समारोह की अध्यक्षता राजस्थान सरकार के वरिष्ठ मंत्री श्री गंगारामजी चौधरी ने की तथा मुख्य अतिथि भारत सरकार के पूर्व केन्द्रीय मंत्री श्री दौलतराम सहारण थे। सभी वक्ताओं ने श्री आर्य द्वारा किये गये नारी शिक्षा तथा अन्य सामाजिक सुधार तथा वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार हेतु किये गये कार्यों की प्रशंसा की। इस अवसर पर ग्यारह हजार रुपये नगद तथा एक शाल एवं अभिनन्दन पत्र श्री आर्य को समर्पित किये गये। चूंकि श्री आर्य अस्वस्थ थे अतः उनके पुत्र डॉ. हनुमानसिंहजी ने उनके सम्मान के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा कि मेरे पिताजी का जन्म जिस वर्ष हुआ उसी साल विद्यापीठ की भी स्थापना हुई थी। पूज्य स्वामीजी ने जहां विद्यापीठ को पल्लवित और पुष्पित किया वहीं मेरे पूज्य पिताश्री के भी पूज्य स्वामीजी प्रेरणा स्रोत रहे। स्वामीजी के ही कार्यों को आगे बढ़ाने में श्री आर्य आज लगे हुए हैं। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि पूज्य पिताजी ने जिस पवित्र कार्य को आरम्भ किया है उसे हम सदा बनाये रखेंगे।

इसी अवसर पर डॉ. कस्वां ने ग्यारह हजार की धन राशि में तीस हजार मिला कर 41 हजार की सहायता श्री आर्यजी के आदेशानुसार अपने परिवार, जिसमें श्री हरफूलसिंहजी भी सम्मिलित हैं, की तरफ से वैदिक कन्या छात्रावास को देने की घोषणा की। तपस्वी पिता के उदार और योग्य पुत्र की घोषणा और भावना से सभी श्रोतृ समुदाय प्रसन्न हुआ और हार्दिक साधुवाद प्रकट किया।

इस सम्मान प्राप्ति के पश्चात् जब श्री आर्य तारानगर आये तो छात्रावास में

भी एक सम्मान समारोह आयोजित किया गया, जिसकी अध्यक्षता श्री नेतमल सामसुखा ने की और श्री आर्य की प्रशंसा करते हुए, श्री सामसुखा ने कहा कि मुझे आज के दिन बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि हमारे तारानगर के इस सपूत की पहचान अब दूर-दूर तक होने लगी है। इस कार्यक्रम का संचालन श्री हरफूलसिंहजी ने किया। इस अवसर पर डॉ. हनुमानसिंहजी ने कहा कि आर्यजी मेरे तो पिताजी हैं किन्तु इसके साथ ही अपने सब के मार्गदर्शक हैं अतः इनके प्रवर्त्तित इस कार्य को हम सदैव ही जीवन्त रखेंगे ऐसा मैं आप सबको विश्वास दिलाता हूँ।

उसके पश्चात् 7 अक्टूबर, 1995 को 'ढाणी आशा' में राजस्थान सरकार के चिकित्सा मंत्री श्री राजेन्द्रसिंह के मुख्य आतिथ्य तथा चूरू के सांसद श्री रामसिंहजी की अध्यक्षता में श्री आर्य का सम्मान किया गया। इस अवसर पर जिस प्राथमिक शाला का शुभारम्भ श्री आर्य ने किया था, वह अब तक उच्च प्राथमिक शाला ही थी, उसे माध्यमिक स्तर पर क्रमोन्नत करने की घोषणा हुई, यह क्रमोन्नति डॉ. कस्वां के प्रयत्नों से हुई।

इस अवसर पर अनेक वक्ताओं ने श्री आर्य के जीवन्त जीवन की अनेक घटनाएं सुनाई। मुख्य अतिथि श्री राजेन्द्र सिंह चिकित्सा मंत्री ने श्री आर्य के जीवन को समस्त युवा वर्ग के लिए अनुसरणीय बताते हुए कहा कि श्री आर्य ने जो सामाजिक चेतना-यज्ञ शुरू किया है उसमें हम सबका सम्मिलित होना और उनके प्रयासों को और सार्थक बनाने का संकल्प लेना ही श्री आर्य का सचमुच का सम्मान होगा।

डॉ. हनुमानसिंहजी ने इस अवसर पर अपने पिताश्री—जो अब स्वामी अभयानन्दजी हो गये हैं की सद्इच्छा की पूर्ति हेतु कस्वां परिवार की तरफ से 51 हजार रुपये शाला को समर्पित किए।

उसके पश्चात् 11 फरवरी, 1996 को चूरू में प्रान्तीय जाट समाज का सम्मेलन हुआ जिसमें श्री बलराम जाखड़ मुख्य अतिथि थे तथा डॉ. ज्ञान प्रकाश पिलानिया अध्यक्ष थे। इस अवसर पर समाज की एक महान् निधि के रूप में उन्हें सम्मानित किया गया।

डॉ. बलराम जाखड़ ने अपने सम्बोधन में श्री आर्य के प्रति अपनी श्रद्धा, आदर और सम्मान भाव प्रकट करते हुए कहा कि श्री आर्य द्वारा निस्पृह भाव से किये गये नारी शिक्षा और सामाजिक जागरण का सच्चा सम्मान यही है कि हम इस दिव्य मशाल को सदैव प्रज्वलित रखने हेतु संकल्पबद्ध रहें।

डॉ. पिलानिया ने अपने श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए श्री आर्य को राष्ट्र का, समाज का गौरवशाली कीर्ति स्तंभ बताया। उन्होंने कहा कि हम अत्यन्त भाग्यशाली हैं कि हमारे समाज में हमारी चेतना जागृत करने, मार्गदर्शन हेतु ऐसे सच्चे संतपुरुष मौजूद हैं। इनका अनुसरण मात्र ही हमारे जीवन को धन्य करने के लिए पर्याप्त है।

निश्चित ही, इस समाजसेवी सन्त के सम्मान से वस्तुतः समाज उपकृत हो रहा है।
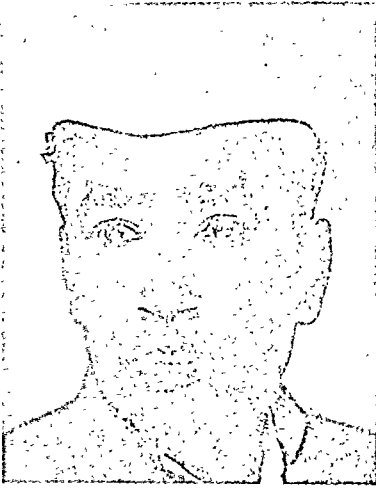
एक तपःपूत व्यक्तित्व : भैरारामजी आर्य

श्री सोहनलाल डागा

'भारतवर्ष में राजस्थान की अनेक दृष्टियों से असाधारण गरिमा और महिमा है। इसने राष्ट्र के लिए हंसते-हंसते प्राणोत्सर्ग करने वाले जुझारू योद्धा पैदा किये हैं तो साथ ही साथ अनेक दानवीर, कर्मवीर और लोकसेवी सत्पुरुषों को भी जन्म दिया है। राजस्थान की भू-धरा के मरुस्थलीय क्षेत्र का अपना एक विशेष इतिहास है। यद्यपि वन सम्पदा और हरीतिमा जैसी प्रकृति प्रदत्त भव्य वरदानों से यह भू-भाग वंचित रहा किन्तु इसने उत्कृष्ट मानवों की बहुमूल्य फसल प्रदान की, वह इसके गौरव को अत्यन्त उत्कृष्टता प्रदान कर देती है। मरुधरीय अंचल में भी चूरू जनपद वह अंश है जो प्रागैतिहासिक कालीन मोहनजोदड़ो और हड़प्पा की समसामयिक अथवा किंचित और अधिक पुरातन सभ्यता से जुड़ा हुआ है। यह उस भूखण्ड का भाग रहा है जहाँ कभी सरस्वती और दृषद्वती नामक नदियां आप्लावित थीं जो काल-क्रम से भू-गत हो गई। यह वह भू-भाग है जो कभी वैदिक संगानों से मुखरित रहा है।

समय बड़ा परिवर्तनशील है। क्या से क्या हो जाता है, कुछ कल्पना नहीं की जा सकती है। उत्तरवर्ती काल में वेद-विद्या की सुरभि से यह क्षेत्र शून्य हो गया किन्तु विद्यात्मक, कलात्मक संस्कार उन्मूलित नहीं हुए। औदार्य, शौर्य और कत्थक नृत्य आदि जैसे कलात्मक रंगमंचीय कार्यकलापों से यह विभूषित रहा है। संभवतः बहुत कम लोगों को यह विदित होगा कि कत्थक नृत्य की उत्पत्ति का स्थान मुख्यतः यही जनपद रहा है। बड़ा आश्चर्य होता है निर्जल, शुष्क, बालुकामय प्रदेश में विद्या, कला एवं सेवा आदि की सरसता कैसे निपजी? यहाँ एक मनोवैज्ञानिक तथ्य पर सहसा हमारा ध्यान जाता है, जहाँ बाह्य परिवेश में सौन्दर्य, लालित्य नहीं दिख पड़ता वहाँ मानव का उर्वर मानस एक अन्तर्जागतिक सौन्दर्य, माधुर्य के सृजन हेतु उद्वेलित रहता है। उसी के फल मानवीय व्यक्तित्व के विविध उत्तम, उत्कृष्ट कार्यकलापों और वृत्तियों के रूप में उद्भाषित होते हैं।

चूरू जनपद में विद्यमान तारानगर और उसके समीपवर्ती भू-भाग के साथ कुछ ऐसे विशेष ऐतिहासिक तथ्य जुड़े हैं, जो इसे थळी अंचल में विशिष्ट गौरवास्पद बना देते हैं। तारानगर जिला पूर्व में 'रीणी' कहा जाता था। राव बीकाजी द्वारा

बीकानेर राज्य की स्थापना से पूर्व भी यह एक समृद्ध नगर रहा है। बीकानेर राज्य की स्थापना विक्रम संवत 1545 में हुई, जबकि तारानगर में एक प्राचीन जैन मंदिर विद्यमान है जिसका निर्माण दसवीं शताब्दी में हुआ। इससे यह प्रतीत होता है कि तारानगर थळी अंचल का प्राचीनतम नगर है और वैदिक संस्कृति के साथ जैन संस्कृति का भी केन्द्र रहा है। विभिन्न धर्मों की सुन्दर समन्वयात्मक संगम स्थली के रूप में भी निःसंदेह इस नगर की गरिमा अनुकरणीय है।

बीकानेर राज्य की स्थापना के पश्चात् तारानगर बीकानेर के अन्तर्गत एक प्रतिष्ठित जागीर का मुख्य स्थान रहा है। बीकानेर राज्य के काल में यहां एक ऐसी घटना घटित हुई जो चिरस्मरणीय बन गई। बीकानेर के छठे शासक राजा रायसिंह बड़े प्रतापी, उदार और शक्तिशाली राजा थे। वे मुगल सम्राट अकबर के समकालीन थे तथा बादशाह के प्रमुख सिपहसालारों में एक थे। उन दिनों राजाओं में लाख पसाव और करोड़ पसाव देने की विशेष परम्परा थी। लाख पसाव में एक लाख व करोड़ पसाव में एक करोड़ की राशि या सामग्री प्रदान की जाती थी। राजा रायसिंह ने एक बारहठ कवि को करोड़ पसाव दान दिया। उस समय तारानगर के जागीरदार ठाकुर करमसिंह थे। वे बड़े उदार और दानशील थे। विद्वानों और कवियों का वे बड़ा आदर करते थे। एक बारहठ कवि उनके यहाँ आये और उनकी स्तुति में निम्नांकित पद पढ़ा—

ओ आखो संसार माटी स्यूं घड़ियो अमल
तूं एकै करतार काया हुंता करमसी

अर्थात्—'विधाता ने सारे संसार के मानवों व सारे संसार की रचना मिट्टी के सामान्य पंचभूतों से की, आपके व्यक्तित्व में ईश्वरीय गुण हैं।' इस सोरठे पर करमसिंह इतने विमुग्ध हुए कि उन्होंने कवि को करोड़ पसाव दान देने की घोषणा कर दी। तारानगर बहुत बड़ा जागीरी ठिकाना तो था नहीं—इसलिए अपने पास का सब कुछ देने पर भी जब करोड़ की राशि पूरी नहीं हो सकी तो करमसिंह ने कुमार कीरतसिंह को तब तक के लिए कवि के पास गिरवी छोड़ दिया जब तक पूरी राशि का भुगतान नहीं हो गया। कहां बीकानेर का विशाल राज्य और कहां तारानगर का छोटा सा ठिकाना, किन्तु करमसिंह के औदार्य ने बीकानेर के समकक्ष अपने ठिकाने को स्थापित कर दिया।

उपर्युक्त गौरवशील परम्परा आगे भी अवरुद्ध नहीं हुई। शताब्दियों बाद जब स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य संस्कृति और वेद विद्या का पुनरुद्धार करने हेतु जो महान अभियान चलाया, उसमें भी इस भूखण्ड के तत्त्वनिष्ठ, धर्मनिष्ठ जनों ने सम्पूर्ण उत्साह के साथ सक्रिय भाग लिया। स्वतंत्रता के पश्चात् राजनीति में भी इस जनपद का ऐसा योगदान रहा जिससे राजस्थान में इसकी अक्षुण्ण गरिमा स्थापित हुई। राजस्थान के पूर्व वित्त एवं शिक्षा मंत्री, प्रबुद्ध राजनेता, विश्रुत अर्थशास्त्री एवं चिन्तक श्री चन्दनमल वैद जैसे व्यक्तित्व को उजागर कर इस जनपद ने अपनी बुद्धिमत्ता व गुणग्राहिता का पुनः परिचय दिया।

इस ऐतिहासिक सांस्कृतिक विरासत के सौभाग्य से विमण्डित इसी जनपद से अब से पचहत्तर वर्ष पूर्व श्रीमान् भैरारामजी आर्य का जन्म तारानगर के समीपवर्ती 'गोडास' ग्राम में हुआ। वे जाट जाति, जो यहाँ की कृषि प्रधान, श्रमशील और कर्मठ जाति है—में जन्मे। जाटों के साथ जुड़ा सम्मानास्पद शब्द 'चौधरी' संस्कृत के चतुर्धुरीकरण का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ है जो गोष्ठी करते चार व्यक्तियों में धुरंधर हो, पंच पंचायती में सक्षम हो। श्री भैराराम जी यह जन्मजात संस्कार लेकर आये।

श्रद्धेय भैराराम जी बाल्यावस्था में ही पितृ-सुख से वंचित हो गये। इनके पिताश्री के मन में यह तीव्र इच्छा थी कि उनके पुत्र चाहे बड़े विद्वान नहीं बने किन्तु साक्षर अवश्य बनें। वे निरक्षर के जीवन को निरर्थक मानते थे। यह उन दिनों की बात है जब गांवों में शिक्षा तो क्या साक्षरता भी नहीं पहुंच पायी थी। पिताश्री के स्वप्न को साकार करने श्री भैरारामजी एवं ज्येष्ठ भ्राता श्री मालूरामजी की प्रारम्भिक शिक्षा हेतु श्रीगंगानगर से आये एक आर्य समाजी विचारों के अध्यापक को रखा गया। उनके सान्निध्य में श्री मालारामजी ने प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की। चूंकि आपके अन्दर जन्म के ऊँचे संस्कार थे परिणाम स्वरूप ज्यों-ज्यों वे बड़े होते गये, चिन्तन की दृष्टि से व्यापकता पाते गये। उनकी हितकारी सोच अपने परिवार तक ही सीमित नहीं रही, बल्कि वे चाहते थे जितनी जो बुद्धि वैभव व कार्य शक्ति उन्हें प्राप्त है उसका वे जनहित में सदुपयोग करें। इसलिए घर में चलते आये कृषि आदि कार्यों में संलग्न रहते हुए भी उन्होंने आर्य समाज आन्दोलन से अपने आपको जोड़ा। आर्य समाज वैदिक परम्परा के अनुरूप संस्कारित धार्मिक जीवन देने के साथ-साथ सामाजिक बुराइयों को दूर करने, कुरीतियों को मिटाने, महिला समाज को शिक्षित कर उसे गरिमायुक्त करने के पावन लक्ष्यों को लेकर उन्होंने क्रान्तिकारी अभियान चलाया। भारतीय स्वतंत्रता, छुआछूत मिटाने, हिन्दी भाषा को सार्वजनिक बनाने में श्री चौधरी साहब ने सक्रिय योगदान किया। आदरणीय श्री भैरारामजी के रग-रग में आर्य संस्कृति के उन्नत उज्ज्वल भाव व्याप्त थे। वे चाहते थे कि जन-जन में उन्हें वे प्रसारित करें। इसीलिये उन्होंने सत्यार्थप्रकाश आदि आर्य समाज के ग्रन्थों का सुयोग्य विद्वानजनों के सान्निध्य में अध्ययन किया, जनोपयोगी संगीत की शिक्षा ली, भाषण कला का अभ्यास कर पारंगत हुए और फिर एक सुयोग्य मधुरवाणी के लोक गायक तथा ओजस्वी वक्ता के रूप में आर्य समाज के उपदेशों को जन-जन में रखकर-गाकर आर्य सिद्धान्तों की धूम मचा दी।

इस जनपद में सर्वत्र कार्यशील रहते हुए उन्होंने तारानगर को मुख्य केन्द्र बनाये रखा। वे इतने लोकप्रिय हुए कि जनसाधारण के मुंह से उनके सम्मान में सहज ही 'तारानगर के गांधी' की गौरवशील अभिव्यक्ति प्रचलन में आ गई। इस शब्द को सुनते ही इस क्षेत्र के हर व्यक्ति के मन-मस्तिष्क में श्री आर्य जी का चित्र उद्भावित होता है और आज भी वे इसी नाम से सुविख्यात हैं।

मंझला कद, छरहरा बदन, सौम्यतापूर्ण ओजस्वी मुखमण्डल, मस्तक पर हल्के-हल्के खिचड़ी काले-श्वेत केश पुञ्ज, शुद्ध हाथ की बुनी व सिली मोटी खादी की कमीज (कुर्ता), घुटनों तक नीचे धोती और साधारण सी, इसी जनपद की प्रचलित जूतियां पहने चौधरी भैरारामजी को कोई सहज ही पहचान नहीं पाता, मगर पहचान कर फिर कभी भी भूल नहीं पाता, इस 'तारानगर के गांधी' को जो साक्षात् देवस्वरूप सहज नैसर्गिक मुस्कान लिए है। इस सामान्य परिवेश में रहने वाले औसत कद-काठी के अन्दर कर्मशील, सेवाशील, उद्यमशील महामानव का विशाल व्यक्तित्व छिपा है—इसकी यथार्थ कल्पना उनके कृतित्व को देखने पर ही की जा सकती है।

श्री आर्य मातृशक्ति के उत्थान, विकास व उसकी शिक्षा को विशेष महत्व देते हैं। आज जीवन के साढ़े सात दशक वे पार कर चुके हैं किन्तु उनके कर्मयोगी जीवन ने अभी भी विश्राम नहीं किया। वे निरन्तर गतिशील रहे हैं। तारानगर में स्थापित वैदिक कन्या छात्रावास में शताधिक कन्याएं वैदिक उच्च संस्कार हेतु रहकर विधि-विधान से शिक्षा ग्रहण कर रही हैं जो इसका साक्षात् उदाहरण है। आप इस पुनीत उद्देश्य को लेकर सतत प्रयत्नशील हैं, कार्यरत हैं। ये सभी छात्राएं गुरुकुल परम्परा अनुसार श्री आर्य की देख-रेख व सान्निध्य में उत्तम-उन्नत संस्कार लेकर उज्ज्वल भविष्य की नींव रख रही हैं। जिससे न केवल वे स्वयं ही बल्कि उनकी आने वाली पीढ़ियां भी प्रभावित होंगी।

श्री आर्यजी सभी जातियों में फैली कुरीतियों, प्रदर्शनों व बुराइयों के घोर विरोधी रहे हैं। विवाह शादियों में एवं मृत्युपरान्त दिये जाने वाले भोज, पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह आदि रीति-रिवाज इन्हें अत्यधिक अखरे। इनके निवारण के प्रयास का श्रीगणेश आपने स्वयं अपने ही घर से प्रारम्भ कर एक स्तुत्य उदाहरण स्थापित किया। आपने अपने दोनों पुत्रों की शादी में केवल सात व्यक्तियों की बारात भिजवाई जबकि इनके समकक्ष व्यक्ति सैकड़ों बाराती ले जाकर अपव्यय करते हैं।आपका मानना है कि सुकार्यों की शुरूआत घर से प्रारम्भ होनी चाहिये। चौधरी साहब सदा से ही गुणग्राही रहे हैं, पुत्रवधुओं के चयन में भी उनका यही चिन्तन रहा कि कन्या सुयोग्य, शिक्षिता व गुणवन्ती हो, यही उसके वर और सास-ससुर के लिए सबसे बड़ी उपलब्धि है। वे दहेज के सदैव विरोधी रहे, आपने इसे एक सामाजिक अभिशाप कहा है।

श्री आर्य ने अपने इन उच्च संस्कारों-विचारों, नीतियों एवं सिद्धान्तों को जन-जन में व्यवहार रूप में प्रसारित करने में इतना अधिक श्रम किया जितना कि एक सफल उद्योगी अपना व्यापार बढ़ाने में दिन-रात लगा रहता है। इनका भाव निःस्वार्थ सेवा भाव लिए है। गीता में बताए अनासक्त कर्मयोगी के भाव का साक्षात् चित्रण आप में स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।

आदरास्पद श्री भैरारामजी के दो पुत्र और दो पुत्रियां है। इन्होंने चारों ही संतानों को उच्च शिक्षा दिलवाई। आपके ज्येष्ठ पुत्र बीकानेर संभाग के सुविख्यात

और यशस्वी शल्य चिकित्सक डॉ. हनुमानसिंह कस्वां हैं जो वर्तमान में सरदार मेडिकल कॉलेज बीकानेर में व्याख्याता के पद पर कार्यरत हैं।

दूसरे पुत्र श्री जीतसिंह (एम.ए.) सरदारशहर के बाल मंदिर नामक प्रतिष्ठित शिक्षण संस्थान में शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। श्री जीतसिंह की जीवनसंगिनी सौ. सत्यभामा एम.एस.सी. एम.एड. (M.Sc. & M.Ed) है। आप वर्तमान में सीनियर हायर सैकेण्डरी स्कूल, सरदारशहर में अध्यापन कार्य में संलग्न हैं। डॉ. हनुमानसिंहजी की अर्धांगिनी सौ. विमला भी स्नातक तक की शिक्षिता हैं। दोनों सुयोग्य एवं सुशिक्षित पुत्रवधुओं के पीछे श्री आर्य जी की ही प्रेरणा व प्रयास रहे हैं

निःस्पृहता पूजनीय चौधरी साहब का विशेष गुण है। वे स्पृहा,आकांक्षा या कामना से बहुत ऊपर उठे हुए हैं। उनके पुत्र, पारिवारिक सभी जन सुखी हैं, समृद्ध हैं इसका उन्हें संतोष है। वे उनसे कुछ भी पाने की इच्छा नहीं रखते हैं। आप ऐसे व्यक्ति हैं जो सिर्फ देना ही जानते हैं, लेना नहीं।

यह व्यक्त करते हुए मुझे असीम हर्ष होता है कि इन प्रबुद्ध महान् कर्मयोगी के निकट सम्पर्क में आने एवं उनका सान्निध्य प्राप्त करने का स्वर्णिम अवसर सौभाग्य से अनेक बार मिला है। मेरी ससुराल तारानगर के प्रतिष्ठित व उच्च शिक्षित सुराणा परिवार में है। चौधरी साहब का इस परिवार से वर्षों से घनिष्ठ सौहार्द्रपूर्ण संबंध है। इसलिए मुझे और मेरी धर्मपत्नी को वे निज परिवार तुल्य ही मानते रहे हैं। मेरी पत्नी को वे अत्यधिक स्नेह और अभिभावकत्व प्रदान करते रहे हैं, हमारी बड़ी चिन्ता करते हैं। जब भी मिलते हैं, बड़े प्यार से कहते हैं 'मेरी बेटी अच्छी है, ना?' हम भी आपका पिता समान आदर करते हैं। जब परस्पर मिलते हैं तो आत्मीयता का जो आनन्द आता है वह शब्दों में अभिव्यक्त कर पाना मुश्किल है। उनके स्नेह का अनुभव हम निरन्तर करते रहते हैं।

इस प्रस्तुत संदर्भ में मैं कुछ अनुभूत संस्मरण उल्लिखित करना चाहूंगा :

उनके ज्येष्ठ पुत्र डॉक्टर हनुमानसिंह से मेरी अत्यन्त घनिष्ठता और स्नेहात्मक संबंध है। हमारा इतना भ्रातृभाव है कि हम जब भी मिलते हैं, एक-दूसरे के हर्ष का पार नहीं रहता। घंटों बैठ, जीवन के विविध विषयों के वैचारिक आदान-प्रदान करते हैं, सुख-दुःख की चर्चाएं करते हैं व मनोविनोद करते हैं। दोनों ओर से यह चाह बनी रहती है कि पुनः पुनः मिलना हो। एक दूसरे के हितचिन्तक और सुख-सुविधाओं/असुविधाओं में सहज रूप से जुड़े रहते हैं। ऐसा सौहार्द्र, स्नेह और मैत्री भाव प्राप्त होना कम सौभाग्य की बात नहीं है।

लगभग पन्द्रह बरस पूर्व की बात है जब डाक्टर साहब सरदारशहर के राजकीय अस्पताल के मुख्य शल्य चिकित्सक के पद पर कार्यरत थे। पूरे क्षेत्र में बड़ी अच्छी लोकप्रियता थी। संयोग ऐसा बना कि डॉ. हनुमानसिंह का सरदार मेडिकल कॉलेज में व्याख्याता के रूप में चयन हो गया। यह स्वाभाविक है कि डॉक्टर साहब
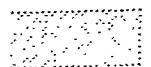
की बीकानेर जाने की विशेष उत्सुकता थी क्योंकि वह उन्नति और प्रगति का क्षेत्र था। हम लोगों की, जो उनके निकटतम सहयोगी स्वजन थे, हार्दिक इच्छा थी कि डाक्टर साहब सरदारशहर में ही रहें। इस क्षेत्र के लोगों को उनकी स्नेहपूर्ण सेवाएँ चिरकाल तक प्राप्त होती रहें। दोनों ओर के चिन्तन ने एक स्नेहास्पद विवाद और आग्रह का रूप ले लिया। संयोगवश पूज्य चौधरी साहब का सरदारशहर आगमन हुआ। हमने कहा कि इस संबंध में चौधरी साहब जो निर्णय देंगे, हम उसे सहज रूप में स्वीकार कर लेंगे। उन्होंने दोनों ओर के विचार बड़ी धीरता व गंभीरता के साथ सुनकर बहुत ही संक्षेप में अपने विचार बतलाते हुए कहा 'देखो भई जहाँ ज्यादा मनुष्यों की सेवा हो, मेरी राय में हनुमान का वहीं रहना उपयुक्त होगा।' उनके विचारों ने हमें चिन्तन में डाल दिया। हमने महसूस किया कि बीकनेर में रहकर ही अधिकतम मानव सेवा कर सकेंगे। फिर, सरदारशहर और तारानगर के लोगों को भी विशेष चिकित्सा हेतु बीकानेर में उनसे सम्बल प्राप्त होता रहेगा, इसलिए हम लोग भी उनके बीकानेर जाने के विवेकपूर्ण निर्णय से सहमत हो गये। यह है चौधरी साहब की जनोपयोगी सोच की एक सहज स्मृति।

सन् 1993 के राजस्थान विधान सभा के चुनावों का प्रसंग है। मरुधर क्षेत्र के सुप्रसिद्ध समाज सेवी, प्रखरनेता व अर्थशास्त्री पूर्वमंत्री श्री चन्दनमल वैद तारानगर से विधानसभा के प्रत्याशी थे। श्री वैदजी की कर्मठता एवं योग्यता की मेरे मन पर सदा से छाप है। तारानगर की जनता से मेरा पारिवारिक एवं आत्मीयतापूर्ण संबंध है। यहां के लोगों का स्नेह व आदर पाने का मेरा सौभाग्य रहा है। तारानगर क्षेत्र में मैं माननीय श्री वैदजी के लिए जन समर्थन जुटाने में विशेष कार्यशील रहा। घर-घर घूमकर मैंने उनके प्रति जनमत पक्ष में करने का अपनी ओर से अनुरोध भी किया। इसी क्रम में एक दिन चौधरी भैरारामजी के पास पहुंचा। वे मुझे देखकर बहुत खुश हुए। आवभगत की। मैंने चौधरीजी को प्रणाम करके बिना किसी अन्य भूमिका के उनसे निवेदन किया, 'पूज्यवर, आज मैं वैदजी के लिए आपसे वोट मांगने आया हूं, सहयोग की आकांक्षा लेकर आया हूं।' वे बोले 'आप हमारे पावणे हैं, जरा बैठिये, विश्राम कीजिये। आप स्वयं हमारे यहां आये हैं,बहुत खुशी की बात है, दूध पीजिये! खाना खाइये।' चौधरी साहब के स्नेहानुरोध से हमने दूध पीया, खाने हेतु क्षमा मांगी। दूध पिलाने के बाद वे बोले—

'जवांई साहब, आप एक प्रबुद्ध व्यक्ति हैं मेरी बात समझिये। मत देने का आधार स्वविवेक है। मैं अपने विवेक से चिन्तन करता हूँ, जो व्यक्ति इस क्षेत्र के लिए उपयोगी हो, जिसका चरित्र बेदाग हो, जो प्रामाणिक हो, देश सेवा व समाज सेवा के लिए राजनीति करना चाहता हो, मैं उसी को अपना मत दूंगा। इस बार भी मैं अपने विवेक से निर्णय करूंगा। जो मेरे सिद्धान्तों की कसौटी पर खरा प्रतीत होगा, उसी को मत दे दूंगा। मैं जाति, व्यक्ति, परिचय और पारिवारिक नाते को, सबको गौण मानते हुए प्रत्याशी की योग्यता का सही मूल्यांकन करता हूं। आप मेरे अपने हैं, मुझे आप और मत कहियेगा।'

उन वयोवृद्ध कर्मयोगी के इतने सुस्पष्ट विचारों से मेरे अन्तर्मानस में एक बिजली सी कौंध गई। मन ही मन मैं सोचने लगा कि काश यदि हमारे राष्ट्र का प्रत्येक मतदाता उपरोक्त सोच रखकर विवेकपूर्ण चिन्तन कर मतदान करे तो राष्ट्र की सारी समस्याएं स्वतः ही मिट जायें। राष्ट्र के संचालन का दायित्व यदि इस सोच के पश्चात् मतदाता अपने प्रतिनिधियों को सौंपते तो वे सारी विडम्बनाएं मिट जाती जिन्होंने हमारे आज के जीवन को झकझोर डाला है। मैं उनके समक्ष आदर से नतमस्तक हो गया और बिना कुछ कहे प्रणाम करके लौट गया।

श्री चौधरी साहब में विशेष बात यह है कि वे स्नेह, पारिवारिकता, आत्मीयता और सेवा सद्भावना की भावना से ओत-प्रोत हैं किन्तु इन सबके ऊपर वे सिद्धान्तप्रिय एवं न्यायपरायण हैं। वे सिद्धान्तों के साथ कभी समझौता नहीं करते। वे सम्मान सबका करेंगे किन्तु अपने सिद्धान्तों को हरगिज नहीं मिटने देंगे। वास्तव में धन्य हैं ऐसे पुरुष और धन्य हैं वह माँ वसुन्धरा जो ऐसे नर-रत्नों को जन्म देती है।

ऐसे ही व्यक्ति वास्तव में अभिनन्दन के अधिकारी होते हैं। चौधरी श्री भैरारामजी का अभिनन्दन कोई औपचारिकता नहीं है, वह अपनी यथार्थता लिए है। उनके कार्य और वे स्वयं जन-जन द्वारा अभिनन्दनीय और श्लाघनीय हैं। मैं चौधरी साहब का हृदय से अभिनन्दन करता हूं, उन्हें कोटि-कोटि प्रणाम व नमन करता हूं। उनके शतायुर्मय जीवन की मंगलकामना करता हूँ। पुनः प्रणाम सहित श्री आर्य ऋषि, आर्य मानव को अन्तरमन से नमन।

दीपक द्वारा प्रेरणा

दीपक का तेल चुक गया था। केवल रुई कीं बाती जलकर मन्द-मन्द प्रकाश बिखेर रही थी। उसके अन्तिम समय को निकट आया देखकर एक गृहस्थ ने पूछ ही लिया—'तुम जीवन भर आलोक बिखेर कर दूसरों का पथ-प्रदर्शन करते रहते हो, संसार के साथ इतनी भलाई करते रहते हो, फिर भी तुम्हारा इस प्रकार दुःखद अन्त देखकर मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जा रहा है।' बुझते दीपक ने पूर्ण शक्ति के साथ अंतिम बार अपनी आभा बिखेरते हुए कहा—'भाई इस भौतिक जगत् में जिसका जन्म होता है उसका अन्त भी होता है। हम प्रयास करने पर भी उससे बच नहीं सकते। हाँ, इतना अवश्य कर सकते हैं कि अपने जीवन की मूल्यवान घड़ियों को व्यर्थ ही नष्ट न होने दें।'
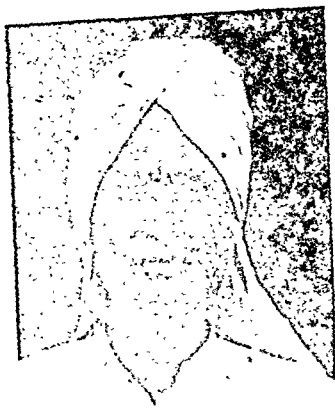
कुछ कर लो–समय भाग रहा है

श्री रामदत्त आर्य

खादी के सादे पहनावे, उत्तम स्वास्थ्य के धनी, सिद्धान्तप्रिय श्री आर्य से मेरा प्रथम सम्पर्क तारानगर के बाजार में सन् 1956 में हुआ। प्रथम दर्शन ने मुझे इनके प्रति जिज्ञासु बना दिया। मेरे पिताजी से जानकारी लेने पर उन्होंने श्री भैराराम आर्य और उनके बड़े भाई श्री मालूराम आर्य के बारे में विस्तार से बतलाया। तब से ये मेरे आदर्श हैं। इनके विचारों को सुनने, तदनुसार आचरण करने की एक ललक पैदा हो गई है। 1960 तक के चार वर्ष के तारानगर प्रवास में इनके सम्पर्क में बिताये दिन मेरे जीवन का आदर्श काल रहा है। इनकी जीवनी शैली, विचार, रहन-सहन से प्रभावित होकर अपनी लड़की का रिश्ता 1979 में इनके ही परिवार में किया। मेरा व मेरे परिवार के आर्य संस्कारों व गुरुकुल के कार्यों के प्रति रुचि व लगाव के प्रेरक श्री भैराराम आर्य ही हैं।

श्री भैरारामजी के जीवन व पारिवारिक परिचय तथा इनके द्वारा किये गये विभिन्न स्मरणीय कार्यों की जानकारी तो आपको अन्यत्र भी मिल ही जायेगी। मैं तो केवल मेरी स्मृति और सम्पर्क के कतिपय क्षणों को जिन्हें मैं कभी भुला नहीं सकता यहां प्रस्तुत कर रहा हूं।

सन् 1987 में अपने बड़े भाई श्री मालूराम आर्य के देवलोक गमन से विरक्त भाव से भरे श्री भैरारामजी ने मेरे पास 'भलाऊ' में आकर कन्या गुरुकुल प्रारम्भ करने की इच्छा बताई। इसमें मेरी यह राय रही कि यहां गुरुकुल चलाना बड़ा मुश्किल काम है सो हमें 'वैदिक कन्या छात्रावास' खोलना चाहिये, उसमें दिनचर्या गुरुकुलों की रख दी जायेगी। छात्रावास संचालन में मैंने अवैतनिक रूप से अपना पूर्ण समय देने का भी निवेदन किया।

अपने विचार को साकार करने के लिये वे 'भलाऊ' से गुरुकुल धीरणवास, धीरणवास से गुरुकुल कुभा, गुरुकुल खरल (जीन्द), गुरुकुल झज्जर का चक्कर लगाते रहे। सोच को साकार करने की प्रेरणा सभी ने दी पर सहयोग के लिये समर्पित व्यक्ति कहीं से भी नहीं मिले। झज्जर में स्वामीजी ने बताया 'आदमी है ही नहीं, सोना करके लेते हैं, लोहा बन जाता है, आदमी खुद बनो और संस्था चलाओ, उधारे

आदमी नहीं मिलते।' बात भैरारामजी को लग गई और 'कार्यं साधयामि देहं वा पातयामि' की तर्ज पर कार्य शुरू न होने तक बाल न कटवाने की घोषणा कर डाली।

1 जून, 89 को वकील हवासिंहजी आर्य के सहयोग से संविधान बनाकर वैदिक कन्या छात्रावास का पंजीकरण करवाया और 1 जुलाई 89 को श्री भैरारामजी के घर पर इन्हीं की अध्यक्षता में छात्रावास का 'श्रीगणेश' हुआ। जिसके लिये 1991-92 में स्व. सेठ बलदेव दास खेमाणी परिवार ने 2 बीघा भूमि का दान दिया जिस पर छात्रावास का भव्य भवन बस स्टैण्ड के पास खड़ा है। इस मंजिल तक पहुंचने के लिये श्री भैरारामजी का संघर्ष शब्दों में नहीं समा सकता। अतिक्रमणों को हटाना, अदालती कार्यवाही संभालना, छप्परों में आग लगने से तनिक भी विचलित न होना उनके बेधड़क आर्य वीर का स्वरूप उजागर करता है। छात्रावास में प्रथम दो वर्षों में 7-7 अन्तेवासिनी छात्राओं की संख्या अगले दो वर्षों के लिये 22-22 रही। वर्ष 93-94 में एकदम दुगुनी 46 की संख्या 94-95 में पुनः दुगुनी होकर आज 125 है।

श्रमजीवी, धुन के धनी श्री भैरजी किसी प्रकार की बनावट व दिखावे को पसन्द नहीं करते। उनकी भाषा सुनने वालों को कभी सख्त या कड़वी लगती थी पर तत्काल ही वही वाणी अमृत-तुल्य मधुर शब्दों की वर्षा करने लग जाती। श्री भैरजी के बारे में जितना लिखा जाये उतना ही कम है। मैंने उनके स्वभाव में जिन प्रमुख रुचियों को जाना वे हैं—कृषि कर्म, पशुपालन, वृक्षारोपण, सात्विक आहार, आसन, सत्संग, गायत्री उपासना, भजन, हवन, वादन, भाषण, ऊंट की सवारी, पदयात्रा-देशाटन, वेद प्रचार, शिल्प, सिलाई, बुनाई, सैन्य शिक्षा, कुरीति व दुर्व्यसन उन्मूलन, शिक्षा के प्रति लगाव, वाणी, श्रम, धर्म का आग्रह, राजनैतिक चेतना, प्रातः ब्रह्मवेला में जागरण, भजन, कीर्तन व डायरी लेखन।

श्री भैरारामजी आर्य साक्षात् कर्मयोद्धा हैं जो सदैव विपरीत स्थितियों में बिना विचलित हुए धैर्य से मार्ग निकाल लेते हैं। आज जब देश में कदम-कदम पर समस्याएं हर क्षेत्र में भीमकाय स्वरूप धारण किये जा रही हैं तब सिर्फ ऐसे ही व्यक्तित्वों का अनुसरण करके प्रगति की राह पकड़ी जा सकती है। जीवन जीने का सही दर्शन व तरीकों का सही सामञ्जस्य इन से सहज ही सीखा जा सकता है। मैं यही प्रार्थना करता हूं कि ईश्वर ऐसे व्यक्तित्व में शक्ति का संचार करते रहें ताकि सच्चाई और धर्म-जीवन के प्रति आस्थाएँ और अटूट होती जायें।
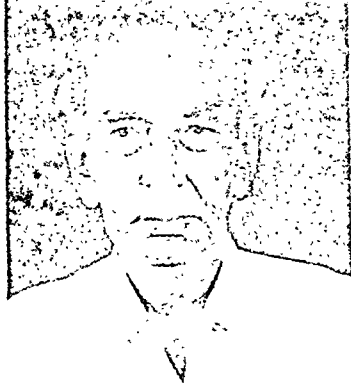
श्री आर्य : एक आर्ष पुरुष

डॉ. ओम प्रकाश गुप्ता

आज से करीब पचास साल पहले जब मैं सरकारी अस्पताल तारानगर में डॉक्टर था तो एक दिन मुझे एक रोगी को देखने के लिये 7 कोस दूर गांव 'जोड़ी' में जाने का काम पड़ा। उन दिनों यातायात का साधन केवल ऊंट ही था, और मैं ऊंट की सवारी करने का अभ्यस्त नहीं था। अब क्योंकि जाना था इसलिये मैं चल पड़ा। अभी हम 'जोड़ी' से थोड़े दूर थे तब ऊंट सवार ने मुझे सुझाव दिया कि अभी 'गोडास' गांव आएगा। वहां पर एक अच्छा स्कूल है वहां कुछ देर रुककर थकान मिटा लेंगे फिर आगे बढ़ेंगे। स्कूल देखकर और वहां मीठे-मीठे मतीरे खाकर बहुत प्रसन्नता हुई। इस स्कूल के हैडमास्टर श्री लालचन्द को ही इसकी तरक्की का श्रेय जाता है। जिनके परिश्रम व लगन से यह स्कूल तहसील की एक नम्बर की गिनी जाती थी। इसी स्कूल में ही पता चला कि 'गोडास' गांव के श्री भैराराम आर्य एक कर्त्तव्यनिष्ठ, जनसेवी, कट्टर आर्यसमाजी एवं स्वामी दयानन्दजी के अनन्य भक्त व समाज सुधारक यहीं रहते हैं। इन्होंने अपने ग्रामीण इलाकों में फैली कुरीतियां—मदिरापान, मृत्युभोज, छुआछूत, बाल-विवाह आदि को दूर करने, साक्षरता प्रसार और विशेषकर कन्या शिक्षा के लिए साहसिक बीड़ा अपने कंधों पर उठा रखा है। वे सादा जीवन उच्च विचार में विश्वास रखते हैं। चूंकि मेरा जन्म से ही आर्य समाज से घनिष्ठ संबंध रहा है अत: मैं श्री भैराराममजी के आकर्षण में बंध गया। उनसे मिला और फिर तो उनके सम्पर्क में आता ही चला गया। मैं उनके काफी निकट आ गया। फिर वे तारानगर आकर बस गये पर उनका अपने गांव 'गोडास' जाना-आना बना रहता था। 10-15 कोस पैदल आने-जाने में इन्हें कोई कठिनाई नहीं होती थी। यहां आने के बाद श्री आर्यजी ने पश्चिम के धोरों के बीच जमीन को समतल कर बाड़ लगाकर एक कुआं खुदवाया जिसमें मीठा पानी निकला। फिर, धीरे-धीरे अपनी मेहनत से चारों तरफ सैकड़ों पौधे, वृक्ष लगाकर और एक कमरा बनाकर तारानगर आर्य समाज की स्थापना की। श्री आर्य जी ठीक 3 बजे प्रात: उठकर भगवान का नाम लेकर प्राणायाम कर 4 बजे आर्य समाज में पहुंच कर स्नान करते, संध्या व ईश्वरोपासना के बाद सभी पेड़-पौधों में पानी देकर सिर पर भरा पानी का घड़ा लिए वापस घर आते। यह क्रम निरन्तर वर्षों चलता रहा। अब भी चल रहा है—सिर्फ अब पानी घर तक लाने की आवश्यकता

नहीं रही। आप सही माने में गृहस्थ होकर भी सच्चे कर्मयोगी संन्यासी हैं। आप राजनीति में आकर इसकी निकृष्टता देख तुरन्त वापस छोड़ गये। अपना पूर्ण ध्यान समाज सेवा व नारी शिक्षा के हित में केन्द्रित कर लिया। आप शारीरिक परिश्रम के प्रति बड़े आस्थावान हैं। छोटे से छोटा व बड़े से बड़ा काम करने में कभी हिचकिचाये नहीं। न ही इनके शरीर को कभी थकान महसूस होती—हमेशा चुस्त-दुरस्त एक से ही दिखे। खादी का सादा पहनावा ही इन्हें प्रिय रहा है। भोजन एकदम सादा होता है पर दूध व दही का जरूर शौक रहा है।

आपका रहन-सहन जितना सादा है उतना ही सहज है स्वभाव। एक दिन तारानगर के बाजार में एक व्यक्ति ने इनके मोटे खद्दर की कमीज को पकड़कर फाड़ दिया और जोर से बोला 'देखो रे लोगों! यह व्यक्ति जिसका बेटा बीकानेर का बहुत बड़ा डॉक्टर है कितने सस्ते घटिया कपड़े पहनता है।' इस पर भी आप सिर्फ उसकी ओर देख हंस दिये। कितना सहज प्रत्युत्तर। ईश्वर कृपा से आपकी संतान भी बहुत नेक व सुशील है। बीकानरे के सुप्रसिद्ध तथा लोकप्रिय डॉ. हनुमानसिंह कस्वां जिनकी मीठी-मधुर वाणी से ही रोगी आधा रोग मुक्त हो दर्द भूल जाता है। बीकानेर मेडिकल कॉलेज में प्रोफेसर पद पर कार्यरत हैं वे। डॉ. हनुमानसिंह बहुत ही खुले दिल के एवं धर्म, दान-पुण्य में विश्वास रखते हैं। इसी प्रकार छोटा लड़का व पुत्रवधू एवं पुत्रियां शिक्षण संस्थानों में अध्यापन कार्य कुशलतापूर्वक कर रहे हैं। श्री आर्यजी को पिछले 10-15 सालों से लड़कियों में शिक्षा प्रसार हेतु एक जबरदस्त भावना लगी हुई है एवं उनके पढ़ने के लिए रहने की व्यवस्था हेतु तारानगर में छात्रावास बनाने की धुन लगी हुई थी। जो अब पूर्ण हो गई है। तारानगर तहसील के गांवों में 5वीं या 8वीं तक शिक्षा के बाद आगे शिक्षा ग्रहण करने हेतु तारानगर ही आना पड़ता है। श्री आर्यजी ने स्वयं अपने घर को ही छात्रावास में परिवर्तित कर दिया। जिसमें 20-22 लड़कियों का इन्तजाम चलता रहा। फिर बस स्टैण्ड के पास एक जमीन दानवीर द्वारा दान कर दी गई जिस पर छात्रावास बनना आरम्भ हुआ। निर्माण के दौरान बीच-बीच में असामाजिक स्वार्थी तत्वों ने इसका घोर विरोध किया और अनेक प्रकार से इन्हें पीछे हटाना चाहा किन्तु इस पुनीत कार्य में जुटे श्री आर्यजी न दीवानी केस से विचलित हुए न ही फौजदारी होने पर पीछे मुड़े। यहां तक कि इन्हें जान से मारने की धमकी मिलने लगी। मगर आप अडिग हिमालय बने, तटस्थ भाव से अपने कार्य में जुटे ही रहे। आज जितना छात्रावास बन गया है उसमें काफी संख्या में छात्राएं रह रही हैं। इसकी देख-रेख 'भलाऊँ टिबा' के आर्यवीर श्री रामदत्त जी बड़ी तत्परता से कर रहे हैं। आप एक रिटार्यड फौजी हैं। आप अपना सर्वस्व श्री आर्यजी को समर्पित कर इनके मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं। आप भी तारानगर, राजगढ़, चूरू, बीकानेर, जोधपुर व अजमेर में अनेक बार अदालती चक्कर लगा आये हैं, मगर घबराते नहीं हैं। बिना किसी डर-भय के अपने लक्ष्य की ओर

ही अग्रसर हैं। अब चूंकि वैदिक कन्या छात्रावास, तारानगर स्थापित हो चुका है, जो कमियां हैं धीरे-धीरे पूरी हो जायेंगी। परन्तु आपका लक्ष्य आदर्श कन्या गुरुकुल स्थापना करने का है। मुझे पूरा विश्वास है यह स्वप्न भी साकार होगा।

वेद की प्रार्थना के अनुसार 'जीवेम शरदः शतम', मैं यह श्रद्धा सुमन अपने प्रिय साथी एवं एक महान समाज सेवी की सेवा में अर्पित करता हूं—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवतरो जनः ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ।। (गीता (32))

अर्थात् श्रेष्ठ पुरुष जो-जो आचरण करता है अन्य पुरुष भी उसके अनुसार आचरण करते हैं। वह पुरुष जो कुछ प्रमाणित कर देता है उसे ही सब स्वीकार करते हैं।

मैं उनके अच्छे स्वास्थ्य व दीर्घायु होने की कामना करता हूँ।

शिल्पी रोया क्यों?

एक शिल्पी ने बहुत सुन्दर मूर्ति बनाई। बहुत देर तक उलट कर उसने देखा, और फिर फूट-फूट कर रोने लगा।

लोगों ने रोने का कारण पूछा तो उसने कहा—मुझे बहुत खोजने पर भी इसमें कोई त्रुटि नजर नहीं आती-यदि मेरी सूक्ष्म दृष्टि इतनी कुंठित बनी रही तो भविष्य में इससे अच्छी मूर्तियाँ बनाने का द्वार ही बंद हो जाएगा।

यही भावना व्यक्ति को प्रखर बनाती है, न कि थोड़ा करके सन्तुष्ट हो जाना व फिर शेष भाग्य या भगवान के सहारे छोड़ देना।

आर्य भैरारामजी के अग्रज : स्वतन्त्रता सेनानी स्व. मालारामजी चौधरी

श्री बैजनाथ पँवार

स्वतन्त्रता मानव की सहज स्वाभाविक प्रवृत्ति है। कोई भी प्राणी परतन्त्र रहकर गुलामी का जीवन नहीं बिताना चाहता। विश्व भर में ऐसे उदाहरण भरे पड़े हैं। जब-जब जिस राष्ट्र को गुलामी की जंजीरों में जकड़ा गया तो समय आने पर उसी राष्ट्र के नागरिकों ने देश को गुलामी की जंजीरों से मुक्त कराने के लिए अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया। हमारा भारत देश भी आज जो स्वतन्त्रता के वैभवपूर्ण दिन बिता रहा है, इसके पीछे न जाने कितने शहीदों का बलिदान है। कितनी वीर पत्नियों के सुहाग-सिन्दूर मिट गये। कितनी माँओं की गोद सूनी हो गई। देश के हर कोने, हर गाँव, हर नगर में बलिदानी जत्थे निकल पड़े थे और हँसते-हँसते प्राण दे कर व अपना सर्वस्व लुटाकर हमें आजादी दिलायी।

राजस्थान प्रान्त का चूरू जनपद भी आजादी के संघर्ष में पीछे नहीं रहा। चूरू का ही एकमात्र इतिहास रहा है जहां चांदी के गोले अपने दुश्मनों पर चलाये गये। चूरू जनपद में हुए दूधवा काण्ड, कांगड काण्ड, राजगढ़ का किसान आन्दोलन तत्कालीन जुल्मी जागीरदारों के विरुद्ध एक कड़ा संघर्ष था जिसने सत्ताधीशों की नींद हराम कर दी। सत्ता का जुल्म व शोषण उन्हें दबा नहीं पाया और आजादी की अमर चाह को वे कुचल नहीं पाये। चूरू जनपद के सैकड़ों युवक जेल गये और हजारों ने युद्ध का नेपथ्य से संचालन किया। वे भूमिगत रहे। चूरू जनपद के इन वीरों पर स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान लाठियां बरसाई गईं, उन्हें जेल में भीषणतम यातनाएं दी गईं। इनका यही उत्सर्ग हमारी स्वतन्त्रता का आधार बना। चूरू जनपद के स्वातन्त्र्य वीरों की इस गाथा में जिन वीरों ने अपना अभूतपूर्व योगदान दिया उनमें 'स्व. श्री मालाराम चौधरी'—गांव गोडास—को विस्मृत नहीं किया जा सकता।

श्री मालाराम का जन्म 21 अगस्त, 1909 को तारानगर तहसील के 'गोडास' गांव में हुआ। आपके पिता चौधरी श्री मोतारामजी का मुख्य कार्य खेती था। आपके दो पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र स्व. श्री मालाराम थे व छोटे श्री भैरारामजी हैं। पिताजी की यही इच्छा थी कि बच्चों को शिक्षा का अभाव न रहे अतः उस समय जब आस-पास तो क्या दूर-दूर कोई विद्यालय नहीं था तब उन्होंने अपने बच्चों की शिक्षा

के लिए गंगानगर के आर्य समाजी विद्वान से इनके लिए प्रारम्भिक शिक्षा का प्रबंध किया। श्री मालाराम को हिन्दी का अच्छा ज्ञान था तथा साथ ही साथ वे अंग्रेजी व संस्कृत का ज्ञान भी रखते थे।

स्व. श्री मालारामजी ने पिताजी के कार्यों, कृषि व पशुपालन में हाथ बंटाते हुए शिक्षा ग्रहण की। उसी समय जैतपुरा के श्री जीवणरामजी छाबड़ी (भादरा) के श्री दत्तूरामजी व स्वामी केशवानन्दजी से प्रेरणा लेकर आप भी सार्वजनिक क्षेत्र में अवतरित हुए। आरम्भ में भजनों व भाषणों से जन-जागरण व शिक्षा के महत्व को जन-जन तक पहुंचाने का कार्य किया और आजादी के महत्व को गांव-गांव के युवकों को समझाने का कार्य किया। 1946-47 में स्वतन्त्रता आन्दोलन में आप पूर्णतः खुलकर सामने आ गये। 1 मार्च, 1947 को धारा 144 तोड़ने व निषेधाज्ञा के विरुद्ध जुलूस निकालने के आरोप में गिरफ्तार कर लिये गये। दो माह तक न्यायिक हिरासत में रहने के बाद आपको आपके 20 साथियों सहित कारावास हुआ। कारावास की अवधि में आपके भाई श्री भैरारामजी ने पारिवारिक दायित्व का निर्वाह किया।

कारावास मुक्ति के पश्चात् आप कांग्रेस के संगठन में लग गये। आप शिक्षा प्रसार को ही राष्ट्र की सच्ची सेवा मानते थे। फलस्वरूप ढाणी आशा में सन् 1945 में प्राथमिक शिक्षा के लिए विद्यालय खोलने का आपने प्रयास कर इसे खोला। अपने गांव में जागीरदार के पट्टे होने के कारण स्कूल नहीं खुल पाया। तब आपने रूढ़िवादियों के विरुद्ध संघर्ष छेड़ा। फलस्वरूप 'गोडास' गांव में नशीले पदार्थों का सेवन, पर्दा प्रथा, बालविवाह व मृत्युभोज जैसे रूढ़िवाद का जमकर विरोध हुआ और 'गोडास' को एक आदर्श गांव बनाने का प्रयास किया। फलस्वरूप आज से कुछ समय पूर्व तक नशीले पदार्थों का सेवन गांव 'गोडास' में दण्डनीय अपराध माना जाता रहा। गांव में विवाह बहुत कम खर्चे पर आर्य समाज पद्धति से करवाये जाने लगे। इस तरह आपने अपने सम्पूर्ण जीवन को अपने अन्तिम समय तक संघर्षशील बनाये रखा। दिनांक 22 दिसम्बर 1987 को इस महान् आत्मा ने अपना शरीर त्याग दिया। आपके पीछे परिवार में आपके दो पुत्र है बड़े पुत्र श्री हरफूलसिंह व छोटे पुत्र दत्तूराज हैं, जो एक अध्यापक रहे, बाद में वे भी सक्रिय राजनीति में आ गये। आज भी श्री मालारामजी को स्वातन्त्र्य सेनानी के रूप में तथा कांग्रेस के वरिष्ठ व कर्मठ कार्यकर्त्ता के रूप में चूरू जनपद के लोग बड़ी श्रद्धा के साथ याद करते हैं।

चौधरी श्री भैरारामजी आज भी अपने अग्रज भाई स्व. श्री मालारामजी के विचारों की मशाल लेकर शिक्षा के क्षेत्र में नारी शिक्षा पर विशेष कार्य करते हुए राष्ट्र उत्थान व चिंतन कार्य में सतत कार्यरत हैं।

हमारा 'भैरजी'–श्री भैराराम

चौधरी दौलतराम सहारण

श्री भैराराम कस्वां ग्राम 'गोडास'। तहसील तारानगर। जिला चूरू के निवासी हैं। साथी, सहयोगी और हम लोग इन्हें 'भैरजी' नाम से पुकारते हैं।

श्री भैरारामजी आरम्भ से ही उत्साही, सेवाभावी एवं भावनाशील मुखिया रहे हैं। ये आर्य समाज की समाज सुधार और शिक्षा की प्रवृत्तियों से प्रभावित होकर सार्वजनिक व राजनैतिक क्षेत्र में आये। 'प्रजा-परिषद' और फिर 'कांग्रेस' में हमारे साथ जन-जागरण और संगठन का खूब कार्य किया। जागीरी उत्पीड़न और शोषण के विरुद्ध श्री मनीराम जी वर्मा आदि साथियों के साथ खूब सक्रिय रहे।

श्री भैरारामजी समाज सुधार और ग्रामीणों की शिक्षा के प्रति काफी सजग होकर काम करते रहे हैं। शराब खोरी, मृत्युभोज, शादियों में फिजूल खर्चों को रोकने आदि के लिये इन्होंने निरन्तर प्रयास किया है। अपने घर और गांव से इन बुराइयों को इन्होंने हटाया व आस-पास के क्षेत्र में हटाने का खूब प्रचार किया। अपने गांव में स्कूल खुलवाया। फिर तारानगर में अपने घर में छात्रावास प्रारम्भ किया। इससे प्रभावित होकर तारानगर के तह. मुख्यालय व प्रतिष्ठित व्यक्तियों के सहयोग से तारानगर बस स्टैण्ड पर आपकी देखरेख में छात्रावास स्थापित किया गया। निर्माण के दौरान अनेक बाधायें झेलते-लड़ते आज भी आप छात्रावास का कुशल संचालन कर रहे हैं। इस पुनीत कार्य में इनका उत्साह व पूर्ण योगदान देखते ही बनता है जिसे समाज सदैव याद रखेगा। यह इनके जीवन की महत्वपूर्ण उपलब्धि है। भैरजी सात्विक और सेवाभावी व्यक्ति हैं। अब इस उम्र के ढलान पर भी इनका उत्साह जवानों के उफनते जोश की मानिंद ताजा है। इनकी सेवापरायणता से प्रेरणा लेकर समाज अधिकाधिक लाभ उठायेगा। श्री आर्य और हमारे अपने 'भैरजी' शतायु हों यही कामना है।

श्रद्धेय श्री भैरारामजी

डॉ. ज्ञानप्रकाश पिलानिया

चौधरी भैरारामजी आर्य वास्तव में तारानगर अंचल के गाँधी हैं। समाज सेवा के क्षेत्र में एक कर्मयोगी के रूप में वे सुविख्यात हैं। 'वैदिक कन्या छात्रावास, तारानगर' उनकी कर्मठता और साधना का मूर्तरूप है। इन्होंने नारी शिक्षा के क्षेत्र में ही नव जागरण का शंख नहीं फूंका, परन्तु लोक चेतना की बहुविध अलख भी जगाई है। आर्य समाज की विचारधारा से अभिप्रेरित होकर इन्होंने ग्रामीण क्षेत्र में समाज सुधार की रणभेरी बजाई एवं मृत्युभोज, बालविवाह, शराबखोरी जैसी कुरीतियों एवं बुराइयों से मुक्ति का आन्दोलन चलाया। रूढ़ियों से, अन्धविश्वासों से एवं कुप्रवृत्तियों से समाज की मुक्ति हेतु आप एक जुझारू योद्धा की तरह जूझते रहे, लड़ते रहे।

तारानगर पंचायत समिति क्षेत्र में पंचायत राज को सार्थक एवं सबल बनाने में आपका योगदान सर्वविदित है। साक्षरता प्रसार के लिए श्री आर्य सदा समर्पित रहे। आपकी दृष्टि में शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति का निर्माण करना, व्यक्ति को चरित्रवान बनाना है। आपका साध्य है—'सा विद्या या विमुक्तये'।

श्री चौधरी भैरारामजी आर्य का अभिनन्दन एक प्रखर राष्ट्रवादी, आत्मविज्ञप्ति से निरपेक्ष, कर्मठ समाजसेवी, प्रेरणा पुरुष का अभिनन्दन है। इनकी साधना, सेवा, त्याग एवं समर्पण वन्दनीय है। आप श्री जैसे परोपकारी तथा महनीय व्यक्ति के लिए ही कहा गया है—'कुलं पवित्रं जननी कृतार्था, वसुन्धरा भाग्यवती च तेन'।

ऐसे शलाका पुरुष शतायु हों।

मेरे प्रिय अनुजवत श्री आर्य

श्री मनीराम आर्य

चूरू जिले का 'गोडास' गांव धन्य है जिसमें श्री आर्य का जन्म हुआ। कौन सोच सकता है कि गांव में जन्मा और बढ़ा एक साधारण किसान का लड़का अपनी लगन और तपस्या के बल पर वैदिक धर्म का सच्चा अनुयायी बनकर न केवल अपने गांव, तहसील और जिले के लिए अपितु मानव मात्र के लिए एक आदरणीय पद पा सकता है। केवल जन्म लेना, जीना और संसार से चले जाना मात्र ही आदमी के जीवन की सफलता होती तो हर आदमी बड़ा और आदर्श माना जाता किन्तु ऐसे गिने-चुने व्यक्ति ही हुआ करते हैं जो अपने जीवन में साधारण परिस्थितियों में जीकर असाधारण और बड़े कार्य सम्पन्न कर पाते हैं। ऐसे ही महान् व्यक्तित्व के धनी श्री भैराराम आर्य हैं।

श्री आर्य का और मेरा सम्बन्ध छोटे और बड़े भाई के समान रहा है। आर्य मेरे से दस वर्ष छोटे हैं, किन्तु मेरे हर कार्य में आपका सहयोग सदा बना रहा है। मैं और मालारामजी जब सामन्तशाही के खिलाफ लड़ रहे थे, जेल की यातना भोग रहे थे उस समय श्री आर्य हमारी घर गृहस्थी संभाले हुए थे और समाज में सामन्तशाही के विरुद्ध लड़ने के लिए जनता को गांव-गांव जाकर जगा रहे थे। जो काम हम जेल के भीतर रहकर कर रहे थे उसी का प्रकाश बाहर रहकर श्री आर्य जन-जन तक पहुँचा रहे थे।

वैदिक धर्म के प्रचार का संकल्प मेरे ही एक साथी पं. दत्तूरामजी से आपने लिया था। वे बड़े भजनीक थे। मैं भी अपना जीवन आर्य समाज के सिद्धान्तों के प्रचार करने में ही लगाने के लिए आर्योपदेश के समान भजनों को गा-गाकर गांव के लोगों में वैदिक आर्य धर्म के प्रति जागृति पैदा करता था। मेरे साथ श्री आर्य और उनके साथी तथा पं. दत्तूरामजी भी रहते थे।

मेरा जीवन भी कितना संघर्षमय रहा था ! एक अनाथ बालक के रूप में मेरा बचपन बीता। पिताजी सेना में नौकर थे, माँ का देहान्त बचपन में ही हो गया, परिवार में किसी ने सहारा नहीं दिया, मेरे पूज्य पिताजी ने कैसे मेरा पालन पोषण किया यह एक अलग ही कहानी है। फिर किस प्रकार मैंने पेट के लिए अनेक धन्धे

सीखे, समाज सुधार में लगा और फिर राजनीति में आया, विधायक बना और कांग्रेस के वैचारिक विरोधियों और कांग्रेस के अन्दर के विरोधियों से राजनैतिक मुकाबला किया। यह सब यहाँ लिखने का नहीं है, किन्तु इसके संकेत के द्वारा मैं केवल मात्र यही कहना चाहता हूं कि मेरी कहानी एक जाट के बेटे के संघर्ष की कहानी है, जो घर में गरीबी से, बाहर सामन्तों से और समाज में कुरीतियों से निरन्तर लड़ता है और उसको यदि किसी से प्रेरणा मिलती है तो एक मात्र आर्य वैदिक सिद्धान्त के प्रचारक स्वामी दयानन्द सरस्वती से और आशीर्वाद मिला है स्वामी केशवानन्दजी से तथा सहयोग मिला है अपने हम उम्र तथा कम उम्र के साथियों से जिनमें श्री भैरारामजी प्रमुख हैं।

हम दोनों आर्य समाज के जलसों में प्राय: साथ-साथ जाते थे और वहाँ एक साथ ही ठहरते थे। आर्य विद्वान अपने भाषणों में जो कुछ उपदेश देते उन पर बैठकर चर्चा करते थे। अपने गांवों में वैदिक धर्म का प्रचार कैसे हो, लोगों में यह चेतना कैसे उत्पन्न हो कि वे अन्धविश्वासों, रूढ़ियों को छोड़कर सच्चे मानव बनें, इसकी योजना बनाते। और फिर समय निकालकर गांव-गांव में एक साथ जाते। फिर मेरी रुचि राजनीति में हो गई और मैं कांग्रेस के प्रचार में लग गया। अपना अधिकतर समय राजनीति में ही लगाने लगा किन्तु भैराराम मेरी तरह राजनीति में नहीं आये, मुझे या हम लोगों को सहयोग देते रहे। कांग्रेस की नीति की उठा-पटक से दूर रहकर शुद्ध रूप से सामाजिक कार्यों में ही ज्यादातर अपना समय बिताया। राजनीति में भी सरपंच और फिर पंचायत समिति में उप प्रधान के रूप में आये भी तो यह ध्यान रखा कि पदों पर रहकर ग्रामीण भाइयों को अधिक से अधिक लाभ कैसे दिलाया जा सके। इसलिए इनका ध्यान सदा रचनात्मक कार्यों की ओर ही ज्यादा रहा। और यही कारण है कि मेरे जैसे लोगों के अनेक कट्टर विरोधी और दुश्मन भी रहे हैं (अब कोई नहीं है) किन्तु श्री भैराराम सदा युधिष्ठिर की तरह अजातशत्रु रहे। सभी इनकी सादगी, सच्चाई और लगन की प्रशंसा करते रहे हैं। कांग्रेस पार्टी को राजगढ़ और तारानगर तहसील के गांव-गांव में फैलाने में, इसके सदस्य बनाने में भी श्री आर्य मेरे साथ बहुत घूमे हैं और लोगों को आजादी की लड़ाई लड़ने वाली इस पार्टी को मजबूत करने की प्रेरणा दी है।

इस प्रकार श्री आर्य मेरे बहुत ही निकट के साथी या यों कहूँ कि मेरे छोटे भाई के समान रहे हैं। मेरा सदा इन पर पूरा विश्वास रहा है, और आज तो इनके कार्यों को देखकर मुझे बहुत ही खुशी है कि चलो हमारे एक वैदिक प्रचारक के काम का इतना फैलाव हो रहा है और समाज में उसका प्रभाव बढ़ रहा है। आने वाली पीढ़ी श्री आर्य के जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर जाति, समाज और राष्ट्र की उन्नति के कार्यों में उत्साह प्राप्त करे यही मेरी कामना है। और अब तो श्री आर्य ने संन्यासी बनकर मेरे जैसों को बहुत पीछे छोड़ दिया है, अब वे मेरे पूजनीय भी हैं। सदा इसी प्रकार समाज को प्रेरणा दें, यही मेरी शुभकामना है।

कार्यकर्त्ताओं के प्रेरणा-स्रोत

श्री हजारीमल सारण

संसार में जहां भी हम देखते हैं, आज एक ऐसी अंधी दौड़ लगी है कि किसी को भी किसी से बात करने की फुरसत नहीं है। यह केवल बड़े उद्योगपतियों, पूंजीपतियों या धनिकों तक की बात नहीं है साधारण से साधारण श्रमिक तक में हम यह पाते हैं। निरन्तर काम में जुटे रहना बहुत अच्छा है, अकर्मण्यता किस काम की किन्तु इस दौड़ के पीछे इन्सान के मन में कुछ और है, जो है उस तक हम पहुंचते हैं तो बहुत दुःख होता है, विस्मय होता है। अपना धन, वैभव, जायदाद, पद, प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिये यह दौड़ है और इन सबके साथ लगी आसक्ति इन्सान को इतना निष्ठुर और हृदयहीन बना देती है कि वह दूसरों के हित को नगण्य मानने लगता है। इसका नतीजा समाज में वैमनस्य, असहिष्णुता और विद्रोह के रूप में प्रस्फुटित होता है और आज के सारे संघर्षों की जड़ यही है। आदमी बहुत स्वार्थी और स्वकेन्द्रित हो गया है। यह सब देखते कभी कभी मन में बड़ी चिन्ता होती है, वेदना होती है। क्या दुनियां इससे चल पायेगी? किन्तु दुनियां में यद्यपि थोड़ा मिलता है, फिर भी कुछ और भी देखने को मिलता है जिससे मन में आशा बनती है, दुनियां चलेगी। आपा-धापी की दौड़ में लगे लोगों के समकक्ष कुछ ऐसे लोग भी धराधाम पर मौजूद हैं जो परसेवा, परोपकार और जन कल्याण में प्राणपण से जुटे हैं। महान् संत कवि तुलसीदास के शब्दों में—

परहित सरिस धर्म नहीं भाई
पर पीड़ा सम नहीं अधमाई

महान् संत तुलसीदास के शब्दों में मानव जीवन का यह आदर्श है। यद्यपि ऐसे लोग थोड़े हैं, परन्तु हैं और उनका उद्यम कभी व्यर्थ नहीं जा सकता। सूरज तो एक है लेकिन सारी दुनिया के अंधकार को वह मिटा देता है। चन्द्रमा तो एक ही होता है किन्तु करोड़ों तारे जो नहीं कर सकते वह अकेला कर सकता है। राजस्थान के मरुस्थलीय भूभाग चूरू जनपद के तारानगर तहसील में जन्मे 'तारानगर के गांधी' के नाम से विश्रुत आदरणीय चौधरी भैरारामजी कस्वां एक ऐसे ही सत्पुरुष हैं, जिनकी मेरे जीवन पर विशेष रूप से छाप पड़ी।

मेरा जन्म एक अच्छे खाते-पीते किसान के घर में हुआ। घर के लोग खेती-वाड़ी करते थे, शिक्षा में भी रुचिशील थे, इसी कारण मैंने अच्छी शिक्षा प्राप्त की। मेरे मन में देश के प्रति, जनता के प्रति एक सम्मान था कि मैं उनके लिए कुछ काम कर सकूं अतः ज्योंही मैंने होश संभाला सार्वजनिक जीवन में आ गया। जिस समय मैंने सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया वह युग सामंतवादी आतंक का युग था। किसान, श्रमिक आदि कामगर शोषित और पीड़ित थे। यद्यपि उस समय देश आजाद हो चुका था लेकिन ये स्थितियां बरकरार थीं। आम जनता में जागीरदारों का भय व्याप्त था। हम किसान नौजवानों के मन में बड़ी खीझ थी, एक विद्रोह था इन स्थितियों को मिटा देने हेतु। उस समय की बात मुझे बहुत बार याद आती है। आदरणीय भैरारामजी कस्वां जो उस समय जन जागरण के क्षेत्र में एक मार्गदर्शक या उपदेशक के रूप में खूब सक्रिय थे, लोगों में नैतिक शिक्षा और सदाचार का समावेश करने में कृतसंकल्प थे। इनके सम्पर्क में मैं भी यदा कदा आता रहता था। मेरे मन में उनके प्रति, उनके निःस्वार्थ जीवन के प्रति बड़ी श्रद्धा थी। उनको एक शिक्षक और मार्गदर्शक के रूप में मानता था। उस समय हमें उनसे जो मार्ग-दर्शन मिलता था आज मैं सोचता हूँ कि वह वास्तव में बहुत कीमती था। वे बड़े प्यार से कहते थे 'देखो शोषण और अन्याय इसलिए होता है कि शोषितों को अपने आपका बोध नहीं है और बोध इसलिए नहीं है कि उनमें शिक्षा का अभाव है। यदि हम उन्हें शिक्षित बनादें, उनमें आत्मबोध जगादें तो वे स्वयं सब स्थितियां संभाल लेंगे। इसलिए भाइयों, ध्वंस से निर्माण ऊंचा है, उससे समस्याएं अपने आप सुलझ जाती हैं।' जवानी के जोश में तब शायद उनकी ये बातें हमें इतनी नहीं भाती थीं किन्तु मैं भी आज प्रौढ़ हो चला हूँ और अब महसूस करता हूँ कि दरअसल में उनके अनुभव अति मूल्यवान थे।

सार्वजनिक क्षेत्र में रहते हुए सर्वप्रथम मैं सरदारशहर पंचायत समिति का प्रधान निर्वाचित हुआ और आगे चलकर राजस्थान विधानसभा के सदस्य के रूप में भी कार्य करने का अवसर मुझे मिला। चौधरी भैरारामजी से मेरा सम्पर्क सदैव बना रहा। मैं उनको बड़े पूज्य भाव से देखता था और देखता हूँ। समय समय पर चौधरी साहब से मिलता भी रहता। वे उसी अभिभावकीय मुद्रा में मुझे कहते 'देखो इन्सान को जिन्दगी में कभी-कभी काम करने का सुअवसर मिलता है, जो उसका सही उपयोग कर लेता है वही बुद्धिमान होता है। समय निकल जाता है, बात रह जाती है। विधायक रहते हुए तुम जनता के हित में जो भी तुमसे संभव हो, जितना कर सको, अवश्य करो। जनता ने जिस आशा और भावना से तुमको विधानसभा में भेजा है उसको पूर्ण करना तुम्हारा कर्त्तव्य है। जनता का संतोष और उसकी शुभकामना तो भगवान का आशीर्वाद है वह कभी निष्फल नहीं जाता।'

मुझे चौधरी साहब की बातें बहुत उचित लगतीं और मैंने जितना मुझसे बन सका, इस दिशा में प्रयत्न भी किया। जो कुछ मैंने जनहित का कार्य किया उसका

श्रेय श्रीमान् चौधरी भैरारामजी कस्वां की शिक्षा और मार्ग दर्शन को दूं तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

एक त्यागी, बेलाग, आकांक्षारहित साधक के रूप में चौधरी साहब को मैं देखता हूं। बालिकाओं के शिक्षण का जो बहुत बड़ा बीड़ा उन्होंने उठाया है वह राष्ट्र का एक बहुत बड़ा काम है। मेरी भगवान से प्रार्थना है कि चौधरी साहब सदा स्वस्थ रहें और जीवन के सौ बसंत पार करें। ऐसे पुरुष धरती माता के वे भाग्यशाली बेटे हैं जिनसे समस्त मानव जाति का बड़ा हित सधता है और धरती माता गौरवान्वित होती है।

मैं आदरणीय चौधरी भैरारामजी कस्वां का हृदय से सादर, सश्रद्धा और सम्मानपूर्वक शत शत अभिनन्दन करता हूं और उनके दीर्घायु होने की मंगलकामना करता हूँ।

जागते को दसों सिद्धियाँ

एक सन्त दस शिष्यों समेत सघन वन में रहते थे। एक रात्रि को उन्होंने एक विशेष साधना कराई। शिष्यों को पंक्तिबद्ध होकर ध्यान करने के लिए बैठा दिया। रात्रि के तीसरे प्रहर गुरु ने धीमे से आवाज दी-राम। राम उठा, गुरु ने उसे चुपके से दुर्लभ सिद्धि प्रदान की। अब दूसरे की बारी आई। पुकारा-श्याम। पर श्याम तो सो रहा था। इस बार भी राम ही आया और दूसरी सिद्धि भी लेकर चला गया।

शेष सभी शिष्य सो रहे थे। गुरु को उस दिन दस सिद्धियाँ देनी थीं। सोते को जगाने का निषेध था। दसों बार राम ही आया और एक-एक करके दसों सिद्धियाँ प्राप्त करके कृतकृत्य हो गया। सोने वाले दूसरे दिन जागे और अपनी भूल पर पछताने लगे।
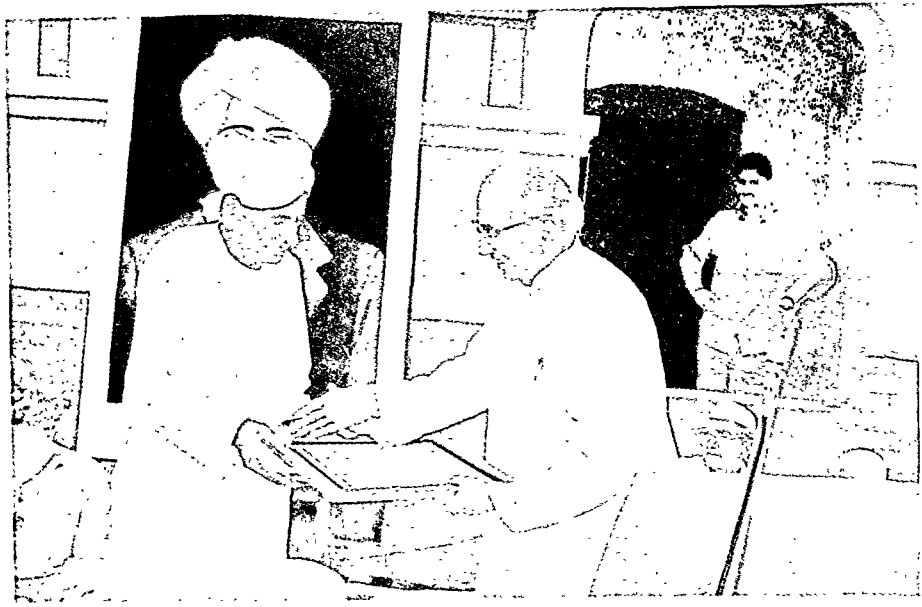
ग्रामोत्थान विद्यापीठ संगरिया में श्री भैरारामजी आर्य को अभिनंदन पत्र समर्पित करते हुए राज. सरकार के राजस्व मंत्री श्री गंगारामजी चौधरी
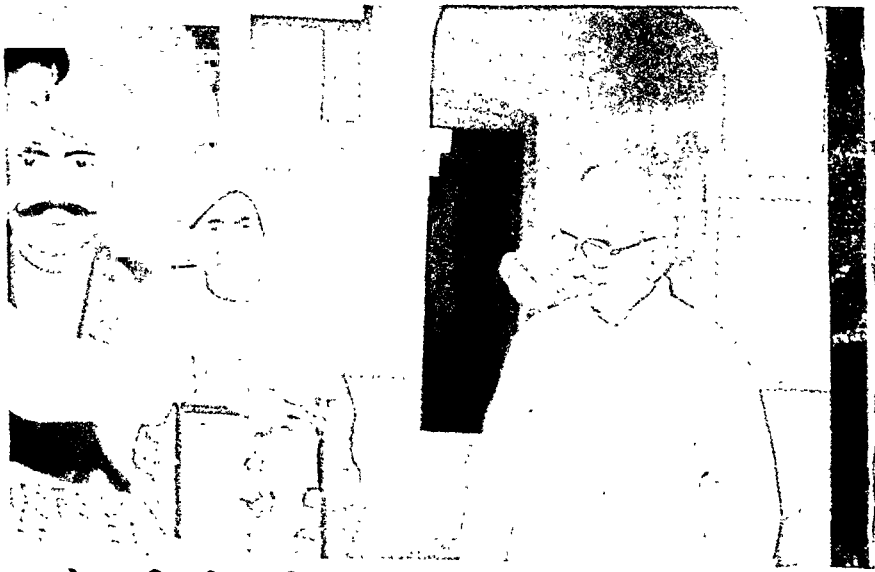
ग्रामोत्थान विद्यापीठ संगरिया में राज. सरकार के राजस्व मंत्री श्री गंगारामजी चौधरी के सान्निध्य में श्री भैरारामजी आर्य का अभिनंदन समारोह

श्री भैराराम आर्य : एक भाव मुद्रा में

ग्रामोत्थान विद्यापीठ संगरिया के समारोह में बोलते हुए डॉ. हनुमानसिंह कस्वां

संस्कृत विद्यालय जाखोद, जिला झुंझनूं में संन्यास के लिए श्री आर्य का अभिषेक करते हुए स्वामी सुमेधानन्दजी

श्री आर्य के संन्यास लेते समय आयोजित यज्ञानुष्ठान

श्री स्वामी सुमेधानन्दजी द्वारा श्री आर्य को संन्यासार्थ मंत्र प्रदान प्रकरण

स्वामी सुमेधानन्दजी मंत्रपूत काषाय वस्त्र श्री आर्य को प्रदान करते हुए

वैदिक संस्कृति के श्रमशील साधक

श्री यशवन्तसिंह

निर्विवाद सिद्ध हो चुका है कि संसार में ईश्वरीय ज्ञान और तदनुसार प्रकृति के शाश्वत नियमों के आदि स्रोत वेदों का उद्‌गम भारत भूमि रही है। आदिकाल से चलती वैदिक प्रणाली और व्यवस्थाओं में विसंगतियों का अनुभव होने से समय-समय पर ऋषियों ने इसे दिशाबोध प्रदान किया। महर्षि वाल्मीकि ने रामायण महाकाव्य रचकर राजा राम के माध्यम सें मर्यादाओं और कर्त्तव्यों की स्थापना का उपदेश दिया। इसी प्रकार महर्षि वेद व्यास ने महाभारत काव्य में गीता का स्तम्भ स्थापित कर योगीराज कृष्ण से सांख्य और योगदर्शन की शिक्षा दी। सामाजिक अवस्थाओं की परिस्थिति के अनुसार इस देश में महावीर, बुद्ध, शंकराचार्य, कबीर, नानक, नामदेव, दयानन्द आदि दिव्य पुरुष आते रहे हैं।

कालान्तर की विकृत अवधारणाओं के फलस्वरूप बुराइयों, कुरीतियों और काल्पनिक मान्यताओं में जकड़े इस देश के समाज को पाखंडी धर्माचार्यों ने हर पत्थर को भगवान और स्थान-स्थान पर देवी देवताओं को ईश्वर के रूप में प्रकट कर धर्म को अपना पेशा और व्यवसाय बना डाला था। उपरोक्त दिव्य पुरुषों की शृंखला में महर्षि दयानन्द प्रकट हुए। स्वामी दयानन्द ने वेदों के ज्ञान की प्रामाणिक व्याख्या की, और आर्य समाज की स्थापना कर समाज का बड़ा मैल धोया।

राजस्थान में जोधपुर, उदयपुर और अजमेर में आते रहने से यहां आर्य समाज का सुधारवादी आन्दोलन प्रारम्भ तो हुआ परन्तु पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश की तरह व्यापक व प्रभावशाली नहीं बन पाया। उत्तरी राजस्थान के अशिक्षित, पिछड़े जाट बाहुल्य समाज में, आर्य समाज के प्रति रुझान तो पैदा हुआ किन्तु अशिक्षा के कारण और अगुआ समाज सेवकों के अभाव में यह आन्दोलन आवश्यकतानुसार फैल नहीं पाया।

अंधकार की घटाओं से घिरे रेगिस्तानी चूरू जिले की तारानगर तहसील के ग्राम गोडास के टीलों में स्वामी दयानन्द के समाज सुधार अभियान को इस भूभाग में आगे बढ़ाने के लिए आज से सतहत्तर वर्ष पूर्व चौधरी भैरारामजी कस्वां का जन्म हुआ। प्रतिभा की लालिमा और समाज सुधार के संस्कार, ये पूर्व जन्म से साथ लाये

थे। अशिक्षा के पर्यावरण में साक्षर होने का प्रशन ही नहीं था। बचपन से कृषि कार्य में जुड़ने से परिश्रमी किसान की दिनचर्या के साथ चौधरी भैरारामजी की चेतन शक्ति पढ़ने और समाज सुधार के विचारों से ओतप्रोत होकर आर्य समाज के द्वार में प्रवेश कर गई। उन्होंने अपने परिवार से कन्याओं को प्राथमिकता देकर शिक्षा प्रारम्भ की। उस जमाने में जाट बिरादरी में पढ़ना तो दूर रहा, पढ़ने-पढ़ाने का नामलेवा भी रूढ़िवादियों के उपहास का पात्र बनता था।

चौधरी भैरारामजी आर्य ने स्वामी दयानन्द कृत ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश और संस्कार विधि के अनुरूप वैदिक संस्कार अपने परिवार में अक्षरशः क्रियान्वित कर अपने रेगिस्तानी क्षेत्र में सामाजिक रूढ़िवादी कुरीतियों व बुराइयों से लोहा लेते हुए कन्याओं को शिक्षित करने का बीड़ा उठाया। इस उम्र में भी वे अपने इस दृढ़ संकल्प को साकार करने के लिए गांव, ढाणी व झौंपड़ी में अनवरत डोल रहे हैं। इस अभियान में वे अपने बेटे-बेटियों को अपने अपने कार्यक्षेत्र से बुला-बुला कर इस कार्य को, उनके सामाजिक ऋण मुक्ति के यज्ञ की अनुभूति कराकर उत्साह और मन से, उन्हें जुटाये रखते हैं।

चौधरी भैराराम जी आर्य एवं उनका परिवार इस मरु प्रदेश में उल्टी चलती युगधारा में एक प्रेरणादायक आदर्श हैं। सामाजिक कुरीतियां-जन्म, विवाह व मृत्यु के अवसरों की फिजूल खर्चियां तथा मादक द्रव्य आदि के प्रयोग तो दूर रहे, उनके यहां इस प्रकार की चर्चा भी असामयिक लगती है। इनके परिवार की बिना दान-दहेज की शादियों का चहुं ओर यशगान किया जाता है। चौधरी साहब की ही तरह इनके सुपुत्र बीकानेर पी.बी.एम. अस्पताल में प्रख्यात वरिष्ठ शल्य चिकित्सक डॉ. हनुमानसिंह कस्वां सेवा, श्रम और समर्पण की प्रतिमूर्ति हैं। अपने सभ्य, सुशील व्यवहार और मृदु अमृतवाणी से डॉ. साहब जन-जन के दिल में बसे हुए हैं। इनकी आंखें गांव के गरीब, बीमार को भाव-विभोर होकर राहत पहुंचाने के लिए लालायित रहती हैं। प्रायः दीनहीन ग्रामीण के दवा पानी की व्यवस्था करते डॉक्टर साहब को देखा गया है।

राजस्थान, पंजाब और हरियाणा के विस्तृत भू-भाग में जिस प्रकार स्वामी केशवानन्द जी महाराज शिक्षा प्रसार और समाज सुधार की अकेले अलख जगाते रहे, उन्हीं के पदचिन्हों पर चौधरी भैरारामजी आर्य अपने क्षेत्र में 'अकेला चलो रे' का झंडा लिये महर्षि दयानन्द सरस्वती के मार्ग पर नारी शिक्षा के लिये समर्पित साधक के रूप में परिश्रमपूर्वक जुटे हुए हैं। तारानगर क्षेत्र में नारी शिक्षा संस्था की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। बारानी एक फसली क्षेत्र, नित अकाल की विभीषिका, साधन-हीन अशिक्षित वर्ग से संबंध तथा बालिका शिक्षा के प्रति अरुचि, इन परिस्थितियों से जूझ कर तारानगर कस्बे में लाखों रुपयों की लागत से विशाल वैदिक कन्या छात्रावास का निर्माण कराना बड़े जीवट का कार्य है। धुन के धनी, ज्ञान यज्ञ के पुरोधा, निष्काम कर्मी चौधरी भैराराम जी आर्य धन्य हैं जिन्होंने उक्त

छात्रावास का निर्माण कर अपनी अमर कीर्ति का प्रकाश पुंज स्थापित कर समाज की अनुपम, अद्वितीय सेवा की है। राजनैतिक प्रपंच और मान मर्यादा के दूषित परिवेश से हटकर अब भी चौधरी साहब संस्था संचालन और विकास में क्रियाशील हैं। उनका जीवन समाज को समर्पित है। परोपकार और निष्काम सेवा ही उनका धर्म है। इस देश के विभिन्न भागों में, समय समय पर समाज सेवा के माध्यम से, गिरते मानवीय मूल्यों की रक्षा के लिए, परोपकारी श्रमशील साधक पैदा होते रहे हैं। यही कारण है कि भारत, भारत बना हुआ है। किसी शायर ने ठीक ही कहा है—

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी,
सदियों रहा है दुश्मन दौरे जहाँ हमारा।
मिश्र, यूनान और रोमा मिट गये सारे जहां से,
फिर भी मगर है बाकी नामो निशां हमारा।

स्वाध्याय से उन्नति

स्वाध्याय करो—आर्य ग्रन्थों का जिनमें मानव की उन्नति ही उन्नति के लेख हैं। जितनी उड़ानें मानव भर सकता है, उतनी अन्य कोई जीव उन्नति नहीं कर सकता। आर्य ग्रन्थ जीवन की जड़ी-बूंटी हैं। वे जीवन जीने के मार्ग बतलाते हैं। ऋषि-मुनियों की कृपा का फायदा उठाओ।

मेरी 80 साल की उम्र है, मैं भागता हूँ, स्वाध्याय करता हूं, परिश्रम करता हूँ, पैदल 20 कोस जा सकता हूं लेकिन मेरे सारे साथी चले गये, यह सब दया महर्षि दयानन्द के आर्य समाज की है।

—आर्यजी

तारानगर के गांधी

श्री रावतमल आर्य

श्री भैरारामजी आर्य को मैं लम्बे समय से जानता हूँ। स्वतन्त्रता संग्राम के समय चूरू जिले में आपसे मिल कर कार्य किया था। स्वाधीनता के पश्चात् उन्होंने सेवा कार्य को अपने जीवन का ध्येय बना लिया। शिक्षा प्रसार, विशेषतः नारी शिक्षा के क्षेत्र में उनके योगदान को समाज भुला नहीं सकता। इन्होंने तारानगर में वैदिक कन्या छात्रावास का शुभारम्भ करके ग्रामीण समाज की सेवा में एक और नया अध्याय जोड़ा है। आप ग्राम गोडास, तहसील तारानगर जिला चूरू के निवासी हैं और इस क्षेत्र के लोग उन्हें 'तारानगर का गांधी' कहकर पुकारते हैं। उनके मन में समाज के प्रति ममता और प्रेम भाव है। संवेदनशीलता है। सुसंस्कृत समाज के निर्माण की उनकी संकल्पना साकार हो सकेगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वे इन्हें दीर्घायु रखें।

फूल का गौरव सौरभ विस्तार

मनुष्य की गरिमा उस पुष्प के समान विकसित सुगंधित होने में है जो कभी बदले में अपेक्षा नहीं रखता, हमेशा सौरभ बाँटता है। प्रातःकाल की पवन लहरी आई और गुलाब को स्पर्श कर चली गई। पत्ते ने हँसते गुलाब को देखा तो आग-बबूला हो गया। बोला—यह भी कोई जीवन है, माली आता है और असमय में ही तुम्हारी जीवन लीला समाप्त कर देता है। इतने अल्प जीवन में भी क्या आनन्द। मैं रोज देखता हूँ; कितने ही फूल खिलते हैं और मुरझा जाते हैं।

गुलाब ने बड़े शान्त स्वर में उत्तर दिया—भाई। जीवन का अर्थ है सच्ची सुगन्ध। इस प्रकार चारों और सुगन्ध को फैलाते हुए आमन्त्रित मृत्यु ही जीवन और अमरता है।

अविस्मरणीय साथी श्री भैराराम आर्य

श्री लालचन्द बेनीवाल

तारानगर तहसील के गोडास गांव में स्वामी केशवानन्दजी की प्रेरणा से प्राथमिक विद्यालय खोलने का निश्चय संगरिया विद्यापीठ की कार्य समिति ने किया, क्योंकि श्री मालारामजी कस्वां ने स्वामीजी से इस विषय में विशेष प्रार्थना की थी किन्तु गोडास के तत्कालीन जागीरदार ने अपने गांव में स्कूल खोलने को मना करने पर 'ढाणी आशा' जो खालसा में थी स्कूल खोला गया।

मुझे इस स्कूल में प्रथम अध्यापक के रूप में कार्य करने का सौभाग्य मिला। स्वामी जी की प्रेरणा मेरे युवा मन को शिक्षा की जोत ग्रामीण जगत में जगाने की देती रहती थी अतः मैं पूरे उत्साह के साथ शिक्षा-प्रचार में लग गया। उसी समय मेरा परिचय श्री भैरारामजी आर्य से हुआ। मेरी स्कूल में उनका भतीजा मालारामजी का लड़का—हरफूलसिंह भी पढ़ता था, उसके द्वारा भी श्री आर्य के विचारों और कार्यों की जानकारी मिलती रहती थी। धीरे-धीरे मेरा सम्पर्क श्री आर्य से गहरा होता गया। मैं उनके सादगीपूर्ण जीवन और वैदिक धर्म के प्रचार तथा रूढ़िवाद को दूर करने के कार्यक्रमों में सहभागी बनने लगा तथा यथा अवसर उनके साथ आस-पास के गांवों में जाता था। उस समय मैंने अनुभव किया कि आर्य के विचारों का एक बार तो लोग विरोध करते हैं किन्तु ठण्डे दिमाग से सोचने पर उनके बताये मार्ग को अच्छा मानते हैं। उन्होंने ढाणी आशा के स्कूल की छात्रसंख्या बढ़ाने, उनमें पढ़ने वाले छात्रों को सब प्रकार की सहायता करने में किसी प्रकार का संकोच कभी नहीं किया।

अध्यापन कार्य में जिन उपकरणों की आवश्यकता होती, चाहे उनकी कहीं से भी व्यवस्था करनी हो श्री आर्य अवश्य कर देते। स्कूल के सारे बच्चों के वे संरक्षक थे। उस समाज के पढ़े हुए कई छात्र आज अच्छे-अच्छे पदों पर हैं। मैं वृद्धावस्था के कारण उनके नाम तो स्मरण नहीं कर पाता किन्तु ढाणी आशा के भाणजे श्री मनफूलसिंह पूनिया, आज राजस्थान में आई.पी.एस. के उच्च पद पर हैं। श्री हरफूलसिंह को आज तारानगर के लोग मास्टरजी के नाम से जानते हैं। उनके तारानगर स्थित घर पर हर समय लोगों की भीड़ लगी रहती है। सभी के कार्यों में वे

सब प्रकार से सहयोग करते हैं। तारानगर के कस्बे के विकास में उनके योगदान को कोई नहीं भुला सकता। ये सब छात्र श्री आर्य की देखभाल ओर प्रेरणा से ही आगे बढ़े हैं।

मैं लगभग सात वर्षों तक ढाणी आशा में रहा। उस समय श्री आर्य के साथ गांव-गांव में शिक्षा प्रचार के कार्य में घूमा उसकी याद कभी नहीं भुलाई जा सकती। मैंने अपने जीवन में ऐसे मित्र विरले ही देखे हैं। जब भी उस समय के जीवन को याद करता हूँ उनकी स्मृति ताजा हो जाती है। अब उनका कार्य क्षेत्र बहुत बढ़ गया है जगह-जगह उनको सम्मानित किया जा रहा है यह सब देख कर दिल को बहुत खुशी होती है कि मेरा एक अजीज दोस्त इतना बड़ा समाज-सेवक बन गया है कि सभी उनका आदर कर खुद को भाग्यशाली समझते हैं।

मैं उनके लम्बे जीवन के लिए ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ।

तो बता-कूण है डैण तू या मैं ?

राजस्थानी भाषा में रिवाज है कि वृद्ध को 'डैण' कहते हैं यदि मुझे कोई डैण कह देता है तो एकदम जवाब देता हूँ कि 'तेरे होते मैं डेण नहीं तू ही डैण है' क्योंकि तू चाय पीता है, बीड़ी पीता है, मुंह में दांत नहीं हैं, सुबह आठ बजे उठता है, सोये-सोये चाय-बीड़ी पीता है फिर कहीं चलने को तैयार हो पाता है। लेकिन मेरे तो बत्तीसों दांत हैं और चाय-बीड़ी भी नहीं चाहिये, सुबह भी जल्दी उठता हूँ—तो बता डैण कुण-तू या मैं ?

—आर्यजी

एक सफल संकल्पी

श्री गणपतराय मड़दा

तारानगर के देहात गोडास में बसे कृषक परिवार में जन्मे भैरारामजी आर्य स्वयं कृषक हैं। लेकिन गांव में रहते हुये इनके मन में समाज सेवा की जो किरण प्रस्फुटित हुई थी, वो आज साकार रूप से हम सबके समक्ष है—वैदिक कन्या छात्रावास के रूप में।

प्रारम्भ में आर्य ने समाज में व्याप्त बाल-विवाह, मृत्युभोज, छुआछूत जैसी कुरीतियों के विरुद्ध अलख जगाया था। उनके ही प्रयासों से इस क्षेत्र में लोगों में व्यापक जागरूकता आई। एक सफल सरपंच के रूप में भी उनका कार्यकाल काफी लम्बा एवं उपलब्धियों भरा रहा। बाद में श्री आर्य ने अपने आदर्शों को मूर्त रूप देने के लिये नारी शिक्षा को अपने जीवन का लक्ष्य बनाया।

एक बार मैंने यों ही मजाक में उनसे कह दिया कि भाईजी आप रोज सुबह अपनी बाड़ी में कार्य करते रहते हैं। आपके पास क्या अभाव है। आपके पुत्र तो बीकानेर में बहुत बड़े डॉक्टर हैं। अब वृद्धावस्था में आराम से उनके पास रहिये। उन्होंने जरा भी बुरा नहीं मानते हुये कहा कि भाई तुम्हारा कहना बिल्कुल ठीक है किन्तु मुझसे बिना मेहनत किये बैठे नहीं रहा जाता। मैं तो अपने गांव में रहकर ही मातृभूमि की सेवा करना चाहता हूँ। यह शरीर जब तक स्वस्थ और काम करने योग्य है मैं अपने सामाजिक दायित्वों में ही व्यस्त रहूँगा।

तारानगर कस्बे के दक्षिणी छोर पर श्री आर्य की एक फ्लोर मिल थी। लेकिन जनसेवा के लिये उन्होंने उस स्थान पर गांवों से पढ़ने आने वाली छात्राओं के आवास एवं शिक्षा के लिये छात्रावास खोल दिया। और स्वयं एक जागरूक संरक्षक की तरह उनकी प्रत्येक आवश्यकता का ध्यान रखने लगे। इसी दौरान उन्होंने अपनी ही तरह के एक साथी को तैयार किया जिनका नाम है रामदत्तजी। श्री आर्य की प्रेरणा से रामदत्तजी भी पूरे मनोयोग से कन्या छात्रावास के काम में जुटे हुये हैं। धीरे-धीरे ग्रामीणों के विश्वास एवं उचित प्रबन्ध के कारण छात्राओं की संख्या बढ़ने लगी और स्थान की कमी महसूस होने लगी।

संयोगवश हमारे ही कस्बे के माहेश्वरी परिवार के स्व. बलदेवदासजी खेमानी के वंशज प्रयागचन्दजी यहां आये हुये थे, जो मेरे रिश्तेदार हैं, उनसे श्री आर्य ने भेंट की और उन्हें छात्रावास के विषय में बताया। उनके पास तारानगर बस स्टेण्ड के समीप एक भूखण्ड रिक्त था। उन्होंने इस पवित्र कार्य के लिये सहर्ष वह जमीन भेंट कर दी। इस कार्य में हरफूलसिंहजी और रामदत्तजी का भारी सहयोग रहा। आज इस स्थान पर वैदिक कन्या छात्रावास की विशाल मंजिल बन चुकी है जिसमें श्री आर्य के बनाये गये कठोर नियमों का पालन छात्रायें सहज रूप में कर रही हैं। छात्रावास का वातावरण सात्विक है। छात्रावास के विशेष माहौल को देखते ही ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन गुरुकुल का दृश्य हो। सुरक्षा व्यवस्था और संरक्षक का दायित्व स्वयं श्री आर्य और सहभागी रामदत्तजी मिलकर देखते हैं। ऐसे संस्कारयुक्त वातावरण में पढ़ने वाली छात्राओं का भविष्य बहुत ही उज्ज्वल है। पूरे क्षेत्र को श्री आर्य पर गर्व है। ऐसे समाजसेवी कभी-कभी पैदा होते हैं, जिनके कारण समूचे क्षेत्र का भाग्य जाग पड़ता है।

सेवा करो, चाहे उसका शतांश ही दो

सेवा, अरे भाइयों, सेवा तीन प्रकार की होती है, तन, मन व धन की। शास्त्रों में लिखा है कि यदि हर कोई शतांस सेवा देने की सोच ले तो यह धरा अमन चमन सी खिल स्वर्ग बन जाये।

वास्तव में आर्यजी तीनों सेवायें आज भी बराबर दे रहे हैं। इस उम्र में भी कस्सी लेकर जब आप शारीरिक परिश्रम करते हैं तो युवक भी दांतों तले अंगुली दबा लेते हैं कि—कमाल है, बूढ़े का।

—रामदत्त आर्य

समर्पित निष्ठावान कार्यकर्त्ता : श्री भैरारामजी

श्री श्रीनिवास खेमानी

श्री भैरारामजी के और मेरे घरेलू, आत्मीय, राजनीतिक, जन-कार्य-संबंधी एवं वैचारिक संबंधों को लगभग 50 वर्ष पूर्ण होने को हैं। प्रारम्भ से लेकर अब तक यह संबंध और भैरारामजी का स्नेही व्यवहार एक जैसा—यथावत ही है। इसे समय और दूरी ने बिलकुल भी प्रभावित नहीं किया।

बीते हुए वो अविस्मरणीय दिवस आज भी यूं आंखों के समक्ष तैर रहे हैं जब मैं स्कूल में पढ़ता था—भैरारामजी से परिचय हुआ। आप मेरे से हर तरह का कार्य करवाते जिसमें प्रतिदिन लिखा-पढ़ी, सलाह-मशविरा करना, ग्रामीण समस्याओं की व्याख्या, फिर उसका समाधान खोजना, जन संगठन बनाकर काम करना और मुझे सदैव उसमें आगे रखना—बस, फिर धीरे-धीरे ऐसी आत्मीयता से बंधते चले गये कि हमारे सारे क्रिया-कलाप साथ होने लगे, हम साथ-साथ आगे बढ़ने लगे। उन दिनों श्री भैरारामजी की कार्यक्षमता और लगन जैसी दृष्टिगत होती थी आज किसी की दृष्टिगत नहीं होती है। किन्तु आप स्वयं उतनी ही ऊर्जा और स्फूर्ति संजोये है। वैसा ही निरन्तर काम, वही लगन और उसी उत्साह के साथ जुटे हुए हैं। आपके ही सहयोग से मुझे उस समय हमारे तारानगर अंचल देहात के सर्वमान्य प्रतिनिधि के रूप में प्रतिष्ठा मिली और मुझे सामाजिक कार्यों के प्रति जागरूकता, यह सब आपकी ही प्रेरणा और साथ के कारण सहजता से मुझे मिला, यह मेरा सौभाग्य है।

कांग्रेस संस्था से जुड़े हम लोगों की रोज बैठक हमारी 'बैठक' में होती थी—कई बार हम लोग सुबह 4 बजे से तो कई बार रात को 12-1 बजे तक राजनीति, समाज विकास-जनकल्याण हेतु योजनायें-युक्तियां बनाते-विचारते रहते थे। श्री भैरारामजी जो सोचते विचारते उसे व्यावहारिक रूप से खुद पर उतार स्वयं आदर्श बनते-प्रथम प्रेरणा के सूत्र बनते थे। आपको राजनीति में फैल रहे संकुचित स्वार्थों से उसी समय से वितृष्णा थी। आपके विचार से अपने क्षेत्र में जिसमें शिक्षा, युवा वर्ग के विकास, सड़क, स्वास्थ्य, जल, किसानों की आम समस्याओं और दिक्कतों को दूर करना, ग्रामों व अंचलों में जागृति पैदा करना, नारी शिक्षा हेतु जागृति घर-घर पहुंचाना, उन्हें साक्षर बनाना इत्यादि इतने बिखरे काम हैं जिनमें लगकर

कार्य करने से ही कोई बदलाव, उन्नति होगी ऐसा आपका मानना था। भैरारामजी की लगन, चरित्र व दृढ़निष्ठा तथा वाहियात बातों में शरीक नहीं होना, गांधीवादी विचारधारा का सतत निर्वाह व राष्ट्र निर्माणकारी कार्यों की ओर लक्ष्यबद्ध रहकर समर्पित भाव से आगे बढ़ते रहना—ये सब आपके व्यक्तित्व के गुण रहे हैं जिनसे सभी प्रभावित रहे हैं और आज भी इस वयस में आप अपनी पूर्ण क्षमता से कार्यरत हैं यह उपरोक्त कथन की पुष्टि है।

स्त्री शिक्षा के लिए आपमें लगन बराबर रही। जब आपके स्वयं के छोटे-छोटे बच्चे पढ़ रहे थे तब आप अक्सर बातें करते थे कि देहात की लड़कियों को किस तरह शैक्षणिक सुविधाएं मिल सकें ताकि वे भी शिक्षित हो सकें। कोई दिन तब ऐसा नहीं होता था जब हम दोनों साथ-साथ तारानगर में होते और इस बाबत चर्चा नहीं होती। हमारे बीच सदैव गहरा सामंजस्य रहा और व्यक्तिगत तौर पर जुड़ते चले गये। आज जो कन्या छात्रावास का मूर्तरूप सामने है वह भैरारामजी के रात-दिन की गहरी लगन व लक्ष्यबोध दृष्टि का ही प्रतिफल है। जीवन भर जो उन्होंने भटक-भटक कर तपस्या की उसी का परिणाम और सुफल है कि उनका स्वप्न, उनके सोच उनके समक्ष ही साक्षात्-साकार हो गये—उन्होंने ही अपने मुताबिक इन्हें आकार दिया और दे रहे हैं। वे मुझे कई बार कहते थे 'श्री निवास लड़कियों के आवास व शिक्षा का प्रबंध कब कराओगे।' आज उस सारे प्रबन्ध व्यवस्था को देखकर मन को जो शांति मिलती है, इसकी अभिव्यक्ति कर पाना मुश्किल है। अनेक वर्षों के अनथक प्रयासों के बाद यह संस्थान आने वाले कल में नारी शिक्षा व जागृति केन्द्र के रूप में राजस्थान का गौरव बनेगा तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

श्री भैरारामजी एक अंचल, देहात का किसान—जिसने अपनी लगन व देश की परिस्थितियों को देखते हुए अपना सम्पूर्ण जीवन सामाजिक कुरीतियों से लड़कर उन्हें मिटाने में अर्पित कर दिया एवं साथ-साथ ही घर की जिम्मेदारी भी पूरी सजगता से निर्वाह कर एक मिसाल कायम की कि यदि मनुष्य चाहे तो सभी कार्यों को कर सकता है। आज जिस दौर से हम गुजर रहे हैं जहां व्यक्ति के स्वार्थ इतने अधिक फैल गये हैं कि स्वयं को स्वयं का ही दूसरा हाथ भी बिना स्वार्थ साथ नहीं देता ऐसे में पूरे समाज और राष्ट्र के प्रति पूर्ण जागरूकता के साथ कर्त्तव्य निर्वाह करना अपने आप में एक कठिन व दुष्कर कृत्य है—ऐसे ही व्यक्ति अपना असर इतिहास पर छोड़ जाते हैं—इतिहास बनाते हैं। मुझे खुशी है कि मेरा साथी श्री भैराराम इस पुनीत यज्ञ कार्य में एक अग्रदूत बनकर कार्यरत है—मेरी शुभकामनाएं हैं उसके कार्य के लिए एवं उनके दीर्घायु जीवन की कामना है।

शिक्षा सन्त श्री भैरारामजी कस्वां

श्री नेतमल सामसुखा

मनुष्य एक सामाजिक इकाई है। समाज मानव की अपरिहार्य आवश्यकता है। समाज व्यक्ति के निर्माण में अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका रखता है। समाज का व्यक्ति के ऊपर बहुत बड़ा ऋण होता है। अतः व्यक्ति को अपने निजी स्वार्थ से ऊपर उठकर ऐसे कार्य करने होते हैं जिनसे वह समाज के ऋण से यत्किंचित् उऋण हो सके। इसी भावना से ओत-प्रोत भैरारामजी का जीवन और उनका कृतित्व समाज के लिये उपयोगी सिद्ध हो रहा है।

मैंने इन्हें और इनके कार्य को निकटता से देखा है। आज के भौतिकवादी युग में 'स्व' से ऊपर उठकर समाज की सेवा में जो अपना योगदान करता है, वह निस्संदेह प्रशंसनीय है। इन सबमें जो महत्त्वपूर्ण है वह है नारी शिक्षा। एक कन्या की शिक्षा समाज में दो परिवारों को सुसंस्कार प्रदान करती है। इसी पुनीत भावना से प्रेरित होकर भैरारामजी ने तारानगर में 'वैदिक कन्या छात्रावास' के निर्माण का यशस्वी कार्य किया है। आज वे इसकी सार-संभाल में अपना अमूल्य योगदान दे रहे हैं तथा पितातुल्य भूमिका निभा रहे हैं। सच ही नारी भगवान के समकक्ष है, जिसमें सृजन शक्ति है। नारी सेवा की प्रतिमूर्ति है और उसे सशक्त, सुशिक्षित, सुसंस्कारित बनाने का कार्य महान् सेवा कार्य है। इससे जहां समाज में नारी को सम्मान मिलेगा वहीं परिवार भी गौरवान्वित होगा और समाज एवं देश भी लाभान्वित होगा।

ईश्वर से प्रार्थना है कि ऐसे महत्वपूर्ण कार्य में संलग्न भैरारामजी आर्य को सदा स्वस्थ एवं प्रसन्न रखें ताकि इनकी सेवाएं हमें सदा प्राप्त होती रहें।

एक अनुकरणीय व्यक्तित्व

डा. कात्यायनी दत्त

श्री भैरारामजी आर्य से मेरा परिचय गत सात-आठ वर्षों से है। आप सदैव साफ-सुथरी सादी भारतीय वेशभूषा धारण किये, सिर पर दयानन्द जी की भांति साफा बांधे दृष्टिगोचर होते हैं। आप एक कर्मयोगी की भांति हैं—अर्थाभिलिप्सा एवं यशोऽभिलिप्सा से सर्वथा असम्पृक्त एवं 'समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः। बालिकाओं, विशेषतः ग्रामीण अंचल की बालिकाओं की शिक्षा के लिए आप अनवरत प्रयास-रत हैं।

सर्वप्रथम आपने अपने गांव 'गोडास' के समीपवर्ती 'ढाणी आशा' में बालिकाओं की प्राथमिक शाला को उच्च प्राथमिक विद्यालय के रूप में प्रोन्नत करवाने के लिए पर्याप्त प्रयत्न किया और उस विद्यालय की कायापलट कर उसे एक आदर्श विद्यालय का रूप दे डाला। तदन्तर तारानगर में अपने निवास स्थान पर ग्रामीण क्षेत्र की बालिकाओं के लिए 'वैदिक कन्या छात्रावास' स्थापित कर उन्हें उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए प्रेरित किया। कुछ वर्षों के उपरान्त श्रीयुत् श्रीनिवास खेमानी के सहयोग से उदारमना खेमानी परिवार से स्थानीय बस स्टैण्ड के समीप भूमि प्राप्त कर कई कमरों का निर्माण करवाया तथा 'वैदिक कन्या छात्रावास' को वहां स्थानान्तरित किया। बालिकाओं की संख्या में क्रमशः वृद्धि होने लगी। आजकल उस छात्रावास में बालिकाओं की संख्या शताधिक है। उन सबके भोजनादि का प्रबन्ध आप सुचारु ढंग से कर रहे हैं। साथ ही बालिकाओं की मनोभूमि में आर्य-संस्कृति के बीज बोने के लिए आप उनसे नित्य वैदिक मन्त्रोच्चारण पूर्वक हवन करवाते हैं एवं प्राणायाम आदि भी करवाते हैं।

पहले ग्रामीण क्षेत्र की बालिकाओं में शिक्षा के प्रति रुचि न के बराबर थी किन्तु अब आपकी सत्प्रेरणा के फलस्वरूप कतिपय छात्रायें तारानगर के 'सरस्वती महाविद्यालय' में स्नातक स्तर की शिक्षा ग्रहण कर रही हैं। कहां तो बालिकाएं कठिनाई से प्राथमिक शिक्षा स्तर तक ही अध्ययन कर पाती थीं और कहां अब स्नातक स्तर तक की शिक्षा ग्रहण कर रही हैं। निःसंदेह यह आप श्री आर्यजी की अपने आप में महती उपलब्धि है।

यह आशा की जाती है कि उक्त छात्रावास में शनैः शनैः सैकड़ों की संख्या में वालिकाएं आयेंगी और शिक्षा ग्रहण कर अपना जीवन सफल बनायेंगी तथा अपने सौम्य स्वभाव एवं सच्चरित्रता की सुरभि सर्वत्र फैलायेंगी।

यदि श्री भैराराम आर्य की भांति अन्य भी कुछ व्यक्तित्व ग्रामीण अंचल की वालिकाओं की शिक्षा में रुचि लेकर उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए कटिबद्ध हो जायें तो राजस्थान के गांवों की निरक्षरता पूर्ण रूप से दूर हो सकती है, और जो राजस्थान शिक्षा के क्षेत्र में वर्तमान में अन्य राज्यों में पिछड़ा हुआ माना जाता है, उसका पिछड़ापन दूर हो जायेगा।

क्या हम विद्यानुरागी एवं दानवीर व्यक्तियों से यह आशा करें कि वे इस पुनीत कार्य में श्री भैरारामजी आर्य का सहयोग कर राष्ट्र का हित सम्पादन करेंगे?

अन्त में प्रभु से प्रार्थना है कि श्री भैरारामजी आर्य की शतादपि अधिक आयु हो ताकि वे राष्ट्र-हित-चिन्तन एवं देश-सेवा करते रहें।

आर्यजी का जोश

वहुत से 'आर्यों' के साथ रहने का मौका मिला। लेकिन इतने जोशीले भाव आज तक कहीं नहीं दिखाई दिये। जिस कार्य को करते हैं—उसमें पूरा जोश व उत्साह उड़ेल देते हैं, चाहे जैसे भी हो। इनका मानसिक, आत्मिक व शारीरिक बल अपूर्व है।

—रामदत्त आर्य

बालिका शिक्षा को समर्पित जीवन

श्री बुधमल हंसावत

समाज के उत्थान एवं अभिवृद्धि में शिक्षा एक अत्यावश्यक सोपान है। बालिका का शिक्षित होना परिवार की प्रगति एवं समृद्धि के लिए अपरिहार्य आवश्यकता है। बालिका शिक्षा के लिए, विशेषकर ग्रामीण एवं कस्बाई क्षेत्रों में, जन चेतना एवं सक्रिय अगवानी आवश्यक है। समाज की रूढ़िवादी प्रवृत्ति तथा सही सोच के अभाव में इस क्षेत्र का पिछड़ापन हर घटक में परिलक्षित हो जाता है।

नि:संदेह ईश्वर संसार के संचालन में अपनी व्यवस्था सटीक ढंग से संजोता है। समाज के इन्हीं घटकों में से जीवन-दर्शन एवं जीवन मूल्यों का संचरण होता है। सच, श्री भैराराम जी कस्वां उसी श्रृंखला की एक अनुपम कड़ी हैं। ठेठ ग्रामीण अंचल में जन्मे व पोषित व्यक्तित्व 'स्व' से ऊपर उठकर निस्पृह भाव से प्रौढ़ावस्था तक अनवरत समाज हितार्थ समर्पित यह व्यक्तित्व हम सबके लिए एक अनुकरणीय उदाहरण है। मैं समझता हूं कि श्री कस्वां जी का चिन्तन एवं सद् आचरण उन्हें इस क्षेत्र में नित-नूतन बल देकर अग्रसरित कर रहा है।

एक शिक्षक के रूप में मैंने शिक्षा के प्रति इनकी भावनाओं को निकटता से अनुभव किया है। आज भी मैं देख रहा हूँ कि इस क्षेत्र में इनकी अभिलाषा एवं आकांक्षा बलवती व ज्यादा प्रखर होती जा रही है। हाथ में अपनी लाठी, साधारण पोशाक में ढका हुआ अपना हंसमुख व्यक्तित्व तथा ओजस्वी वाणी का प्रखर स्वरूप। इसी स्वरूप में बालिकाओं के दादा तुल्य कस्वांजी जब बालिकाओं के संग दिखते हैं, तब मुझे शिक्षा संत केशवानंदजी की स्मृति आती है।

जिस क्षेत्र के माता-पिता अपनी पुत्री को घर से बाहर भेजने में आनाकानी करें, उन्हें बालिकाओं की तहसील स्तर पर शिक्षा के लिए तैयार करना एक बहुत बड़ी उपलब्धि है। अपने स्वयं के नियंत्रण में बालिकाओं के आवास की व्यवस्था अपने घर पर करना, उनकी सुख-सुविधाओं को देखना एवं विद्यालय तक उन्हें पहुंचाना एवं लाना अत्यधिक कष्ट-साध्य कार्य हैं। आज के इस भौतिक युग में अपनी स्वयं की संतान के लिए भी इतना सब कुछ करना मुश्किल एवं श्रमसाध्य

कार्य है, फिर अन्य के लिए तो सोचना भी व्यवहार में परिलक्षित नहीं होता। इन सब में श्री भैरारामजी का समर्पित व्यक्तित्व एक दृष्टान्त है।

स्थानीय वैदिक कन्या छात्रावास के निर्माण में आपका योगदान एवं सक्रिय चिन्तन श्लाघनीय रहा है। अनवरत रूप से बालिकाओं को छात्रावास में भी इनके व्यक्तित्व व कृतित्व का सुफलदायक मार्गदर्शन, सार-सम्भाल, सूझ-बूझपूर्ण निर्देशन एवं दादातुल्य स्नेह मिल रहा है।

श्री कस्वांजी ने शिक्षा के मर्म को अपने जीवन में सही अर्थ में समझा है। अपने प्रभावी जनसम्पर्क, लयबद्ध वाणी एवं निःस्वार्थ भाव से परिपूर्ण गरिमामंडित आचरण से इस ग्रामीण अंचल को जोड़ने की चेष्टा की है। इनके उदात्त एवं अनुकरणीय विचारों का इनकी सन्तानों पर भी तदनुकूल प्रभाव पड़ा है। इनके चिकित्सक पुत्र (जो मेरे अनुज के सहपाठी रहे हैं) की रचनात्मक प्रवृत्ति एवं शैक्षिक रुझान को मैंने महसूस किया है। इस क्षेत्र में इनका (चिकित्सक पुत्र) सराहनीय योगदान है। आज भी वे सक्रिय रूप से जुड़े हुए हैं। श्री कस्वां का सुपुत्र जीतसिंह अपनी स्कूल शिक्षा तक मेरा निकट का छात्र रहा है। जब यह दसवीं कक्षा का छात्र था, उस समय की एक घटना याद आती है। सर्दी के दिन थे। दो-तीन रोज की छुट्टियां थीं। इन छुट्टियों के बाद मैंने मेरे विषय का टेस्ट रखा था। छात्र जीतसिंह छुट्टियों में गांव चला गया था। जिस दिन टेस्ट होना था, उस दिन अचानक मौसम खराब हो गया था। छात्र ने टेस्ट के बारे में अपने पिताजी को बतलाया। श्री कस्वांजी ने प्रतिकूल मौसम के बावजूद भी टेस्ट को ज्यादा महत्व दिया। वे स्वयं सही समय पर पुत्र सहित विद्यालय में उपस्थित हुए। मैं उस दिन इनका शिक्षा के प्रति रुझान देखकर अत्यधिक प्रभावित हुआ। यह एक सामान्य टेस्ट था जिसे मौसम की अनुकूलता न होने के कारण टाला भी जा सकता था। सच, मेरे शिक्षक मन ने श्री कस्वां जी से एक पाठ सीखा। ऐसे समर्पित व्यक्तित्व अपने आप में एक संस्था होते हैं, जो जीवन के अच्छे मूल्यों के संवर्द्धन में अहर्निश जुड़े रहते हैं। ईश्वर इन्हें स्वस्थ रखें ताकि समाज की अनुपम सेवाओं की श्रीवृद्धि के सुन्दर सोपान बनते रहें।

नारी से तीन रिश्ते हैं

नारी जाति से तीन रिश्ते मानता हूं—बड़ी उम्र वाली माता के समान है, बराबर उम्र वाली बहन-मां है और छोटी मेरी बेटी समान है। आर्यों के तीन ही रिश्ते हैं। मैं जवान था तब भी यही विचार थे, ये पूर्व जन्म के संस्कार हैं।

—आर्यजी

धरतीपुत्र : भैरारामजी

श्री पन्नालाल

वर्तमान युग अति स्वार्थ का युग है। इस युग में यदि कोई व्यक्ति थोड़ा सा भी स्वार्थ त्यागकर परमार्थ में लग जाय तो स्तुत्य है। लेकिन कुछ व्यक्तित्व ऐसे भी हैं जो पर-सेवा में सतत लगे रहते हैं, जो मौन रहकर बिना किसी दिखावे के कार्य निष्पादन में जुटे रहते हैं। ऐसे ही बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी श्री भैराराम जी आर्य हैं जिनके कृतित्व की गहरी स्मृति आज भी मेरे हृदयपटल पर ज्यों की त्यों अंकित है। समय और दूरी उसे कभी भी धूमिल नहीं कर सकती।

मैं आपको छठे दशक में ले जा रहा हूँ—सन् 1961 के जुलाई महीने की बात है। विद्यालय ग्रीष्मावकाश के बाद खुल चुके थे। 'स्कूल चलो अभियान' पूरे राज्य में आयोजित हो रहा था। स्वतन्त्रता के बाद शिक्षा के प्रसार में तेजी आ रही थी। 6 वर्ष से 14 वर्ष तक के बालक-बालिकाओं को विद्यालयों से जोड़ने का सरकारी प्रयत्न जारी था। प्रत्येक विद्यालय से अपेक्षा की जा रही थी कि वह अधिक से अधिक संख्या में बालक-बालिकाओं को विद्यालय में प्रवेश दिलावें। उस समय अनौपचारिक शिक्षा के लिये कोई व्यवस्था नहीं थी, हां कुछ स्थानों पर प्रौढ़ शिक्षा के लिये प्रयास जारी था। विद्यालयों की संख्या भी कम थी। सम्भवतः एक पंचायत क्षेत्र में एक प्राथमिक विद्यालय ही था। उस समय श्री आर्य आनन्दसिंहपुरा ग्राम पंचायत के सरपंच थे और मैं ढाणी आशा स्कूल में अध्यापक था। ढाणी आशा आनन्दसिंहपुरा पंचायत के अन्तर्गत ही आती थी। श्री आर्य ने आकर मुझसे कहा कि 'स्कूल चलो अभियान' के अन्तर्गत हमें कुछ रचनात्मक एवं ठोस कार्य करने चाहिएं। मुझे आश्चर्य हुआ कि सरपंच तो प्रायः राजनीति के दलदल में फंसे रहते हैं, उन्हें शिक्षा की क्या चिन्ता? ऐसी सोच इनकी कैसे है? मैंने कहा, आप इस अभियान की क्रियान्विति कैसे चाहते हैं ? तत्काल इन्होंने अपनी पूरी योजना मुझे बतलाई।

योजना बहुत ही ठोस एवं सकारात्मक थी। श्री आर्य ने कहा कि हम रात्रि के समय इस क्षेत्र के एक-एक गांव में जायेंगे और ग्रामीणों के साथ बैठकें करेंगे। दिन में यदि हम जाते हैं तो लोग खेतों में मिलेंगे क्योंकि वर्षा हो चुकी है और बुवाई

का कार्य चल रहा है। मैंने कहा-जैसा आप चाहें, उचित समझें, मैं आपके साथ चलूंगा। 'स्कूल चलो अभियान' के अन्तर्गत हमने प्रथम बैठक 'करणपुरा' गांव में रखी। संध्या के लगभग 8 बजे श्री आर्य ने हाथ में लालटेन लिए तथा सिर पर हारमोनियम रखे विद्यालय के सामने आकर आवाज दी—'मास्टरजी, काम में लाग रह्या हो के' मैं आवाज पहचान, बाहर आया और बोला 'चौधरी जी बड़ी जल्दी आ गये', वे बोले 'मोडे को क्या सम्भालना होता है—झोली डंडा लिए और बस तैयार।' अब हम अंधेरी रात में करणपुरा के रास्ते पर बढ़ते जा रहे थे। उस समय तारानगर तहसील मुख्यालय पर भी बिजली नहीं थी सो ग्रामीण क्षेत्रों में तो होने का कोई सवाल ही नहीं था। चारों तरफ अन्धेरा ही अंधेरा। मैंने कहा, 'सरपंच साहेब यहां बांडी (एक विशेष जाति का सांप) बहुत है, यदि हमें काट जायेगी तो क्या होगा?' तो उन्होंने बड़ा ही सुन्दर उत्तर दिया कि 'इससे बढ़कर हमारा और क्या सौभाग्य होगा। एक पुनीत कार्य के निमित्त यदि हम काम आ जावें तो हमारा सबसे बड़ा समर्पण होगा।' बाड़ों में झिंगुर बोल रहे थे तथा जुगनू अपने मन्द-मन्द प्रकाश से अपनी उपस्थिति बता रहे थे। हम रात्रि के लगभग 9 बजे करणपुरा गांव में पहुंचे। गांव के चौपाल में हम रुक गये और आस-पास के घरों में आवाज देकर लोगों को बुलवा लिया फिर उन्होंने अन्य ग्रामीणों को एकत्र कर लिया। हमने सुविधानुसार मंच का निर्माण प्रारम्भ कर दिया। खलिहान में काम आने वाली तिपाई पर खारिया रखकर मेज बनाई और उस पर एक भाखला बिछा दिया जो मेजपोश से होड़ ले रहा था। गांव वाले शीघ्र इकट्ठे हो जाएँ, इसलिए पेटीबाजे पर श्री आर्य 'ओम जय जगदीश हरे...' की धुन बजाने लगे। पता नहीं कौन सी सत्ता कार्य कर रही थी कि शीघ्र ही चौपाल पर गांव के लोग आ-आ कर बैठने लगे।

विधिवत अध्यक्ष मनोनीत कर हमने सभा की कार्यवाही प्रारम्भ कर दी। शिक्षा के महत्व पर प्रकाश डाला तथा 'स्कूल चलो अभियान' के अन्तर्गत बालक-बालिकाओं को विद्यालय भेजने का ग्रामीणों से आग्रह किया। श्री आर्य ने कहा कि बालकों की अपेक्षा आप बालिकाओं को ज्यादा प्राथमिकता देवें क्योंकि बालिका के शिक्षित होने से दो घर सुधरते हैं। श्री आर्य ने उस समय बालिकाओं की उपेक्षा को दर्शाने वाला एक गीत सुनाया जो आज भी मेरी हृदय तन्त्री को झंकृत कर रहा है। उस गीत के बोल इस प्रकार थे—

बहिनों विद्या बिन रह गई खाली री ।
मैं जामी जद फूट्या ठीकरा ।
भाइयो जाम्यो जद थाली री
विद्या बिन रह गई खाली री ।।

इस गीत को सुनकर सभी भाव-विभोर हो गये और साधारणीकरण की स्थिति में पहुंच गये। उन्होंने अनुभव कर लिया कि बालिकाओं की शिक्षा बालकों की अपेक्षा ज्यादा जरूरी व महत्व की है, क्योंकि हमारी भारतीय संस्कृति में नारी जाति

को विशेष दर्जा दिया है और कहा भी है—'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।' इसका परिणाम यह निकला कि दूसरे ही दिन करणपुरा गांव से कोई 10 बालक-बालिकायें प्रवेश हेतु विद्यालय आ गये। आज उनमें से कुछ सरकारी सेवा व कुछ निजी व्यवसाय में हैं। इसी प्रकार हमने यह 'स्कूल चलो अभियान' पखवाड़ा पंचायत क्षेत्र के अन्य गांवों, यथा गोगरिया, पद्धा, चंगोई, बालिया, खातियों की ढाणी, भाटियों की ढाणी और गोडास में मनाया। इस पूरे अभियान में लगभग पचास बालक-बालिकायें स्कूल में नियमित रूप से आने लगे। मेरी यह मान्यता है कि यह सब श्री आर्यजी के अथक प्रयासों से ही सम्भव हो सका।

आज आर्य समाज को मानने वाले लोगों की संख्या कोई कम नहीं है। हम स्वामी दयानन्द सरस्वती के जीवन पर तो प्रकाश डाल सकते हैं लेकिन उनके द्वारा बताये मार्ग पर चलना बड़ा दुष्कर कार्य है। श्री आर्य की कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं है। गांवों में फैली कुरीतियों, अंधविश्वासों पर आप अनवरत प्रहार करते रहते हैं, चाहे जीवन का कोई भी संस्कार क्यों न हो। श्री आर्य इन संस्कारों के सम्पादन में अपना पूर्ण योगदान भी दे रहे हैं। कर्मकाण्डों के संबंध में जो मिथ्या धारणा लोगों की बनी हुई है उनको श्री आर्य दूर करते रहते हैं। घुटनों तक धोती, मोटी खद्दर की कमीज, सिर पर गमछा बांधे और हाथ में लकड़ी लिए श्री आर्य आजकल वैदिक कन्या छात्रावास, तारानगर के प्रहरी हैं। मजाल है कहीं छात्रावास में कोई गड़बड़ हो जाए। आज इस छात्रावास के माध्यम से कई सौ बालिकाएं जो सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों से सम्बन्ध रखती हैं, अपनी पढ़ाई आगे जारी रखे हुए हैं। मैं ईश्वर से आपके दीर्घायु एवम् सुन्दर स्वास्थ्य की कामना करता हूँ।

सूर्य की कर्मनिष्ठा

अंतरिक्ष ने सूर्य से पूछा, देव! आप सतत ताप की ज्वाला में जलते रहते हैं। एक क्षण भी विश्राम नहीं लेते। इससे आपको क्या मिलता है। सूर्य देव मुस्कराये और बोले 'तात! मुझे स्वयं जलते हुए भी दूसरों को प्रकाश, ताप और प्राण देते रहने में जो आनन्द आता है उसकी तुलना किसी भी सुख से नहीं की जा सकती। अंतरिक्ष को अपनी भूल ज्ञात हुई तथा मालूम हुआ कि जीवन की सच्ची सफलता स्वयं कष्ट उठाकर भी दूसरों को प्रकाश प्रेरणा प्रदान करते रहने में है।

आर्य चेतना के अग्रदूत

श्री मोहनलाल स्वामी

चूरू जिले की तारानगर तहसील के ग्राम 'गोडास' के किसान परिवार में जन्मे चौधरी भैरारामजी कस्वां ने स्वयं मामूली साक्षर होते हुए भी तत्कालीन जीवन की कठिन परिस्थितियों से संघर्ष करते हुए अपने दृढ़-संकल्प, पक्की लगन, अथक परिश्रम, अदम्य साहस, गहन सूझ-बूझ तथा अपनी व्यवहार कुशलता के बल पर अपने परिवार के सभी सदस्यों को शिक्षा-समृद्धि और राजनैतिक उपलब्धियों के उच्च शिखर पर पहुँचा दिया।

आज इनके परिवार में सभी पुत्र, पुत्रियां एवं पुत्रवधुएँ शिक्षा, चिकित्सा आदि अपने-अपने क्षेत्रों में उच्च पदासीन एवं उच्च कीर्तिमान स्थापित किये हुए हैं। वे तारानगर क्षेत्र के लोगों के लिए अनुकरणीय एवं प्रेरणा के केन्द्र बने हुए हैं।

आर्य समाज के विचारों एवं संस्कारों से अभिप्रेरित चौधरी भैराराम जी ने कर्मयोगी की उदात्त भावना से, शिक्षा के क्षेत्र में बालकों की शिक्षा के साथ-साथ बालिकाओं की शिक्षा पर भी सदैव बल दिया है। नारी शिक्षा के प्रति इसी प्रबल भावना के कारण, आर्य विचारधारा एवं चेतना के अनुरूप, इन्होंने अपनी स्वर्गीया पूज्या माताजी के देहावसान पर रूढ़िग्रस्त समाज के लिए अपरिहार्य मृत्युभोज का आयोजन न कर उनकी स्मृति में अपने ग्राम 'गोडास' में कन्या विद्यालय हेतु भवन का 1965 में निर्माण करवाकर उसमें कन्या विद्यालय स्थापित करवा दिया, जिसमें आज ग्राम की सभी बालिकाएँ शिक्षा से लाभान्वित हो रही हैं।

चूंकि समाज का अभी भी बालिकाओं की शिक्षा की ओर विशेष ध्यान नहीं है तथा सुविधाओं के अभाव में पढ़ने में रुचि रखने वाली बालिकाएँ भी अपने भावी अध्ययन को सुचारू रूप से आगे चालू नहीं रख पाती हैं क्योंकि उन्हें अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ता है। इसी कठिनाई को ध्यान में रखते हुए चौधरी भैराराम जी कस्वां ने अपने 'तारानगर' कस्बे में स्थित घर का उपयोग 'वैदिक कन्या छात्रावास' के रूप में प्रारम्भ किया। अपने अध्ययन को आगे चालू रखने की इच्छुक ग्रामीण अंचल की बालिकाएं इस सुविधा का लाभ उठाकर, तारानगर के माध्यमिक विद्यालयों में प्रवेश लेकर तथा इनके द्वारा स्थापित उक्त 'वैदिक कन्या छात्रावास' में रहकर शिक्षा प्राप्त करने लगीं।

कई वर्षों बाद नारी शिक्षा के प्रति इस प्रकार की उत्कृष्ट भावना से प्रभावित होकर तारानगर के दानी सेठ श्रीमान् प्रयागचन्दजी खेमानी परिवार ने ग्रामीण अंचल की बालिकाओं की स्थायी शिक्षा सुविधाओं हेतु 'वैदिक कन्या छात्रावास, तारानगर' के निर्माण के लिए अपनी पुश्तैनी पट्टेशुदा भूमि सहर्ष प्रदान कर दी, जिसमें वर्तमान में चौधरी भैरारामजी आर्य के सक्रिय प्रयास एवं प्रेरणा से ग्रामीण अंचल के दानी-मानी एवं प्रबुद्ध सज्जनों के हार्दिक सहयोग से उक्त खेमानी परिवार द्वारा प्रदत्त भूमि पर 30-40 कमरों का निर्माण करवाकर 'वैदिक कन्या छात्रावास तारानगर' की स्थापना की जा चुकी है। जिसमें प्रतिवर्ष सैकड़ों बालिकाएं अपना अध्ययन सुविधापूर्वक कर रही हैं तथा उच्च परीक्षाफल रखते हुए इस छात्रावास का कीर्तिमान स्थापित कर रही हैं।

इस प्रकार श्री भैरारामजी आर्य 'नारी शिक्षा-प्रसार' संबंधी अपने 'स्वप्न' को आज स्वयं साकार होता देख रहे हैं जिसमें आपकी जीवन की तपस्या फलीभूत हो रही है। यहाँ ग्रामीण समाज की शिक्षा का ठोस आधार तैयार हो रहा है। बालिकाएँ सुशिक्षित एवं सुसंस्कारित होकर, भावी जीवन में जब दूसरे परिवार में जायेंगी, तो वे अपनी शिक्षा का प्रकाश वहाँ पर भी फैलाएँगी तथा अपनी शिक्षा द्वारा संततिं में सुसंस्कार डालेंगी। जिससे शिक्षा के वास्तविक उद्देश्य की पूर्ति होती रह सकेगी।

इस प्रकार शिक्षा प्रसार के प्रति समर्पित भावना से कार्य करते हुए इन्होंने जीवन के विभिन्न पहलुओं को भी आर्य चेतना आन्दोलन से प्रभावित किया है। मृत्युभोज निषेध, बाल-विवाह निषेध, मांसाहार निषेध, दहेज प्रथा उन्मूलन, नशा उन्मूलन, अस्पृश्यता-निवारण, सत्पुरुषों का सम्मान आदि इनके समाज-सुधार आन्दोलन के मुख्य बिन्दु रहे हैं।

इनका व्यक्तिगत जीवन 'सादा रहन-सहन और उच्च विचार' का प्रतीक है। 'कठोर शारीरिक श्रम' तो इनके जीवन का ज्वलन्त जीवन-दर्शन ही रहा है, जिसे इन्होंने जीवन में सुख का आधार माना है। 'मितव्ययता एवं सादगी' इनका स्वभाव ही है जो अनुकरणीय है।

'गोडास' ग्राम से मेरा ग्राम 'ढाणी आशा' पहले तो एक खेत की दूरी पर स्थित था, किन्तु समय की मांग पर आजकल तो दोनों मिलकर एक गांव समान होते जा रहे हैं। इसलिए इनसे मिलने-जुलने एवं इनके व्यक्तित्व को निकट से समझने का तथा 'आर्य समाज' संस्कार-विधि के अनुसार विवाह आदि संस्कारों में इनके साथ भाग लेने का अनेक बार सुअवसर मिलता रहा है। चौधरी भैरारामजी में सद् प्रेरणा की अपार शक्ति विद्यमान रही है जिसे भुलाया नहीं जा सकता। मेरे लिये चौधरी साहब सदैव सम्माननीय रहे हैं।

परमेश्वर इनके सभी शुभ स्वप्नों को साकार करते हुए इन्हें आनन्दमय दीर्घ जीवन प्रदान करें। मैं इनके अच्छे स्वास्थ्य की कामना करता हूं।

भैरजी भाई : एक आदर्श व्यक्तित्व

श्री बस्तीराम पारीक

श्री भैरारामजी आर्य का एक-एक क्षण एवं उनका प्रत्येक कार्य-कलाप दूसरों के हित और सेवा में ही बीता है। जब मैं 25 वर्ष का था, उस समय मैं भी उनके साथ अपनी ग्राम पंचायत का सरपंच बना था। यह सन् 1960 की बात है। प्रधान के चुनाव हेतु हम अनेक सरपंच आपके गांव 'गोडास' गये थे। वहां करीब एक सप्ताह तक उनके साथ रहे। उस दौरान सभी प्रकार की राजनैतिक, सामाजिक व धार्मिक चर्चाएँ व विचार-विमर्श घण्टों चला करते थे और श्री भैराराम सभी विषयों पर इतनी स्पष्ट जानकारी व चिन्तन रखते थे कि हम सब उनको अति आदर की दृष्टि से देखते थे।

श्री भैरारामजी का स्वभाव बहुत ही मृदु है। उस समय वे तारानगर में आटे की चक्की संभालते थे। काम करते-करते आप देश की आजादी की बातें व योजनाओं की विस्तृत जानकारी हम लोगों को देते रहते थे। आपने राजनैतिक व सामाजिक कार्यों में लिप्त होते हुए भी पारिवारिक जिम्मेदारी का कुशलता से एवं सम्पूर्ण मनोयोग से निर्वाह किया। उनका आदर्शमय स्वरूप हमें आज भी प्रेरणा देता रहता है। उस समय चक्की पर जब वे कार्य करते थे, एक छोटा-सा बालक जो स्कूल जाते-आते चक्की आया करता था—हमारी मित्र मण्डली में से भी गुजरता। जब हम उससे बात करते या कुछ पूछते तब बहुत ही मधुर शब्दों में जवाब देता, इतना मीठा बोलता कि हम सब खुश हो जाते थे। उसे देख 'होनहार के होत चिकने पात' कहावत याद आती थी। आज वह कहावत चरितार्थ हो गयी। वही मधुरभाषी होनहार बालक—श्री भैरारामजी का पुत्र बीकानेर का सुप्रसिद्ध डॉक्टर हनुमानसिंह कस्वां है। आज भी अपने मीठे-स्वभाव व बोल से अपने बीमार रोगियों को मुक्त हँसी बांटता फिरता है और आधे रोग का तो इसी से निवारण कर देता है। बाप सरीखा बेटा देख हमें हृदय से बहुत तसल्ली होती है।

इस चुनाव के पश्चात् भैरारामजी फिर राजनीतिक अखाड़े में दुबारा नहीं आये, समाज-सुधार में ही पूर्णतया जुट गये। इन्होंने अपना पूर्ण ध्यान नारी शिक्षा की ओर मोड़ लिया। गांव की नन्हीं-नन्हीं बालिकायें जो सिर्फ घर का चूल्हा-चौका

करती, खेत खलिहानों का कार्य करती, ढोर-डांगर चराती और बाद में ससुराल में फिर इन्हीं कामों की पुनरावृत्ति करती जीवन बिता देती हैं, आज श्री भैरजी के प्रयासों से घरों से निकल 'वैदिक कन्या छात्रावास' तक पहुंचकर अपने घर, खेत व गांव से बाहर की दुनिया को देख रही हैं, देखेंगी—हमारी सांस्कृतिक धरोहर को पहचानेंगी तथा 21वीं सदी की ओर बढ़ते चरण में युवकों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर—घर-चौके की जिम्मेदारी को पूर्ण करते हुए युग निर्माण में बराबर हिस्सा लेंगी। यही भैरजी की इच्छा है—इसी के लिए उनके प्रयास हैं। इस प्रयास में भैरजी ने अपने जीवन में पा सकने वाले न जाने कितने सुखों को तिलांजलि दे दी। आज यही भैरजी चाहते तो अपनी राह बदलकर जीवन के सभी भौतिक-सुख प्राप्त कर सकते थे किन्तु आपने जैसा कहा, वैसा किया। आदर्श की बातें करने वाले ही नहीं अपितु उनको यथार्थ जीवन में उतारकर समाज के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत किया है। उसी का परिणाम है आज उनके प्रयासों से चल रहा तारानगर का 'वैदिक कन्या छात्रावास।'

आपको अपने कार्यों में आज भी वैसे ही जुटा देख कभी आश्चर्य तो कभी बहुत खुशी होती है—सचमुच इनका व्यक्तित्व और हृदय विशाल है। आपने यह सिद्ध कर दिया कि व्यक्ति चाहे तो अकेला ही कुछ भी कर सकता है—चाहे पहाड़ खोदना हो या सागर को नापना। आपने अपना जीवन सार्थक कर लिया। श्री भैरजी के पद-चिह्नों पर चलकर उनके कार्यों को निरन्तर बढ़ाते रहें यही आज के युवा वर्ग की जिम्मेदारी है, जो आगे बढ़ उन्हें लेनी चाहिए तभी श्री भैरजी जैसे व्यक्तित्व का अभिनंदन कहलायेगा। हम भैरजी से प्रेरणा ले कर बालिकाओं को पढ़ने भेजें, नारी की इज्ज़त करें बस यही हमारी कामना है।

भिन्न कार्यों के भिन्न दीपक

नीतिपूर्वक कमाना व उस धन को अपना नहीं समाज का मानकर औसत स्तर का जीवन जीना ही महामानवों की विशेषता रही है। मनीषी जीलानी के जीवन का एक प्रसंग है। वे रात्रि के पहले प्रहर में राज्य के आदेशानुसार एक पुस्तक लिखा करते थे और चौथे प्रहर को अपनी पूजा आराधना में लगाते थे। दोनों काम वे रात में ही करते थे। दिन दूसरे कामों में बीत जाता था। उनके पास दो दीपक थे। जब पुस्तकें लिखते तो एक दीपक जलाते और जब पूजा का समय आता तो दूसरे को जलाया करते थे।

मरुधरा का मेघ : आर्य भैराराम जी

प्रो. डी. सी. सारण

शिक्षा संत स्वामी केशवानंद के सहभागी के नाते श्री आर्यजी 'शिक्षा धाम' संगरिया पधारते रहे हैं। मैं भाग्यवश उन चन्द लोगों में से हूं जिन्हें श्री भैरारामजी आर्य के सतयुगी सर्वमंगलकारी साफ सोच तथा प्रायोगिक मनसूबों से अकूत जीवन ऊर्जा मिली है।

श्री भैराराम कस्वां, अनगिनत सामाजिक समस्याओं की मूल नब्ज पहचानने में और एक सीमा तक उनके निराकरण में भी कामयाब हुए हैं। यह निश्चय ही इस मरुभूमि के इतिहास के पन्नों पर अंकित होना तय है। बालू रेत पर स्थापित बालिका शिक्षा का यह प्रकाश-स्तम्भ अब सदियों तक घर-घर में आर्यजी का यश फैलाता रहेगा। यहां शिक्षा पाकर ये बालिकायें कल की ऐसी भारतीय नारियां बनेंगी जिनसे इस देश की संस्कृति, शिक्षा व संस्कारों का जग में प्रसार होगा। श्री भैरारामजी के इन प्रयासों से इस माटी का जर्रा-जर्रा उनके प्रति कृतज्ञ रहेगा। उनके स्नेह से अपने को हमेशा भरा पायेगा। श्री भैरारामजी इस रेगिस्तान के 'मरु-मेघ' हैं।

वैदिक कन्या छात्रावास निर्माण की परिस्थितियों को देखकर यह कहा जा सकता है कि तारानगर क्षेत्र के लोगों ने श्री भैरारामजी के नेतृत्व में हमें यह स्पष्ट संदेश दे दिया है कि राज और स्थापित व्यवस्था का इंतजार मत कीजिये, स्वयं को सक्षम कर, समग्र चिंतन कर कार्य करिये, सफलता व कार्य-सिद्धि अपने आप आयेगी।

श्री भैरारामजी ने अपने सुकृत्यों से अपनी ऐसी पहचान स्थापित कर ली है कि समाज आज उन्हें उस कंगूरे की भांति आदर की दृष्टि से देखेगा जिसकी आधारशिला मजबूत है। आपके सम्मान में और रचनात्मक आंदोलन को और गति देने समाज के वरिष्ठ व्यक्तियों के सहयोग से यह 'अभिनन्दन ग्रंथ' न केवल आपकी सफलता की कहानी कहेगा अपितु आने वाले कल के होनहार व्यक्तित्वों में ऊर्जा संचारित करेगा, प्रेरणा देगा ताकि आप द्वारा प्रशस्त मार्ग निरन्तर निर्बाध गति से गतिमान रहे और इस मरुधरा पर सफलता के सोपान यूं ही लिखे जाते रहें।

नारी शिक्षा के उत्प्रेरक श्री भैराराम आर्य

डॉ. के. आर. मोटसरा

चौधरी भैरारामजी कस्वां यूं तो हमारे रिश्तेदार हैं, लेकिन मेरे लिये वे एक प्रेरणा स्रोत अधिक रहे हैं। सन् 1975 में जब पहली बार तारानगर में उनसे मिला तो एक सामान्य मध्यमवर्गीय किसान के रूप में मेरे मस्तिष्क में उनकी तस्वीर थी। जिस संदर्भ में मैं उनसे मिलने गया था उस विषय पर हमारी बात जब पूरी हो गई तो इधर-उधर की बात चल पड़ी। थोड़ी ही देर की वार्ता के दौरान उनके विचारों के वेग को सुनकर मुझे लगने लगा कि मैं समाज के एक चिन्तक के समक्ष हूं, जो समाज की समस्याओं पर किसी पारंगत शिक्षक सी शब्दावली तो नहीं जानता लेकिन सामाजिक समस्याओं के प्रति सटीक जानकारी और उनके समाधान हेतु पर्याप्त आत्मबल अपने अन्दर समेटे है।

मैं इतिहास का विद्यार्थी हूं, अतः व्यक्तित्व तुलना एक आदत सी हो गई है। हालांकि, उस वक्त मैं लोहिया महाविद्यालय का छात्र था और सामाजिक समस्याओं और विषयों की गम्भीरता आज की भांति नहीं समझता था। फिर भी मुझे चौधरी साहब ने इतना प्रभावित किया कि जहां भी समाज-सुधार आन्दोलनों या समस्याओं के बारे में पढ़ता था तो उनका चित्र मन में अवश्य ही उभरता था।

सौभाग्य से मैं स्वामी केशवानन्दजी की कर्मस्थली 'ग्रामोत्थान विद्यापीठ' के 'स्वामी केशवानन्द महाविद्यालय' में इतिहास का शिक्षक नियुक्त हुआ। यहाँ आकर स्वामी केशवानंदजी के महान् कार्य और श्रम-तपस्या को देखा। कई बार मस्तिष्क में विचार आता, चाहे क्षणिक सा ही, कि काश! भैरारामजी जैसे व्यक्ति को स्वामीजी के साथ लंबे समय तक काम करने का अवसर मिलता तो चूरू के मरुस्थल में भी एक तपस्वी का त्याग फैलता।

विवाह-शादी या अन्य अवसरों पर चौधरी साहब से जब मिलता तो वे स्नेह के साथ अपनी बातें मुझे बताते, परन्तु उनमें कहीं भी राजनैतिक बातें नहीं होती थीं, न ही व्यर्थ की गप-शप, केवल समाज को अशिक्षा से मुक्त कराने की चाह। उनका 'नारी शिक्षा जागृति' पर विशेष सोच रहा है। इतिहास का शिक्षक बन चुका था अतः तब उनकी बातें और सोच काफी समझने लगा—उन्हें गहराई तक सोचता था।

यह बात 1987-88 की है। चौधरी साहब स्वामी केशवानंद स्मृति चैरिटेबल ट्रस्ट द्वारा मनाये जाने वाले स्वामीजी के निर्वाण दिवस पर 13 सितम्बर को दोनों बार यहां पधारे। शाम को आप मेरे यहां रुके। चौधरी साहब से घण्टों बातचीत के पश्चात् पुनः यह स्पष्ट हो गया कि श्री आर्य साहब का सोच और वे स्वयं व्यक्तिशः कितनी गम्भीरता से 'नारी शिक्षा' हेतु प्रयासरत हैं। मुझे तब यह पूर्ण विश्वास हो गया कि यह कर्मयोगी, प्रभावशाली व्यक्तित्व अपने आदर्शों व सिद्धान्तों को निश्चित रूप से ही प्रभावी तरीके से अपने कार्यक्षेत्र में निष्पादित कर एक ऐसी राह दिखा देगें कि उससे अनेक राहगीर अपनी मञ्जिल पा लेंगे। श्री आर्य से हुई सारी वार्ता के दौरान उन्हें पूर्णतः अपने लक्ष्य हेतु समर्पित देखकर मैं नतमस्तक हो गया। आप ने ही परिवार में वर्षों पूर्व नारी-शिक्षा को जिस समय अनावश्यक समझा जाता था—उस समय इसे प्रारम्भ कर इस क्रान्ति का सूत्रपात करवाया था। उसी तपस्या का फलीभूत रूप 'वैदिक कन्या छात्रावास, तारानगर' हमारे समक्ष है।

चौधरी साहब के कार्यों की प्रशंसा और प्रेरणा लेकर आने वाली पीढ़ियाँ अपना मार्ग प्रशस्त कर पायेंगी ऐसा शुद्ध व पावन वातावरण उनके 'वैदिक कन्या छात्रावास' में आज देखने को मिलता है। यह हमारी प्राचीन संस्कृति, परम्परा एवं वैदिक रीतियों का एक अद्भुत संगम स्थल बन चुका है। यहां की भूमि आने वाली कल की उन्नत पौध के प्रति हमें पूर्ण आश्वस्त करती है।

श्री आर्य साहब के सम्मान में चौधरी बहादुरसिंह भोबिया स्मृति ट्रस्ट द्वारा 9 अगस्त, 1995 को उन्हें दिया गया 'समाज सेवा पुरस्कार' निश्चय ही समाज द्वारा भेंट किया गया श्रद्धा व सम्मान का प्रतीक है।

हृदय और जीभ—असुर भी देव भी

एक जिज्ञासु ने पूछा, भगवान ! मनुष्य जीवन अलंकृत करने वाले देवता कौन है? ज्ञानी ने उत्तर दिया (1) हृदय (2) जीभ। और पतित करने वाले दो असुर-ज्ञानी ने इस बार भी वही उत्तर दिया। (1) हृदय (2) जीभ। सो कैसे? जिज्ञासु ने समाधान जानना चाहा। ज्ञानी ने कहा—मधुर सम्भाषण और सुसंस्कृत आचरण जीभ और हृदय के ही अनुदान हैं यदि वह जीवन को यह दो वस्तुएँ दे देते हैं तो जीवन कृतार्थ हो जाता है पर यदि जीभ बोलने लगे कटु और हृदय में छा जाये कुत्सा, तो वही मनुष्य को नारकीय परिस्थितियों में झोंक सकते हैं।

ड्रोप क्या होता है?

श्री गुमानसिंह सहारण

श्री भैरारामजी आर्य एक आदर्श पुरुष हैं। मनस्वी हैं। श्रेष्ठ विचारों का चिन्तन कर उनका प्रसार करना ये अपना कर्त्तव्य समझते हैं। समाज में व्याप्त अशिक्षा विशेषकर नारी शिक्षा, कुरीतियां, दहेज प्रथा, रूढ़िवादिता आदि का आप सदैव विरोध करते रहे हैं।

प्रभावशाली व्यक्तित्व भी इनको दबा पाने में असमर्थ रहे हैं। इसका एक उदाहरण मुझे याद है—

पंचायत समिति तारानगर में एक बार तिजौरी से रुपयों की चोरी हो गई। उस समय श्री आर्यजी पंचायत समिति के सदस्य थे। मामला पुलिस में भी गया तथा पंचायत बैठकों में तो इसकी चर्चा होनी स्वाभाविक ही थी। चोरी का संदेह पंचायत समिति के किसी कर्मचारी पर होने लगा, तब अधिकतर सदस्य इस मामले को रफा-दफा करना चाहने लगे। प्रस्ताव आया कि इस मामले को 'ड्रोप' कर देना चाहिये। इस अवसर पर एक मात्र श्री भैरारामजी ही यह कहने का साहस कर सके कि 'ड्रोप क्या होता है? इस प्रकार के चोरी जैसे मामले को ड्रोप करना चाहते हैं। इससे तो पता चलता है हमारा इस पंचायत समिति एवं समाज का सारा मामला ही ड्रोप हो जायेगा। चोरी सिर्फ चोरी है। हमें व्यक्ति विशेष से ऊपर उठकर हमारे दायित्वों का निर्वाह करना चाहिये फिर हम तो पंचायत के सदस्यों में हैं। क्या जहां न्याय होना चाहिए वहीं पर अन्याय होगा? क्या झूठ व चोरी को दबायेंगे?' उनकी बात सुनकर पंचायत समिति के सदस्यों में चुप्पी सी छा गई। उन्हें भूल का अहसास हो गया। इस प्रकार एक सीधे-सादे कृषक ने कर्त्तव्यबोध कराकर सबको स्तब्ध कर दिया। ऐसे हैं 'श्री भैरजी' जिन्होंने कभी भी अपनी आचरण संहिता में बने नियमों का अक्षरोक्षर पालन करने में क्षणिक भी लापरवाही नहीं बरती।

एक आदर्श सरपंच

श्री रामकुमार शर्मा

मुझे मेरे सेवाकाल में अक्टूबर 1959 से अगस्त 1962 तक तारानगर पंचायत समिति में विकास अधिकारी पद पर कार्य करने का अवसर मिला। 1959 में ही राजस्थान में पंचायत राज व्यवस्था का प्रारम्भ हुआ था। अतः जनप्रतिनिधियों और अधिकारियों में पंचायती राज के प्रति काफी उत्साह था। विकास अधिकारी होने के कारण मेरा क्षेत्र के सरपंचों से विशेष संपर्क रहता था। उसी दौरान चौ. भैरारामजी आर्य निवासी 'गोडास', जो ग्राम पंचायत आनंदसिंहपुरा के सरपंच भी थे, उनसे भी बार बार संपर्क होता रहा।

तारानगर पंचायत समिति चूरू जिले का पिछड़ा क्षेत्र था। उस समय वहां न आवगमन के साधन थे, न सिंचाई के साधन थे, न ही ग्रामीण विकास की ओर किसी का ध्यान था। केवल वर्षा आधारित कृषि के कारण वहां प्रायः अकाल की स्थिति रहती थी। 1947 में स्वतन्त्रता तो मिल ही चुकी थी लेकिन इस क्षेत्र की जागीरदारी प्रथा से भी छुटकारा मिलने के कारण लोगों में काफी उत्साह था। लेकिन साथ-साथ पीढ़ियों से दबी हुई जनता में कुछ उच्छृंखलता भी आजादी के कारण होना स्वाभाविक था और इसकी झलक मुझे जनप्रतिनिधियों में भी स्पष्ट दिखाई देती थी। मुख्यतः अनेक सरपंच इस अवसर का अधिक से अधिक लाभ अपनी स्वार्थपूर्ति के लिये लेने के इच्छुक दिखाई देने लगे। क्षेत्र के सभी सरपंच पंचायत समिति के सदस्य थे। विकास कार्य उन्हीं के माध्यम से कराये जाते थे।

लेकिन भैरारामजी आर्य सबसे अलग किस्म के सरपंच थे। एक साधारण किसान होते हुये भी वे बड़े सौम्य, हँसमुख, सादगीपसंद और वास्तविक विकास कार्यों में रुचि लेने वाले थे। क्षेत्र में शिक्षा का प्रसार हो, इसके लिये प्रारम्भ में ही उनके भीतर एक टीस थी। वे गांधीवादी विचारधारा से पूर्णतः ओत-प्रोत थे। मुझे अपने विकास अधिकारी के कार्यकाल में भैरारामजी से बहुत सहयोग मिला। उनके क्षेत्र में कभी भी विकास कार्यों के संबंध में कोई शिकायत नहीं मिली।

श्री भैरारामजी क्षेत्र के बच्चे-बच्चियों को शिक्षा के प्रति प्रोत्साहित करते थे। ग्रामीणों को अपनी बच्चियों को विद्यालय भेजने के लिये आग्रह करते रहते थे।

उन्होंने अपने बच्चों को भी शिक्षा प्रदान करने का हर संभव प्रयत्न किया। इसी के परिणामस्वरूप उनके पुत्र श्री हनुमानसिंह कस्वां डाक्टरी की उच्च शिक्षा प्राप्त कर आज बीकानेर के पी.बी.एम. अस्पताल में सफल सर्जन के पद पर कार्यरत हैं। उनकी पुत्रियाँ भी राजकीय सेवा में हैं।

अपनी सीमित आय के बावजूद भैरारामजी ने अपने समस्त पारिवारिक दायित्वों का सफलतापूर्वक निर्वाह किया और साथ-साथ जीवन भर समाजसेवा विशेषतः स्त्री शिक्षा के क्षेत्र में अपने इलाके में महत्त्वपूर्ण कार्य किया।

तारानगर से स्थानांतरण के बाद मेरा भैरारामजी से विशेष मिलना नहीं हो पाया। लेकिन उनकी गतिविधियों के बारे में निरंतर जानकारी मिलती रही। पिछले कुछ समय से तारानगर में छात्राओं के लिये हॉस्टल का निर्माण कार्य उनका अतिमहत्व का कार्य है। ग्रामीण क्षेत्र की बच्चियों को इससे उच्च अध्ययन में काफी सहायता मिल रही है। वास्तव में समाज में ऐसे ठोस सेवाकार्य करने वाले व्यक्तियों का निरन्तर अभाव रहता है। मुझे आशा है कि हमारे नौजवान एवं सेवानिवृत्त बुजुर्ग श्रद्धेय भैरारामजी से प्रेरणा लेकर अपने क्षेत्र में ऐसी अनेक संस्थाओं का निर्माण करेंगे, जिससे हमारा समाज व जीवन एक नये आलोक से जगमगा उठे। मैं आदरणीय भैरारामजी के दीर्घ जीवन की कामना करता हूँ।

भंडा फोड़ दो

'अरे भाइयो! आर्य बनो!! महर्षि दयानन्द का ऋण उतारो। उसने हमारे लिये जान की बाजी लगा दी और हम डूबते जा रहे हैं। जहां कहीं भी बुराई नजर आती है—भंडा फोड़ दो।' जहां कभी कहीं कोई उत्सव होता है तब आर्य जी कहते हैं—'कन्याओं को नचा रहे हो, क्या यह भी कोई स्वांग है? देश का भट्टा बैठ जायेगा। बच्चों के संस्कार बिगड़ जायेंगे। हम तो पढ़े-लिखे नहीं हैं। भाषण नहीं आता तो मन ही मन में रह जाती है। 'गूंगे को सपनो भयो सोच-सोच मुस्कराय' वो बात मेरी है नहीं तो उधेड़ कर रख दूं, सब घोटालों व बुराइयों को।'

—आर्यजी

मेरे हँसोड़ मित्र : भैरारामजी

श्री रामेश्वरलाल शर्मा

श्री भैरारामजी चौधरी 'गोडास' से मेरी मुलाकात तारानगर पोस्ट ऑफिस में 1958-59 में हुई। उन दिनों मेरी नियुक्ति तारानगर ही थी। एक दिन मैं ऑफिस में अपने साथी श्री नागरमल से वात कर रहा था कि 'सत्यनारायणजी की कथा करवानी है, सो खीर-पूरी भोजन बनाना है, दूध का प्रबन्ध करना होगा।' उसी समय भैरारामजी किसी कार्यवश पोस्ट आफिस आये हुए थे। वात सुन वे बीच में वोले—'शर्माजी, दूध का तो प्रबंध हो जायेगा—यदि 20 या 30 किलो चाहिये। हां इस एवज में मुझे भी भोजन करवाना होगा।' यह सव उन्होंने हँसी-मजाक में कह दिया। मैंने भी यह जवाव दिया—'ठीक है, आपकी शर्त मंजूर है।' उन्होंने नागरमल जी को वोल दिया कि जिस दिन दूध चाहिये हमारे गांव 'गोडास' आकर दूध ले जाना और न्यौता दे जाना। मजाक मजाक में हुई वात फिर तय हो गई और नियत तिथि पर दूध भी ले आये, न्यौता दे आये तथा भैरारामजी खाने पर भी आये और इस तरह हमारी दोस्ती की आधारशिला रख दी गयी जो अव तक उसी हँसी-मजाक के खुशहाल माहौल को लिए चल रही है।

मुझे याद है कि वे जब भी मिलते, कहते कि 'मेरे गांव आना, देखो, कैसा है?' एक दिन फिर ऊँट भेज ही दिया। ऊंट की सवारी का अभ्यास था नहीं सो गांव पहुंच तो गया पर थकान हो गई, लेकिन श्री आर्यजी ने वह भावभीनी आवभगत की कि जिसकी आज भी याद हूवहू स्मृति में है—'मेरी थकान उसी क्षण दूर हो गई।' उसी दौरान वात ही वात में उन्होंने कहा कि 'वावू ! यहां गांव के लिए भी कुछ कर सको, तो करो।' मैंने कहा—'मैं क्या कर सकता हूँ? क्या कावलियत है मेरी?' श्री आर्य, जी वोले—'नहीं सव कर सकते हो, जरूर कर सकते हो वस अपने पर विश्वास रखो—फिर देखो।' 'ऐसा है तो मैं जरूर करूंगा।' मैंने कहा। 'तो फिर भैया यहां डाकखाना खुलवा दो, कोशिश करो।' वे वोले। मैंने कहा—'जरूर, मैं प्रयास करूंगा।'

फिर, जैसी सरकारी कार्यों की कार्यवाही होती है, मैं करता रहा फिर प्रयास रंग लाया और 'गोडास' में डाकघर खुलवा दिया। चूंकि वहां पत्र न के वरावर आते

थे सो श्री आर्यजी ने अपने सभी परिचित-सेना में भर्ती जवानों को पोस्टकार्ड-लिफाफे भिजवाने लगे। ताकि डाकखाना कार्यरत दिखाई देता रहे। वे अपने पैसों से पत्र खरीद लोगों से डलवाते ताकि वे गिनती में आयें। गांव में डाकखाना चलता रहे उसके लिए वे निरन्तर प्रयास करते रहते और स्वयं के पैसे लगाते रहे। हालांकि तब वे स्वयं तारानगर में रहते थे। साधारण ग्रामीण वस्त्रों में लिपटा मेरा यह मित्र जितना ऊपर से निरा ग्रामीण और साधारण दिखायी देता था, अन्दर से इसके विपरीत ढेर सारी भावनाओं को संजोये—गांव के विकास के लिए समर्पित और अपने कर्त्तव्यों के प्रति सजग भारतीय था। जिसके अन्दर कुछ करते रहने की ललक स्पष्ट झलकती थी। धीरे-धीरे कुछ ही सालों के अन्तराल के बाद यही मरा अजीज जब 'तारानगर का गांधी' कहलाने लगा तो मुझे भी गौरव होने लगा —'मेरी मित्रता का।'

एक बार मैं तथा श्री मोहरसिंह एम.एल.ए. चूरू जो मेरे मित्र थे और सरदारशहर में श्री रूंगटा जो उन दिनों चूरू एस.डी.एम. थे, के भाई की शादी में मिले। शादी के बाद लौटते समय मुझसे पूछा कि 'चलते हो ? तारानगर की तरफ जाऊंगा।' मैं साथ हो लिया। रास्ते में एक छोटे से गांव में रुके। गांव का नाम तो याद नहीं, वहां एक प्राथमिक स्कूल का उद्‌घाटन श्री मोहरसिंहजी के हाथों से होना था। पता लगा कि स्कूल का निर्माण श्री भैरारामजी आर्य के प्रयासों से ही सम्भव हुआ है। उस दिन उद्‌घाटन पर श्री आर्यजी ने ठेठ राजस्थानी में शिक्षा प्रसार और उसके महत्व पर तथा ग्रामीण आचरण में उसकी आवश्यकता पर जो भाषण दिया उसे सुनकर सभी हतप्रभ रह गये। उनका चिन्तन कितना स्पष्ट और श्रवणीय था, बस सुनते ही बनता था। सभी वहां इन पर मंत्र-मुग्ध हो गये।

श्री आर्यजी कार्यों से निरन्तर बड़े होते गये किन्तु उन्होंने अपना वही पुराना विनोदी अन्दाज नहीं छोड़ा। वही लहजा, वही मस्ती तथा वही की वही उनकी मस्त कर देने व दिल को गुदगुदा देने वाली आदत, वैसी ही बनी रही—मुझे याद है अभी कुछ साल पूर्व ही मैं और मेरी पत्नी बीकानेर आ रहे थे। रास्ते में कहीं बीच गांव से श्री आर्यजी बस में आ गये—मुझे देख कर बोले—'आज जोड़े से सवारी कहां चली?' मैंने कहा 'बीकानेर।' तो बोले—'मुझे भी ले चलोगे।' मैंने कहा—'मेरे कन्धों पर तो बैठोगे नहीं, चले चलो।' वे फिर बोले 'तो भाई, सीट पर तो बैठासी।' और हंस दिये। सारा रास्ता यूं ही हंसी-खुशी बातों में न जाने कब कट गया। बीकानेर स्टेट लाइब्रेरी के पास ही बस पहुंचने से पहले बोले, 'यार, तुझ से एक बात पूछता हूं—यहां एक डॉक्टर से मिलना है, जानते हो तो उसका पता बतलाओ।' मैं उत्सुकतावश और उनके सहयोग में भागीदार होने के लिए तुरन्त बोला—'जानता होऊंगा तो जरूर बतलाऊंगा' नाम पूछा, तो एकदम सहज हो बोले कि—'एक डॉ. हनुमानसिंह कस्वां है, जानते हो तो, पता बता दो, नहीं तो मिलवा दो।' मुझे जोर

की हँसी छूट गई। और वे अपनी मस्तीभरी चाल में एक मोहक सी हँसी मेरी ओर छोड़ स्टेट लाइब्रेरी के पास स्टेण्ड पर बस से उतर गये।

श्री हनुमान कस्वां उनके पुत्र हैं और बीकानेर में बेहद लोकप्रिय डाक्टर सर्जन हैं की 'यथा पिता तथा पुत्र' जो भांति मधुरभाषी, आदरभाव रखने वाले और अपने कर्त्तव्य की ओर सजग व जागरूक व्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित हो चुके हैं।

श्री भैराराम तारानगर में वैदिक कन्या छात्रावास का निर्माण करवा रहा है। 80-100 के लगभग छात्राओं को शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध आज भी भाग-दौड़ कर कर रहा है—यही उसकी जीवन्तता का प्रमाण है। मेरा चूंकि लिखने का कार्य नहीं रहा है, न लेखक हूं, ना ही कोई चिन्तक मगर मैंने जैसा देखा, सुना और श्री आर्य के साथ रहकर महसूस किया निश्चित रूप से निस्वार्थ भाव से वर्षों से एक ही लक्ष्य लेकर चला मेरा यह मित्र 'तारानगर का गांधी' ही है।

जो लेता है, वो कैसा नेता?

टी.वी., रेडियो, स्वांग और सिनेमा में यदि अच्छी-अच्छी बातें सिखाई जायें तो भावी पीढ़ी का कल्याण हो जाये और देश दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति करे। यदि गर्भवती महिलायें इनको देखें तो जैसा देखेंगी वैसी ही संतानें पायेगी। अरे देश के नेताओं, ठेकेदारो ये अश्लील तमाशें बन्द करो—दिखाओ तो कुछ राममय आदर्श की बात। नहीं तो हटा दो—इनको। नेता गलत हो तो क्या जरूरत है उसकी। जो अपना घर भरे—वो कैसा नेता रे! नेता संन्यासियों जैसी प्रवृत्ति का बनाओ सिर्फ इसी प्रवृत्ति वाले को नेता बनने का अधिकार है। जो लेता है, वह किसी को क्या देगा? जागो रे! देश के आर्य वीरो और दिखादो जवानी की चमक, जरूरत है अब तुम्हारी।

—श्री आर्य

अनथक समाज सुधारक

श्री शिवचन्द सोलंकी

चौ. भैरारामजी आर्य उत्साही, परिश्रमी, दृढ़निश्चयी, ध्येयनिष्ठ और बहुत ही निराले व्यक्तित्व के धनी हैं। मैं सतरह वर्ष की उम्र में उनके संपर्क में आया था, जब वे आर्यसमाज के प्रचार कार्यक्रम में भाग लेने तारानगर आये हुये थे। यह आजादी से पूर्व की बात है। वे कुरीतियों और अंधविश्वासों के खिलाफ अपने क्षेत्र में निरंतर सक्रिय रहे थे। आजादी के पश्चात् जब देश में पंचायत राज कायम हुआ तो चौधरी साहब अपनी पंचायत के प्रथम सरपंच चुने गये। इस पंचायत में सोलह ग्राम थे। वे अक्सर मुझे अपने कार्यक्रमों में साथ रखते थे। हरिजनों, वंचितों के मोहल्ले में शराबबंदी, कुरीतियों के विरुद्ध प्रचार में साथ ले जाते थे।

उन दिनों रूढ़िवादियों का बहुत दबदबा था और छुआछूत काफी थी। हरिजनों के ब्याह-शादी, जन्म संस्कार इत्यादि के कार्यों को पंडित नहीं कराते थे। भैरारामजी स्वयं हरिजनों के घर जाते। विवाह, जन्म इत्यादि के संस्कार करवाते थे। उनमें स्वाभिमान और निर्भयता की भावना जगाने का कार्य करते थे।

चौधरी साहब के इन कार्यों से उनकी बिरादरी वाले नाराज रहते। लेकिन चौधरी साहब ने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। ग्राम धीरवास तहसील तारानगर में हरिजनों की आबादी ज्यादा थी। वहां एक पक्का जोहड़ था। जिससे गांव के लोग हरिजनों को पानी स्वयं नहीं भरने देते थे। गांव के लोग ही उनके पात्रों में पानी डालते, जिसका वे उपयोग करते। चौधरी साहब ने गांव में एक हरिजन सम्मेलन रखवाया, जिसमें बाबू जगजीवनराम को आमंत्रित किया गया। व्यस्तता के कारण बाबू जगजीवनराम नहीं आ पाये लेकिन उन्होंने अपने स्थान पर उस समय राज्य सरकार के मंत्री संपतरामजी को भेजा। सम्मेलन बहुत सफल रहा और गांव में हरिजन और सवर्ण जाति वाले सब बराबर जोहड़ से पानी पीने लगे।

इसी प्रकार आचार्य विनोबा के नेतृत्व में जब भूदान यज्ञ आंदोलन चला, श्रीमान गोकुल भाई भट्ट तारानगर पधारे थे। उस समय चौधरी साहब ने गांव-गांव उनके साथ जाकर भूदान कार्य में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लिया। लोगों ने बहुत भूमि दान की। जब गोकुल भाई भट्ट वापिस जाने लगे तो उन्होंने लोगों से कहा कि

श्री भैरारामजी आर्य जैसे कार्यकर्ता होने चाहियें। अगर ऐसे लोग हर गांव में हों तो हमारे गांवों की स्थिति बहुत बेहतर हो जायेगी।

इन्हीं वर्षों में तारानगर में कांग्रेस द्वारा सफाई अभियान चलाया गया। विशेषतः हरिजन मोहल्लों में सफाई की गई। शहर के दक्षिण में स्थित तालाब की भी सफाई हुई। भैरारामजी सबसे पहले उठकर तैयार हो जाते और सब श्रमदानी कार्यकर्ताओं को इकट्ठा करते। यह कार्य महीनों चला लेकिन चौधरी साहब एक दिन भी अनुपस्थित नहीं रहे।

उनका स्वभाव बहुत ही मजाकिया है। उनका छोटा पुत्र जीतसिंह पढ़ाई में कुछ कमजोर सा था, लेकिन जीतसिंह की पत्नी एम.एस-सी., एम.एड पढ़ी हुई थी। और डॉक्टर हनुमानसिंह की धर्मपत्नी पढ़ाई में कमजोर थी। मैं एक दिन चौधरी साहब के पास उनके घर बैठा था। उन्होंने कहा एक बात बताऊं। मैंने कहा, जरूर आप कोई मजाक करेंगे। उन्होंने कहा नहीं, सुनो तो। मैंने कहा कहिये। उन्होंने उस समय कहा कि जेठ-बहू कमायेंगे और देवर-भाभी खायेंगे। मैं बहुत देर हँसता रहा।

एक बार मैंने उनसे कहा कि चौधरी साहब अब आपने बहुत सामाजिक कार्य कर लिया, कुछ आराम करो। उन्होंने तुरन्त कहा कि मेरा एक काम तो अभी बाकी है, वह तो मुझे अवश्य ही करना है। आर्य समाज में एक भजन है, जरा सुनो—'बहनों विद्या पढ़कर पहले अपना आप सुधार करो, गिरे हुए इस भारत का सब मिलकर बेड़ा पार करो।'

फिर कहने लगे कि जब तक देश की नारी शिक्षित नहीं होगी, भैराराम तो नारी शिक्षा के कार्य में ही लगा रहेगा। यह मेरा पक्का इरादा है। उन्होंने अपनी पुत्री को आस-पास कोई कन्या विद्यालय नहीं होने के कारण बगड़ में शिक्षा प्राप्ति के लिये भेजा। एक बार पुत्री अमरावती ने कहा कि मैं आगे पढ़ना नहीं चाहती, क्योंकि मैं कमजोर हूँ। मैंने यह बात चौधरी साहब को बताते हुए कहा कि जब वह पढ़ना नहीं चाहती तो उसकी पढ़ाई छुड़ा दीजिये। उन्होंने मुझे आड़े हाथों लिया, बोले, 'पागल, हमारा आर्य समाज का उद्देश्य है लड़का-लड़की सब बराबर हैं और जो दोनों को शिक्षा दिलाये वह पक्का आर्य समाजी है।'

इसके बाद चौधरी साहब नारी शिक्षा के लिये आस-पास के गांव-गांव घूमकर देहातों में प्रचार करने लगे। अपने घर में बालिकाओं के लिये छात्रावास शुरू कर दिया। उनके मन में हमेशा यही लगन रहती कि एक विशाल छात्रावास हो जिसमें गांव की लड़कियाँ रह कर शिक्षा प्राप्त करें। उनके प्रयासों से ही आज तारानगर में आर्य कन्या छात्रावास बड़ी इमारत में सुचारु रूप से चल रहा है। सैकड़ों छात्रायें वहां रहकर अपनी पढ़ाई कर रही है और भारतीय संस्कृति के अनुरूप दैनिक जीवन चर्या चौधरी साहब के कुशल निदेशन में रहकर सीख रही है। इनका यह एक काम ही इतना महत्त्वपूर्ण है, जिसका प्रभाव हमारे समाज में आगामी पीढ़ी के

निर्माण में व्यापक रूप से पड़ेगा। समता के संदेशवाहक, संस्कार केन्द्रों के निर्माता, निःस्वार्थ समाज सेवक हमारे बीच ऐसे व्यक्ति हैं जिन्हें कुर्सी, पैसा, पद, प्रतिष्ठा, किसी बात की चाह नहीं है। ऐसे महान समाजसेवी के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

भक्त भैरजी

मैं आश्चर्य करता हूं कि आर्यजी को कम से कम 200-300 भजन कंठस्थ हैं। वे सुबह-सवेरे नित्य 4 बजे तक अकेले ही अपनी मस्ती में गाते रहते हैं। ईश्वर भक्ति के वो क्षण अद्‌भुत होते हैं। भजनों के प्रति इतना प्रेम इनकी ईश्वर भक्ति दर्शाती है। आपको संस्कृत के वेद मंत्र भी कण्ठस्थ हैं। इनकी इतनी स्मृति अपने आप में आश्चर्य है।

—रामदत्त आर्य

स्वदेशी के प्रबल पक्षधर : भैरारामजी

श्री चुन्नीलाल कस्वां

मैं बाल्यकाल से श्रद्धेय भैरारामजी आर्य को जानता हूँ। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का मेरे जीवन पर भी प्रभाव पड़ा है। वे तारानगर क्षेत्र में ऐसे पहले देहाती व्यक्ति हैं जिन्होंने अपनी पुत्रियों को भी उच्च शिक्षा प्रदान की। वे नारी शिक्षा के प्रबल पक्षधर हैं। हमारे क्षेत्र में दहेज, मृत्युभोज, धूम्रपान, मदिरापान, विवाह-शादियों में आडम्बर इत्यादि बुराइयों को उन्होंने प्रारम्भ में ही समझ लिया था तथा इन कुरीतियों के विरुद्ध संघर्ष में स्वयं को समर्पित कर दिया। वे अपने जीवन में पूर्णतया स्वदेशी हैं, विदेशी वस्तुओं के उपयोग का सदा विरोध करते हैं। श्रद्धेय भैरारामजी आर्य हमेशा अपने हाथ से सूत कातकर उसके कपड़े बनवाकर पहनते हैं। सादगी पसंद, मधुरभाषी भैरारामजी को मैंने किसी भी परिस्थिति में क्रोध में नहीं देखा।

वे 20 वर्ष तक पंचायत के सरपंच रहे, पंचायत समिति की प्रशासनिक समितियों तथा शिक्षा समिति के अध्यक्ष भी रहे। इनके माध्यम से उन्होंने शिक्षा क्षेत्र में नवयुवकों को प्रोत्साहन दिया और लोगों को अपनी बच्चियों को शिक्षित करने के लिये प्रेरित किया।

वे आज भी प्रसिद्धि और प्रचार से दूर रहकर निःस्वार्थ भाव से समाज सेवा में संलग्न हैं। आज के युग में जबकि तथाकथित समाजसेवकों का सारा ध्यान बाहर के दिखाऊ एवं घृणित प्रदर्शनों पर केन्द्रित हो गया है, भैरारामजी आर्य का प्रचार से दूर रहकर सेवाभाव प्रेरणास्पद है। उनमें रचनात्मक कार्य करने की एक अनोखी 'जिद' है। और यह जिद हम सभी में आ सके तो एक 'सुसंस्कृत समाज' बनाने से हमें कोई नहीं रोक सकता।

एक प्रेरक व्यक्तित्व

श्री पूर्णमल लम्बोरिया

श्री भैरारामजी को मैं जुलाई 1956 से जानता हूं। जब मेरी नियुक्ति अध्यापक पद पर उनके गांव में हुई थी। उनके विचार भी मेरे विचारों से बहुत मेल खाते थे। वे हर प्रकार के दुर्व्यसनों से दूर तथा बड़े ही नेक, ईमानदार और सच्चे व्यक्ति हैं। परोपकार की भावना तो उनके हृदय में प्रारम्भ से ही है। हालांकि वे उस समय अपने गांव के सरपंच थे लेकिन अपने विरोधी के लिये भी उनके दिल में कभी द्वेष-भावना नहीं रही, न ही आज है।

श्री भैरारामजी में समाजसेवा की भावना कूट-कूट कर भरी है। वे अपने कट्टर विरोधी के सच्चे काम की हमेशा प्रशंसा करते हैं। कन्या छात्रावास के निर्माण में वे अपना अमूल्य समय एवं श्रम दे रहे हैं। उनके निर्देशानुसार मैंने भी इस कार्य में अपना यथायोग्य योगदान दिया है। हर प्रकार की सामाजिक कुरीतियों से लड़ने वाले, लोगों को सदाचरण की ओर प्रवृत्त करने वाले, सभी प्रकार के दुर्व्यसनों के विरुद्ध संघर्ष करने वाले भैरारामजी की जितनी प्रशंसा की जाय, थोड़ी है।

अभी पिछले दिनों की बात है कि वे बस में 'मोरथल' आ रहे थे। हम दोनों पास-पास बैठे वार्तालाप कर रहे थे। उन्होंने देखा बस में एक औरत अपने नाक में सूँघने की तम्बाकू डाल रही थी, तो चौधरी साहब ने तुरन्त उससे कहा कि यह नाक में क्या डाल रही हो, जैसे चूहे के बिल में जहर डाला जा रहा हो। उस औरत को बहुत झेंप हुई। उसने उसी समय तम्बाकू सूँघना छोड़ दिया। ऐसे अनेक उदाहरण हैं। चौधरी साहब झूठे आडम्बरों में विश्वास नहीं करते, ऐसा मैंने विवाह संस्कार आदि अनेक समारोहों में देखा है। चौधरी साहब जैसे लोगों की समाज में उपस्थिति हमें भविष्य के प्रति आश्वस्त करती है।

होवे घणों उजास

सोनी सांवरमल

मायड़ इस्या पूत जण, जिण स्यूँ हुवै उजास
जनता री सेवा करै, घर-घर बारूँ मास
घर-घर बारूँ मास, चैन री बिरखा होवै
शिक्षा री सरिता बेवै, ज्ञान री फसल उगावै
मिनख पणै रो मान, शान मिनखाँ री रैवै
पावै पढ्या-लिख्यां सन्मान बात सै स्याणी कैवै ।

म्हारै अठै समाज में लाग्या घणां कुरोग
दुख पावै पण के करै गांव शहर रा लोग
गांव शहर रा लोग, दहेज मूंडो है बावै
बाळ पणै में ब्याव, घणो जुलम है ढावै
पढ़णै रो तो नाम, सुहावै आँनै कोनी
पीढ्यां स्यूं आ रीत, चाल रही है अणहोणी ।

मिनख पणो रैवै कियाँ, अर मिनखाँ री आण
जियां कियां समाज रो, होवै नित कल्याण
होवै नित कल्याण, सुरीत्याँ घर-घर छावै
मिरतु भोज, दहेज कदै ना नैड़ै आवै
दियो संदेश गांव-गांव अर ढ़ाणी-ढ़ाणी
इयां सोच श्री भैरारामजी मन में ठाणी ।

मिरतु भोज दहेज नै काढ़ो समंदर पार
करज चढ़ै काया घटै, दर में कोनी सार
दर में कोनी सार, हार मिनखां में आवै
हाट्यां बीच बजार मानखो गोता खावै
ई खातर श्री भैरारामजी आगे आकर
घर-घर में संदेश दियो खुद घर-घर जाकर ।

टाबर अणपढ़ ना रेवै हिल-मिल करो प्रयास
दसूँ दिसां में ज्ञान सूँ होवै घणों उजास
होवै घणों उजास सगला ओ बीड़ो उठावो
गांव-गांव ढाणी-ढाणी में स्कूलां खुलवाओ
शिक्षा रो कितनो मोल हुवै सै नै आ समझायो
ई खातर श्री भैरारामजी छात्रावास बणायो ।

भरवां-भरवां रह जायेगा

बुरे आदमी को मन से हटा दो। वह अपने आप कर्मों से मर जायेगा। क्यों ज्यादा मानसिक चिन्ता में रहते हो। थोथा-थोथा उड़ जायेगा और भरवां-भरवां रह जायेगा। बुरे आदमी से दुश्मनी पालने की बजाय कोई अच्छा काम करते रहो जिससे ईश्वर आपका भला करेगा।

—आर्यजी

...गांधी सा कोई आया है

श्री नेतमल सामसुखा

कठिन परिश्रम करके खोले नये-नये आयाम
ले लठ्ठ अपने हांथ में निकले धरती को थाम ।।

1

गोडास गांव से 'रिणी' में, केशव ज्यूँ आये सरसाने
करने को जागृत जन-जन को, ज्ञानामृत लाये बरसाने
न घिरे रहे निज स्वार्थों से निःस्वार्थ किये सब काम ।।

2

नस-नस रग-रग में चित्र सादगी के हैं बसाये आपने
अभिनव विचार के पग-पग से निकले जीवन-पथ नापने
चलते रहना सदा जीवन ध्येय नहीं किया विश्राम ।।

3

दुर्व्यवसनों और रूढ़िवादी के अंधकार को हटाने
गांव-गांव और गली-गली घूमे ये सब समझाने
परिवर्तन लाओ परिवर्तन, जीवन परिवर्तन का नाम ।।

4

न रहे कोई अबला नारी मन में दृढ़ ये संकल्प लिया
हर घर हो अब नारी शिक्षित सुकृत्य शुरू स्वगृह से किया
वैदिक कन्या छात्रावास का निर्माण किया निष्काम ।।

5

तन-मन-धन सर्व समर्पित कर जीवन लक्ष्य को पाया है
निश्चय ही पुनः हमारे बीच गांधी-सा कोई आया है
है परम धर्म मानव सेवा जिसका है ये पैगाम ।।

एक विगत : आगत के लिए

श्री भैराराम आर्य

(इस अभिनन्दन ग्रंथ को तैयार करते समय श्री भैरारामजी आर्य पर एक सर्वांग पूर्ण लेख किसी से लिखवाने का निश्चय किया गया था। परन्तु अचानक एक दिन यह विचार आया कि क्यों नहीं यह लेख स्वयं श्री भैरारामजी से ही तैयार करवाया जाए, क्योंकि स्वयं व्यक्ति यदि चाहे तो अपने बारे में जितनी पूर्णता से लिख सकता है उतनी पूर्णता उसके बारे में दूसरे द्वारा लिखे जाने पर नहीं आ सकती। फिर श्री भैराराम आर्य तो ऐसे व्यक्ति हैं जिनकी मनसा-वाचा-कर्मणा में कहीं भी अंतर नहीं है, कहीं भी दुराव नहीं है। इसी विचार से मैंने जब श्री आर्य से एक लेख स्वयं पर तैयार करने को कहा तो वे टाल गए, परन्तु फिर वे मेरे आग्रह को अपनी सज्जनता और सरलता के कारण टाल नहीं सके। परिणामस्वरूप प्रस्तुत है एक आत्मकथा, एक विगत (विवरण) जो हमारे आगत (भविष्य) को सुन्दर बनाने के लिए एक प्रेरणादायक संदेश है, पथ प्रदर्शक आलेख है। —संपादक)

मेरा जन्म संवत् 1976 मिती आषाढ़ सुदी 1 को सुबह 4.00 बजे ग्राम गोडास में हुआ। पिता श्री मोतीरामजी कस्वां व माताजी श्रीमती लिछमी देवी, नहरा गोत्र ग्राम मोरथल) हम कुल छ भाई-बहिन थे। सबसे बड़ी बहिन माना बाई, भाई मालूराम, बहिन नानू बाई, चीना बाई व भाई कुरड़ाराम सभी मेरे से बड़े थे।

छः साल की उम्र में मुझे नानूबाई के पास जैतपुरा तहसील सादुलपुर भेज दिया गया। संवत् 1982 में वहां प्राइवेट अक्षर ज्ञान हुआ। उसके बाद ग्राम गोडास में भाई मालूराम ने इकावळी (पहाड़ा) मांड कर दे दी। मैं जंगल में पशु चराता और अकेला पढ़ता रहता। मेरे भाई मालूराम मेरा बहुत ध्यान रखते थे। मेरे साथी दिन भर खेलते रहते और मैं अकेला भाई साहब से डरता पढ़ता रहता।

दिन भर का काम शाम को आकर भाई साहब को दिखाता था, और साथ में आर्य समाज की भजनों की किताब से भजन भी गाया करता था। नौ साल की उमर में खेती का काम करने लग गया। उसके बाद संवत् 1994 में वैसाख सुदी 3 को

मेरी शादी जैसादेवी पुत्री श्री सरदारारामजी सहारण ग्राम भामासी के साथ अठारह साल की उम्र में हो गई।

मैंने मेरे साथी वेद प्रचारक पं. दत्तूराम भजनी के साथ तीन दिन वेद प्रचार भामासी में किया उस दिन से दोनों समय की सन्ध्या करता हूँ।

इसके बाद राजनीति में बराबर भाग लिया, साथ में वेद प्रचार कार्य भी निरन्तर करता रहा। मैंने करीब 200 नामकरण संस्कार, विवाह संस्कार कराये तथा मृत्युभोज छुड़ाये। बाल विवाह, छुआछूत, दहेज-प्रथा, अन्ध-विश्वास, दुर्व्यसन, जातिवाद के विरुद्ध में प्रचार करता रहा। जागीरदार के विरुद्ध भी लड़ता रहा।

ग्राम गोडास राजपुरा के पट्टे में था जिसके साथ जमीन की रकम बढ़ा दी और ग्रामवासियों पर मलबा, सीगीन्टी, धुवाग्रह चूल्हा टेक्स, बुवाई के साथ ऊँट टेक्स के लिये हम ग्रामवासी ठाकर से लड़ते रहे। मालूराम, गणपतराम, सांवतराम, खेताराम सुथार, सहीराम सुथार, पूषाराम हरिजन, बीजाराम नायक, मानाराम पचार, जीवणराम कस्वाँ, पेमाराम सहारण, बालाराम पचार, डूंगरराम कस्वां, लिछमणराम कस्वाँ, चोलाराम कस्वाँ, दानाराम ढाहाऊँ, दुलाराम कुम्हार, गुगनराम कुम्हार, मनीराम जी आर्य, स्योचन्द मोची, नथुराम मोची, तारानगर के इन साथियों के साथ आजादी व वेद प्रचार के लिये संघर्ष हम करते रहे।

संवत् 1994-95 में भयंकर अकाल पड़ा जिसमें ऊँट के ऊपर अनाज जौ का व्यापार कर भादरा तहसील से गंगानगर, सिरसा, हनुमानगढ़, संगरिया व नोहर से अनाज लदान कर सरदारशहर, चूरू, तारानगर में बेचा करता। उसके बाद सं. 1999 में बूचावास की रोई में एक खेत लिया, जिसमें दो सौ मन अनाज हुआ। इसके बाद मेरी दूसरी शादी जैसादेवी की छोटी बहिन गौरादेवी से संवत् 2002 वि. सं. फाल्गुन सुदी 2 को हुई।

उसके बाद एक खेत मौजा ढाणी भाखरान में और लिया जिसमें काफी मेहनत करनी पड़ी। उस खेत में अनाज भी खूब पैदा हुआ। ढाणी भाखरान गोडास से चार कोस पड़ता है। उस खेत में मैंने आक और फोगों की एक झोंपड़ी बांधी जिसमें वहाँ रात दिन जंगल में रहता था, साथ में जैसादेवी धर्मपत्नी रहा करती थी। पानी वहाँ नजदीक नहीं था। ढाणी भाखरान के पास एक धर्मशाला थी जिसमें एक कुण्ड था। उस धर्मशाला में हरखचन्द गुसाई ग्राम किलीपुर का रखवाला रहता था। उसके साथ मेरा अच्छा ताल्लुक था। वह मुझे पानी देता था। पानी रात के समय लाया करता था, क्योंकि दिन में पानी लाने से लोगों में अन्तरा हो जाता था, इसलिये रात्रि में ही पानी लाता और रात दिन जंगल में रहा करता था। भाई मालूराम हमारे लिये ग्राम गोडास से खाने के लिये दूध, दही और घी लाकर देते थे। इस तरह दिन भर जमीदारी और पशुपालन करता तथा साथ में सामाजिक कार्य भी करता।

मेरे साथ सहीराम सुथार, भाई मालाराम बराबर कार्य करते थे। भाई मालूराम के दो पुत्रों की पढ़ाई का काम भी चलता था। दत्तूराम और हरफूलसिंह

काम दिया। सं. 2016 में हनुमानसिंह को छठी क्लास में तारानगर में भर्ती कराया। उस वक्त तारानगर में बिजली नहीं थी। लेम्प के प्रकाश में पढ़ाई करता। दो झोंपड़े फूस के थे जिनमें हनुमानसिंह अकेला पढ़ा करता था। 2019 में आठवीं कक्षा तक तारानगर में पढ़ाई की। उसके बाद चूरू बागला स्कूल में साईंस दिलवायी। और अमरावती बाई को कक्षा 6 में मलसीसर जि. झुन्झनूं में दाखिल कराया। जीतसिंह तारानगर में पढ़ता था और मनोहरी बाई को बगड़ में भरती कराया। इसलिये आर्थिक हालत कमजोर हो गई। मैंने खुद ने व्रत ले लिया कि मैं अपना काम आप करुँगा। आटे की चक्की चलाना, कुत्तर छानी काटनी, रजाई भरनी, तीनों काम साथ में करता। जिससे घर खर्चा मुश्किल से चलता था और खेती का काम पशुपालन इत्यादि धर्मपत्नी जैसादेवी व गौरादेवी खुद संभालती। ये दोनों देवी आपस में बहुत प्यार से रहती थीं इसी से मैं संकट में संघर्ष करता रहा और घर गृहस्थी को निभाया। चारों भाई-बहिनों की शादी आदर्श वैदिक सिद्धान्त से कराई। कोई भी कार्य वैदिक सिद्धान्त के विरुद्ध नहीं किया। न दहेज लेना व देना, न बारात चढ़ानी, दिखावा नहीं करना, शादियों में वेद प्रचार करना, परदा रिवाज को बन्द करना, मृत्युभोज छुड़ाना, ये काम किये। ढाणी आसा के स्कूल को प्राइमरी से 1963 में मिडिल बनाना। उसके लिये जयपुर जाना डेलीगेशन लेकर एवं धरना देना आदि कार्य किये। इन सामाजिक कार्यों में मनीरामजी देवगढ़ के, गणपत राम गोडास, भाई मालूराम दानारामजी राहाड़-आनन्दसिंहपुरा के, दीपचन्द मोची तारानगर के, बालाराम पचार ढाणी आसा के, जेसाराम सहारण ढाणी आसा के, सांवतराम ने जयपुर डाइरेक्टर ऑफिस के आगे धरना दिया। जिस पर सरकार ने मिडिल स्कूल की मंजूरी दी। ग्राम ढाणी आसा में पोस्ट ऑफिस खुलवाया। अपनी माता लिछमा देवी के नाम पर ग्राम गोडास में प्राथमिक स्कूल खुलवाया व शाला भवन का निर्माण कराया।

ग्राम गोडास की जोहड़ भूमि चूनाराम पुत्र तनसुखराम, ग्राम ढाणी आसा का कास्त करता था, उससे छुड़वाई। ग्राम गोडासवासियों ने काफी मदद की और सारे गांववासियों पर चूनाराम ने मुकदमा करवा दिया। तारानगर थाना पुलिस में और निजामत सादुलपुर में साठ आदमियों की पेशी पड़ती थी। जिसमें अगवाण बनकर मैंने दौड़ धूप कर ही जोहड़े की भूमि छुड़वाई। इस कार्य में काफी परेशानी उठानी पड़ी। इसके बाद इस जोहड़ी को ग्राम गोडास के व्यक्ति तोड़कर घर बनाना चाहते थे। जेसाराम पुत्र हिमताराम ग्राम गोडास सहारन लिछमन व मूलाराम पुत्र मानीराम जाति चमार आदि ग्रामवासियों ने गोचर भूमि के लिये काफी लड़कर परेशानी उठाई। चूरू कलेक्टर के सामने धरना दिया। 15 दिन धरना देने के बाद विजय प्राप्त कर ग्राम गोडास की गोचर भूमि छुड़ाई गई। इस तरह अपने आपको सामाजिक कार्यों में बराबर लगाये रखा।

इसके साथ-साथ यह लगन रहती कि नारी जाति के सुधार बिना देश का सुधार नहीं होगा। इस लगन के समय एक नकली आर्य संन्यासी आकर मुझ से बोला कि मैं लक्सर हरद्वार में एक गुरुकुल खोल रहा हूँ जिसके पांच सौ रुपयों की जरूरत

है। इससे मैं रसीद बुक छपाऊंगा। बाद में मैंने उसको पांच सौ रुपये दे दिये उसका पता ही नहीं लगा।

इसके बाद मैं हरियाणा में गया स्वामी ओमानन्दजी के पास। इसी लगन में स्वामीजी से कहा—आपके हरियाणा से सटा राजस्थान जिसमें अविद्या, अन्धविश्वास है आप मेरी मदद करो तो आपको हर तरह की सहायता करूँगा। मुझे एक संन्यासी दे दो। स्वामीजी ने मुझे उत्तर दिया कि ईमानदार संन्यासी आपको नहीं मिलेगा। सब खटपटिया हैं और मेरे पास तो समय नहीं है ऐसे मेरा ही काम नहीं चलता। इससे मैं निराश होकर तारानगर आ गया। परन्तु लगन यही रहती रात भर पूरी नींद नहीं आती इसी चक्कर में रहता। उसके बाद मैं आबू पर्वत पर स्वामी धर्मानन्दजी के पास गया वहाँ स्वामीजी लड़कों का गुरुकुल खुलवा रहे थे तो मैंने 500 रु. गुरुकुल के लिये दिये। परन्तु मेरी आशा पूरी नहीं हुई। वापिस तारानगर आ गया तथा बाद में स्वामी सदानन्दजी के पास गया किन्तु वहाँ भी कोई संतोष नहीं हुआ, वापिस तारानगर खाली लौटना पड़ा।

जब मैं सरपंच था उस समय सरकार ने भारत यात्रा का एक प्रोगाम बनाया। उसमें चार सौ आदमी गये। जिसमें तारानगर से हम तीन आदमी उस भारत यात्रा में जो एक महीने की थी, उसमें शामिल हुए। मेरे अलावा नाथूराम हरिजन मोरथल गाँव, हुकमाराम कुम्हार ग्राम बांय इस यात्रा में शामिल हुए। उसमें हजारीराम सहारण ढाणी पोचैरा भी हमारे साथ थे। हम सब अजमेर में शामिल होकर वहाँ से गये जयपुर। खासा कोठी में सरकार ने गोठ दी। वहाँ से देहली, देहली से सहारनपुर होते हुए हरद्वार पहुंचे। वहाँ हर की पेड़ी, भीमगोडा वगैरह देखा। वहाँ से चण्डीगढ़ होते हुए भाखरा डेम पहुँचे वहाँ बिजली उत्पादन झील देखी। वहाँ से जम्मू पहुँचे मोटर बस द्वारा। गाड़ी चण्डीगढ़ तक आया करती थी। उसके बाद कुण्ड होते हुए हम श्रीनगर पहुँचे। श्रीनगर में हमने सात दिन भ्रमण किया। गुलमर्ग, हींगमर्ग, रेशम की फैक्टरी, केसर उत्पादन की फसल देखी। झेलम नदी में नाव पर यात्रा की। जिसमें हमारे साथ वहाँ के नागरिकों ने यात्रियों पर पत्थर का हमला कर दिया। हम सब नौका में यात्रा कर रहे थे। हमारा कोई भी उजर नहीं चलता, हमने शोर मचाया, जिससे मिल्ट्री आ गई तथा हमारी सहायता हुई। यात्रा में सरकार ने हमसे 250 रु. एक माह का सब खरचा जमा कराया, भोजन व यात्रा खर्चा उसका।

उसके बाद मैंने तारानगर में जमीन खरीद ली। उसमें दो झोपड़े बांधे और तारानगर की श्मशान भूमि के पास उत्तरादी रोड पर एक बाड़ी बनाई, उसमें एक कुई पक्की, एक मकान और चारदिवारी बनवाई।

सं. 2046 में मेरे लगन यही रहती थी कि महिलाओं के उत्थान के लिये कुछ न कुछ करना चाहिये क्योंकि जब तक नारी विकास नहीं होता न परिवार का, न समाज का, न देश का विकास सही हो सकता है। मन की इस लगन से आखिर में वैदिक कन्या छात्रावास खोलने की शक्ल में जन्म ले लिया। वैदिक कन्या छात्रावास खोलने की भी अपने संघर्ष की कहानी है जो अब तक चल रही है। लेकिन मन की

लगन व अच्छे लोगों के सहयोग ने वैदिक कन्या छात्रावास शुरू करवा ही दिया जिसका मुझे बड़ा संतोष है। वैदिक कन्या छात्रावास की शुरूआत वर्ष 1989 में सात लड़कियों से हुई जो धीरे धीरे संख्या में बढ़ती हुई अब 125 हो गई। छात्रावास के लिये जमीन, मकान इत्यादि के लिये रावताराम छींपा ने अपने सहयोग से प्रयागचन्द सोमानी व श्यामसुन्दर सोमानी से मिलवाया जिन्होंने अपनी पैतृक जमीन जो बलदेवदास सोमानी के नाम से थी, छात्रावास के लिये प्रदान कर दी। किन्तु जमीन पर कुछ अवैध कब्जे होने के कारण खाली कराने व निर्माण कराने में बड़ा संघर्ष करना पड़ा और अभी तक मामला पूरी तरह सुलझा भी नहीं है लेकिन विश्वास है कि ईश्वर अच्छे कार्यों की बाधाओं को अवश्य दूर करता है।

नारी शिक्षा हेतु कन्या छात्रावास खुलने के संतोष के साथ अन्य सामाजिक कार्यों में अपने आपको पूरा सक्रिय रखा। छात्रावास का काम श्री रामदत्तजी ने संभाला। रामदत्तजी ने बहुत जिम्मेदारी से काम संभाला। मैं तो मुकदमेबाजी की तारीखों में रहता था और सब काम रामदत्तजी करते जैसे सब्जी लाना, सब्जी बनाना, समय पर खाना खिलाना, दोनों समय सभी गुडियों का हिसाब रखना इत्यादि और रात्रि में जागते रहना। ऐसे त्यागी और नेक नेमी आदमी बहुत थोड़े मिलते हैं।

समाज की सब बुराइयों की जड़ शराब है इसलिए आर्य समाज ने जयपुर में असेम्बली के आगे 10,000 आर्य वीरों ने सरकार को ज्ञापन दिया। 2-3-95 से शराबबन्दी आन्दोलन शुरू हुआ। स्वामी सुबोधानन्दजी की अध्यक्षता में साधु महात्माओं के साथ 13 दिनों तक घूमा। यहाँ से जयपुर, डीडवाना, खाटू, सुजानगढ़, जोधपुर, राजगढ़ और अलवर गये। अलवर में 1000 आदमियों ने कलक्टर को ज्ञापन दिया। वहां से नाकरास, नागौर, चिड़ावा, पिलानी, राजगढ़ और तारानगर पहुंचा। गोडास, आनन्दसिंहपुरा, आसा की ढाणी में भी इस बात का प्रचार किया। दिनांक 24-3-95 को असेम्बली में ज्ञापन देने के लिये आदमी तैयार किये तथा ज्ञापन देने जयपुर गये। ज्ञापन में लिखा कि मुख्यमंत्री भैरोसिंहजी शेखावत, यह शराब राजस्थान की भूमि में नहीं चलेगी। हम सब नागरिक आपके साथ हैं। मर जायेंगे मिट जायेंगे परन्तु शराब नहीं रहेगी, नहीं रहेगी। हम ऋषि दयानन्द के चेले हैं। आर्यों की भूमि में शराब नहीं चलेगी। राम लक्ष्मण की भूमि पर शराब नहीं चलेगी। महावीर की भूमि पर शराब नहीं चलेगी। गुरु नानक की भूमि पर शराब नहीं चलेगी। कबीर की भूमि पर शराब नहीं चलेगी।

मेरे साथ तारानगर तहसील से तीन आदमी ऊपर लिखे शराबबन्दी अभियान में दिनांक 23-24 तथा 25-3-95 को जयपुर पहुँचे।

मेरे साथ मेरा सुपुत्र [illegible] तथा हरिराम हरिजन गांव गोडास भी था।

इसके बाद यह विचार आया कि अपने इलाके में वेद प्रचार करना चाहिये। इसका समाधान स्वामी सुबोधानन्दजी, राजस्थान आर्य समाज के महामंत्री से उनकी

है। इससे मैं रसीद बुक छपाऊंगा। बाद में मैंने उसको पांच सौ रुपये दे दिये उसका पता ही नहीं लगा।

इसके बाद मैं हरियाणा में गया स्वामी ओमानन्दजी के पास। इसी लगन में स्वामीजी से कहा—आपके हरियाणा से सटा राजस्थान जिसमें अविद्या, अन्धविश्वास है आप मेरी मदद करो तो आपको हर तरह की सहायता करूँगा। मुझे एक संन्यासी दे दो। स्वामीजी ने मुझे उत्तर दिया कि ईमानदार संन्यासी आपको नहीं मिलेगा। सब खटपटिया हैं और मेरे पास तो समय नहीं है ऐसे मेरा ही काम नहीं चलता। इससे मैं निराश होकर तारानगर आ गया। परन्तु लगन यही रहती रात भर पूरी नींद नहीं आती इसी चक्कर में रहता। उसके बाद मैं आबू पर्वत पर स्वामी धर्मानन्दजी के पास गया वहाँ स्वामीजी लड़कों का गुरुकुल खुलवा रहे थे तो मैंने 500 रु. गुरुकुल के लिये दिये। परन्तु मेरी आशा पूरी नहीं हुई। वापिस तारानगर आ गया तथा बाद में स्वामी सदानन्दजी के पास गया किन्तु वहाँ भी कोई संतोष नहीं हुआ, वापिस तारानगर खाली लौटना पड़ा।

जब मैं सरपंच था उस समय सरकार ने भारत यात्रा का एक प्रोगाम बनाया। उसमें चार सौ आदमी गये। जिसमें तारानगर से हम तीन आदमी उस भारत यात्रा में जो एक महीने की थी, उसमें शामिल हुए। मेरे अलावा नाथूराम हरिजन मोरथल गाँव, हुकमाराम कुम्हार ग्राम बांय इस यात्रा में शामिल हुए। उसमें हजारीराम सहारण ढाणी पोचैरा भी हमारे साथ थे। हम सब अजमेर में शामिल होकर वहाँ से गये जयपुर। खासा कोठी में सरकार ने गोठ दी। वहाँ से देहली, देहली से सहारनपुर होते हुए हरद्वार पहुंचे। वहाँ हर की पेड़ी, भीमगोडा वगैरह देखा। वहाँ से चण्डीगढ़ होते हुए भाखरा डेम पहुँचे वहाँ बिजली उत्पादन झील देखी। वहाँ से जम्मू पहुँचे मोटर बस द्वारा। गाड़ी चण्डीगढ़ तक आया करती थी। उसके बाद कुण्ड होते हुए हम श्रीनगर पहुँचे। श्रीनगर में हमने सात दिन भ्रमण किया। गुलमर्ग, हींगमर्ग, रेशम की फेक्टरी, केसर उत्पादन की फसल देखी। झेलम नदी में नाव पर यात्रा की। जिसमें हमारे साथ वहाँ के नागरिकों ने यात्रियों पर पत्थर का हमला कर दिया। हम सब नौका में यात्रा कर रहे थे। हमारा कोई भी उजर नहीं चलता, हमने शोर मचाया, जिससे मिल्ट्री आ गई तथा हमारी सहायता हुई। यात्रा में सरकार ने हमसे 250 रु. एक माह का सब खरचा जमा कराया, भोजन व यात्रा खर्चा उसका।

उसके बाद मैंने तारानगर में जमीन खरीद ली। उसमें दो झोपड़े बांधे और तारानगर की श्मशान भूमि के पास उत्तरादी रोड पर एक बाड़ी बनाई, उसमें एक कुई पक्की, एक मकान और चारदिवारी बनवाई।

सं. 2046 में मेरे लगन यही रहती थी कि महिलाओं के उत्थान के लिये कुछ न कुछ करना चाहिये क्योंकि जब तक नारी विकास नहीं होता न परिवार का, न समाज का, न देश का विकास सही हो सकता है। मन की इस लगन से आखिर में वैदिक कन्या छात्रावास खोलने की शक्ल में जन्म ले लिया। वैदिक कन्या छात्रावास खोलने की भी अपने संघर्ष की कहानी है जो अब तक चल रही है। लेकिन मन की

लगन व अच्छे लोगों के सहयोग ने वैदिक कन्या छात्रावास शुरू करवा ही दिया जिसका मुझे बड़ा संतोष है। वैदिक कन्या छात्रावास की शुरुआत वर्ष 1989 में सात लड़कियों से हुई जो धीरे धीरे संख्या में बढ़ती हुई अब 125 हो गई। छात्रावास के लिये जमीन, मकान इत्यादि के लिये रावताराम छींपा ने अपने सहयोग से प्रयागचन्द सोमानी व श्यामसुन्दर सोमानी से मिलवाया जिन्होंने अपनी पैतृक जमीन जो बलदेवदास सोमानी के नाम से थी, छात्रावास के लिये प्रदान कर दी। किन्तु जमीन पर कुछ अवैध कब्जे होने के कारण खाली कराने व निर्माण कराने में बड़ा संघर्ष करना पड़ा और अभी तक मामला पूरी तरह सुलझा भी नहीं है लेकिन विश्वास है कि ईश्वर अच्छे कार्यों की बाधाओं को अवश्य दूर करता है।

नारी शिक्षा हेतु कन्या छात्रावास खुलने के संतोष के साथ अन्य सामाजिक कार्यों में अपने आपको पूरा सक्रिय रखा। छात्रावास का काम श्री रामदत्तजी ने संभाला। रामदत्तजी ने बहुत जिम्मेदारी से काम संभाला। मैं तो मुकदमेबाजी की तारीखों में रहता था और सब काम रामदत्तजी करते जैसे सब्जी लाना, सब्जी बनाना, समय पर खाना खिलाना, दोनों समय सभी गुडियों का हिसाब रखना इत्यादि और रात्रि में जागते रहना। ऐसे त्यागी और नेक नेमी आदमी बहुत थोड़े मिलते हैं।

समाज की सब बुराइयों की जड़ शराब है इसलिए आर्य समाज ने जयपुर में असेम्बली के आगे 10,000 आर्य वीरों ने सरकार को ज्ञापन दिया। 2-3-95 से शराबबन्दी आन्दोलन शुरू हुआ। स्वामी सुबीधानन्दजी की अध्यक्षता में साधु महात्माओं के साथ 13 दिनों तक घूमा। यहाँ से जयपुर, डीडवाना, खाटू, सुजानगढ़, जोधपुर, राजगढ़ और अलवर गये। अलवर में 1000 आदमियों ने कलक्टर को ज्ञापन दिया। वहां से भाकरान, नागौर, चिड़ावा, पिलानी, राजगढ़ और तारानगर पहुंचा। गोडास, आनन्दसिंहपुरा, आसा की ढाणी में भी इस बात का प्रचार किया। दिनांक 24-3-95 को असेम्बली में ज्ञापन देने के लिये आदमी तैयार किये तथा ज्ञापन देने जयपुर गये। ज्ञापन में लिखा कि मुख्यमंत्री भैरोसिंहजी शेखावत, यह शराव राजस्थान की भूमि में नहीं चलेगी। हम सब नागरिक आपके साथ हैं। मर जायेंगे मिट जायेंगे परन्तु शराब नहीं रहेगी, नहीं रहेगी। हम ऋषि दयानन्द के चेले हैं। आर्यों की भूमि में शराब नहीं चलेगी। राम लक्ष्मण की भूमि पर शराब नहीं चलेगी। महावीर की भूमि पर शराब नहीं चलेगी। गुरु नानक की भूमि पर शराब नहीं चलेगी। कबीर की भूमि पर शराब नहीं चलेगी।

मेरे साथ तारानागर तहसील से तीन आदमी ऊपर लिखे शराबवन्दी अभियान में दिनांक 23-24 तया 25-3-95 को जयपुर पहुँचे।

मेरे साय मेरा सुपुत्र जीतसिंह तया हरिराम हरिजन गांव गोडास भी था।

इसके वाद यह विचार आया कि अपने इलाके में वेद प्रचार करना चाहिये। इसका समाधान स्वामी सुवेधानन्दजी, राजस्थान आर्य समाज के महामंत्री से उनकी

टमकोर यात्रा 13, 14, 15-4-95 के दौरान निकला। इस बारे में स्वामीजी से बात करने हम पांच लोग मैं, हेमराज आर्य-टीबा भलाऊ, आनन्द कुमार, सुगाराम, और रामेश्वर सुथार गांव गोडास टमकोर पहुँचे। वहाँ स्वामी बीजानन्दजी, चितौड़ के स्वामी परमानन्दजी, स्वामी रामानन्दजी तथा भूपेन्द्रसिंहजी भजनी से मिले। इनके साथ स्वामी भूमानन्दजी महामंत्री वहाँ नहीं आये इसलिये कार्य पूरा नहीं हो सका।

वापिस दिनांक 14-4-95 को गांव गोडास में गया। वहाँ पर भीषण अकाल पड़ा था। खेत में गोपीराम सहारण हिस्सेदार था। इस रात्रि में मुझे खेत में ही रहना पड़ा। गोपीराम अकेला था। इस रात को एक झूंझाल आंधी और कुछ बरखा लेकर भयंकर तूफान आया, मैं जंगल में अकेला ही था। भीषण तूफान दो-ढाई क्विंटल चारा उड़ा ले गया मैंने सोचा कि आज तो बचना कठिन है।

रात को बारह बजे की टेम गोपीराम मेरे पास आया, रोटी भी साथ लाया। मैं गोडास में अकेला ही था। हनुमानसिंह की माता सरदारशहर गई थी। इस अकेलेपन में स्वामीजी से मन की बात करने की जो इच्छा थी वो बार-बार कुछ करने के लिये प्रोत्साहित करती रही। मन बार बार यह कह रहा था कि आर्यव्रत का पूर्ण पालन करते हुए अपना जीवन सफल करो। जीवन के वानप्रस्थ आश्रम की उम्र पूरी हो चुकी है अब आर्यव्रत के अनुसार संन्यास का मानस प्रबल हो रहा था किन्तु जब भी घर पर परिवार के सदस्यों से बात करता तो सभी इसका डट कर विरोध करते।

इससे यह बात स्पष्ट हो गई थी कि संन्यास लेने का व्रत पालन करने के लिये निर्णय अपने आप से ही लेना पड़ेगा। आखिरकार मन की साध पूरी करने का दिन आ ही गया। घर वालों को बिना बताये स्वामी केशवानन्दजी की पुण्यस्मृति के दिन संगरिया में स्मृति दिवस समारोह में अपने संन्यास लेने की साध पूरी करते हुए संन्यास आश्रम में प्रवेश किया। मन को सबसे अधिक खुशी और संतोष इसी दिन मिला। सचमुच ऐसा लगा कि आर्यव्रत का पालन अब पूरी तरह हुआ। ईश्वर इस अध्याय की जिम्मेदारियों को निभाने के प्रति जगाता रहे और मैं आर्यव्रत निभाता रहूँ। बस यही कामना है कि—

दे सको प्रभु, तो इतना वर दो
कि दूसरों के हित में कुछ करने के लिये
कभी सामर्थ्य और साधन में कमी न पाऊँ
और मात्र अपने लिये माँगने तुम्हारे द्वार कभी न आऊँ ।

श्री 108 श्रद्धेय स्वामी अभयानन्दजी सरस्वती शिक्षा सन्त का ग्राम विकास शिक्षा समिति, ढाणी आशा द्वारा हार्दिक

अभिनन्दन

माननीय महामानव,

हम शिक्षा समिति, ग्राम 'ढाणी आशा' एवं 'गोडास' के नागरिक ईमानदारी और सादगी के प्रतीक, सरल व्यक्तित्व के धनी, अज्ञानान्धकार के निराकरण में सक्रिय प्रकाश-स्तम्भ श्रद्धेय स्वामी अभयानन्दजी सरस्वती का अभिनन्दन करते हुए अत्यन्त गौरव का अनुभव कर रहे हैं। 'ढाणी आशा' में स्थित विद्यालय आपके शिक्षा प्रेम और शिक्षा के प्रति उत्तरदायित्व के निर्वहन का साक्षात् रूप है जिसके प्राथमिक स्तर से क्रमोन्नयन हेतु आपने तन, मन और धन से सहयोग दिया।

यह आपका शिक्षा प्रेम ही था जिसके कारण एक अनपढ़ किसान परिवार के बालक होकर भी, अभावों, बाधाओं से मुकाबला करते हुए साक्षर हुए। तथा उसी साधारण साक्षरता एवं अद्‌भुत लगन के कारण आपने अपने सम्पूर्ण परिवार को शिक्षित कर सफलताओं के उच्च शिखर पर पहुँचा दिया। आपकी यह तपस्या परिवार, ग्राम और सम्पूर्ण समाज के लिये अनुकरणीय है।

महिला शिक्षा एवं जागृति आपकी ज्ञान साधना का सदैव मुख्य पहलू रहा है। मृत्युभोज की अपरिहार्य परम्परा को अपनी पूजनीय माताजी के स्वर्गवास पर छोड़कर उसके बदले गांव में नारी शिक्षा के प्रचलन हेतु स्वयं के खर्च से कन्या प्राथमिक विद्यालय का निर्माण करवाया। नारी शिक्षा की विकास यात्रा में आपने तारानगर वाले घर में वैदिक कन्या छात्रावास का संचालन किया जो वर्तमान में तारानगर तहसील के सम्पूर्ण ग्रामीण इलाके में आगे पढ़ने की इच्छुक बालिकाओं हेतु एक विशाल कन्या छात्रावास के रूप में विकसित हो रहा है। यह सब आप ही की तपस्या का फल है कि नारी शिक्षा की उज्ज्वल मशाल प्रज्वलित है। यह समाज के लिये अधिक सेवा व ज्ञान समन्वित आपके विशिट व्यक्तित्व की देन है।

अब आपने वैराग्यपूर्ण दिव्य संन्यास मार्ग ग्रहण कर लिया है। उससे समाज की आपसे बहुत सी आशाएं बंध गई है। आपने स्वयं को अब से सम्पूर्ण समाज सेवा के लिए पूर्णतया समर्पित कर दिया है, इससे आप सभी के आत्मीय एवं निजी व्यक्ति हो गये हैं। आत्म विकास के मार्ग पर अग्रसर होते रहना सभी को अनमोल मार्गदर्शन प्रदान करता रहेगा, ऐसी आपसे हमें आशा है।

हम सभी नागरिकगण परम पिता परमेश्वर से आपके ऐसे तपस्यामय एवं समाज सेवारत निरन्तर परिपूर्ण दीर्घ जीवन की कामना करते हुए तथा आजीवन समाज एवं शिक्षा संस्थाओं को मार्गदर्शन देते रहने की आपसे अपील करते हुए आपका बारम्बार स्नेह एवं सम्मानपूर्ण अभिनन्दन करते हैं।

हम सदैव आपके आभारी समस्त नागरिक एवं ग्राम
विकास शिक्षा समिति, ढाणी आशा, गोडास

7 अक्टूबर 1995

आर्य संस्कृति और दर्शन के उन्नायक, नारी शिक्षा जागरण को समर्पित तारानगर के सम्मान्य गांधी समादरणीय परमपूज्य स्वामी श्री अभयानन्दजी सरस्वती (गृहस्थ नाम चौधरी भैरारामजी आर्य) के सम्मान में सादर समर्पित अभिनन्दन पत्र

परम श्रद्धास्पद !

देव दुर्लभ मानव जीवन को प्राप्त कर कर्म, ज्ञान और सेवा द्वारा जो सार्थक्य आपने प्रदान किया वह मानव समाज के लिये एक प्रेरणास्पद उदाहरण है। आप धन्य हैं, कृत पुण्य हैं, सर्वथा श्लाघनीय हैं। आपके गुणानुरागी जन आपका हृदय से अभिनन्दन करते हुए अपने को परम सौभाग्यशाली मानते हैं।

माँ वसुन्धरा के अमर सपूत !

श्रमोपजीवी कृषक परिवार में जन्म लेकर लौकिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए जन-जन के संस्कार निर्माण, अशिक्षा, कुरूढ़ियों कुरीतियों को मिटाने हेतु अनवरत जो प्रयत्न किया वह आपके पावन कृतित्व और व्यक्तित्व का द्योतक है। युगपुरुष महर्षि दयानन्द सरस्वती के आदर्शों के मूर्त प्रतीक के रूप में आपने जो जीवन जिया है वह आर्य संस्कृति का जीवन्त रूप है।

सत्पथ के महान् उपदेष्टा !

आप उस अन्तश्चेतना के धनी सत्पुरुष हैं, जो सत्य के साक्षात्कार से स्वयं ही परितुष्ट न होकर मानव-मानव में सत्यमूलक सुसंस्कार जागृत करने के लिए सतत उद्यत रहे हैं।

पूज्य संन्यासिवर्य !

आपने गृहस्थाश्रम का परित्याग करते हुए संन्यास दीक्षा अंगीकार कर भारतीय जीवन पद्धति की आश्रम व्यवस्था में निहित सत्य को उजागर किया है। वैसे तो आपका जीवन संन्यासी का सा ही रहा है, किन्तु ममत्व के सूत्रों से पूर्ण मुक्त होने, साध्य ध्येय की सम्पूर्ण प्राप्ति हेतु आप श्री भैराराम आर्य से स्वामी अभयानन्द सरस्वती के रूप में परिवर्तित हो गये। आपका संन्यास परिवेश परिवर्तन न होकर एक क्रान्ति का सूचक है। मातृशक्ति को संस्कारनिष्ठ बनाने हेतु आपने स्वयं को वैदिक कन्या छात्रावास से सदा के लिए जोड़ लिया है। आपसे प्रेरणा, शिक्षा और मार्गदर्शन प्राप्त कर हमारी अनेकों बहिनें और बेटियां उच्च संस्कारवती बन राष्ट्र और मानवता के लिये बहुत बड़ी देन होगी।

तपोनिष्ठ कर्मयोगी

आपके तपोमय जीवन का पावन प्रभाव आपके पारिवारिक वातावरण में सेवा और सद्भावना के रूप में व्याप्त है। आपके सम्पर्क में आने वाले आपके कर्मयोग से अनुप्राणित, सरलता, सहजता तथा उदारता के उदात्त भावों से समायुक्त आपका जीवन देखकर स्वयं सत्पथ की ओर अग्रसर होने को उत्प्रेरित होते हैं।

समादरणीय महोदय

'कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा भाग्यवती च तेन' की उक्ति को चरितार्थ करने वाले मां वसुन्धरा के पुत्ररत्न का हार्दिक अभिवन्दन, अभिनन्दन और सम्मान करते हुए यह अभ्यर्थना करते हैं कि आप हमें सदा सन्मार्ग पर अग्रसर होने को उद्बोधित एवं उत्प्रेरित करते रहें। परम पिता परमात्मा आपको निरामय, शतायुर्मय जीवन प्रदान करें।

हम हैं आपके सद्गुणानुरागी

तारानगर एवं उसके चतुर्दिक ग्राम के श्रद्धाशील जन-जन

श्री भैराराम आर्य एक सुन्दर भाव मुद्रा में

श्री भैराराम आर्य का निवास स्थान (ग्राम-गोडास)

श्री आर्य अपने दो पुराने साथियों के साथ
श्री मनीराम आर्य, श्री सहीराम सुथार

श्री एवं श्रीमती भैराराम आर्य

श्री भैराराम आर्य की दोनों पत्नियां तथा मध्य में उनकी भौजाई
(पत्नी श्री मालूरामजी कस्वां)
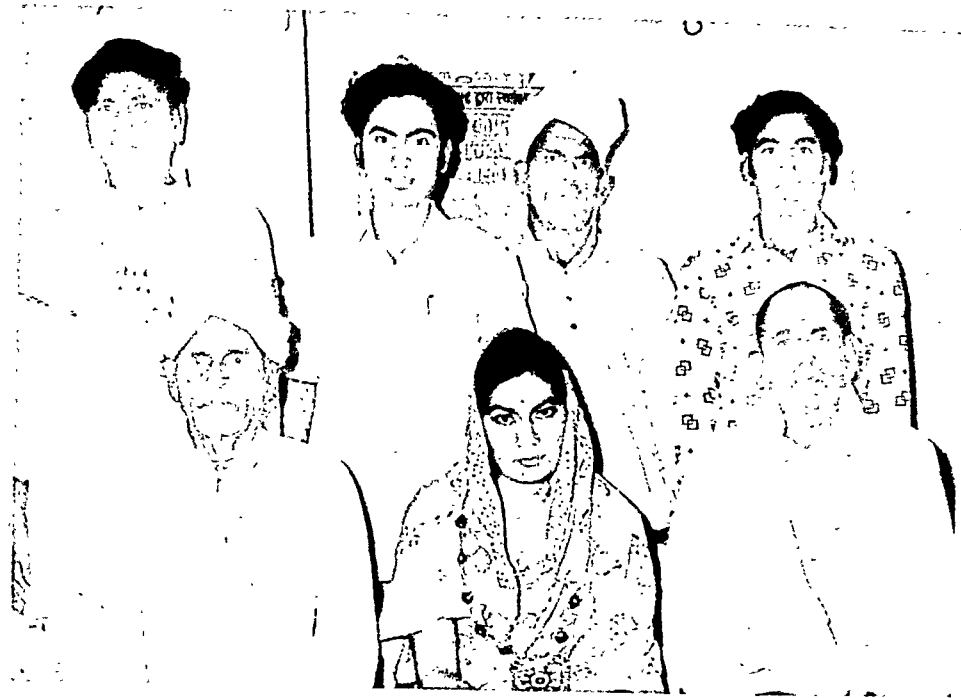
पुत्री मनोरमा के विवाह के अवसर पर श्री आर्य अपने परिवार के साथ

श्री आर्य के परिवार की महिलाएं

श्री भैराराम आर्य की दोनों पुत्रियां श्रीमती मनोरमा कपूरिया एवं श्रीमती अमरावती
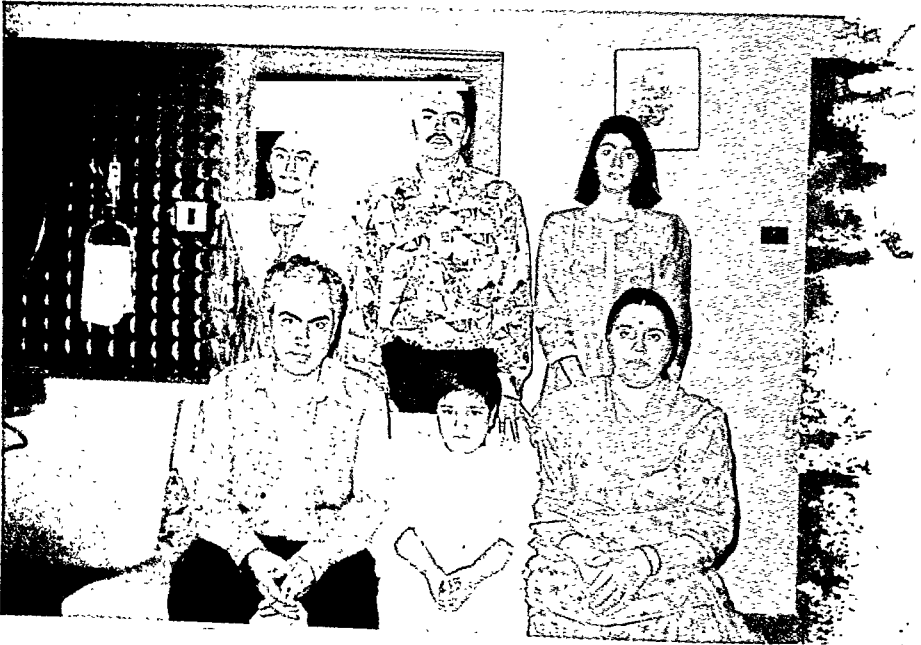
डॉ. हनुमानसिंह कस्वां अपने परिवार के साथ
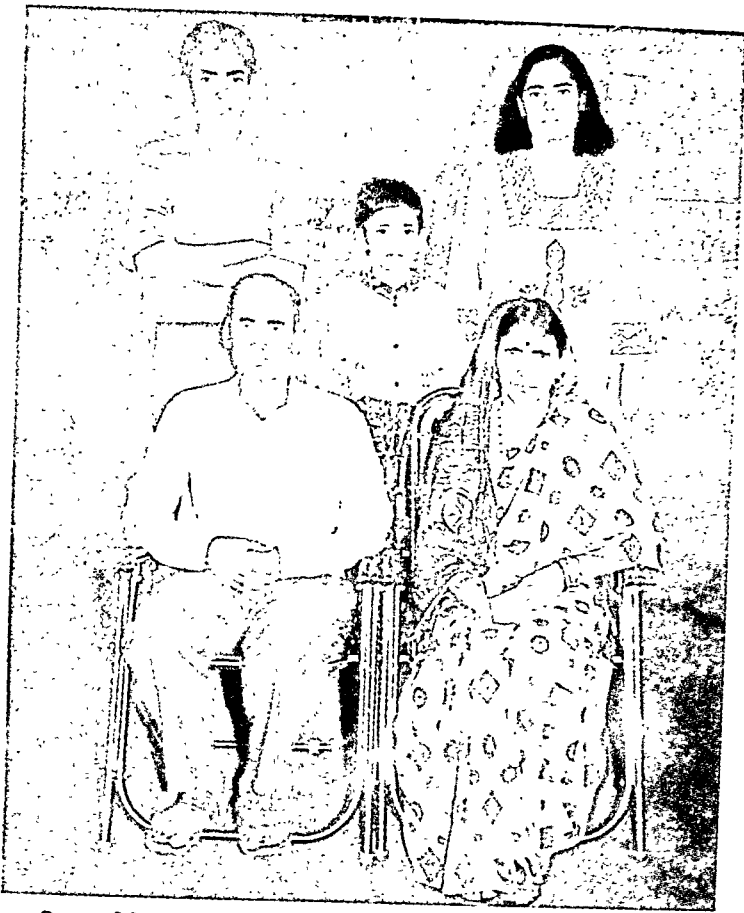
श्री आर्य के कनिष्ठ पुत्र श्री जितेन्द्रसिंह अपने परिवार के साथ

श्री भैरारामजी आर्य अपनी पौत्री डॉ. सुमीता के साथ

चिकित्सा क्षेत्र में प्रथम आने पर ग्रामीण छात्रों को दिये जाने वाले
कस्वां गोल्ड मैडल्स

संन्यास ग्रहण करने के पश्चात श्री भैराराम आर्य
स्वामी अभयानन्द सरस्वती

चौधरी बहादुरसिंह जाट जागृति धर्मार्थ ट्रस्ट, ग्रामोत्थान विद्यापीठ, संगरिया की ओर से
चौधरी भैराराम जी आर्य
के करकमलों में सादर समर्पित

अभिनन्दन पत्र

मान्यवर,

आपने आषाढ़ सुदी एकम् संवत् 1976 विक्रमी (ई. सन् 1919) को राजस्थान के चूरू जिले के गोडास ग्राम में चौधरी मोतीराम कस्वां के प्रतिष्ठित परिवार में जन्म लेकर मातृ-पितृ कुल को अलंकृत किया। आर्य समाजी विचारों से समन्वित परिवार में रहते हुए साक्षरता प्राप्त की तथा स्वाध्याय, सेवा, परोपकार एवं समाज सुधार की ओर उन्मुख हुए। कृषि कार्य में संलग्न रहते हुए आपने समाज सुधार और लोकोपकार मुख्य ध्येय बनाया। शिक्षा सन्त स्वामी केशवानन्द के सम्पर्क और उनके उद्‌बोधन पर समाज में व्याप्त दुर्व्यसनों, अन्धविश्वासों, रूढ़ियों, कुरीतियों आदि को भजनोपदेशों से दूर करने का प्रयत्न किया। सामाजिक चेतना, उत्थान एवं विकास की ओर जन-जन को उत्प्रेरित किया और समाज में लोकप्रियता अर्जित कर लगातार चार बार सरपंच के पद पर रहकर अनेक वर्षों तक ग्राम्य विकास एवं समाज शोधन जैसे कार्य करते रहे हैं।

आर्य समाज संस्था से जुड़े रहने से शिक्षा और सामाजिक संस्कारों के प्रति आपका विशेष बल रहा है। इसी श्रृंखला में आपने नारी शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए ग्राम गोडास में कन्या पाठशाला स्थापित की तथा जन-जन के आर्थिक सहयोग से एक बड़े वैदिक कन्या छात्रावास का निर्माण कराया है जिससे बालिकाएं अपने आवास की अवधि में भारतीय संस्कृति के अनुरूप सच्चरित्रता, आत्मनिर्भरता, देशभक्ति और समाज सेवा के गुणों को अपने जीवन में चरितार्थ कर सकें। वर्तमान में आपने जीवन को इसी छात्रावास के उत्थान एवं विकास के लिए समर्पित कर दिया है।

हम ग्रामोत्थान विद्यापीठ के स्थापना दिवसोत्सव पर ऐसे समाजसेवी, निष्काम कर्मयोगी, स्थितप्रज्ञ महापुरुष को चौधरी बहादुरसिंह जाट जागृति धर्मार्थ ट्रस्ट की ओर से 11,000 रुपये तथा एक शाल भेंट स्वरूप प्रदान कर समाज सेवा पुरस्कार से सम्मानित करते हैं और आपकी दीर्घायु की कामना करते हैं।

दिनांक	अध्यक्ष, ग्रामोत्थान विद्यापीठ	रामनारायण ज्याणी
9 अगस्त, 1995	संगरिया	संयोजक
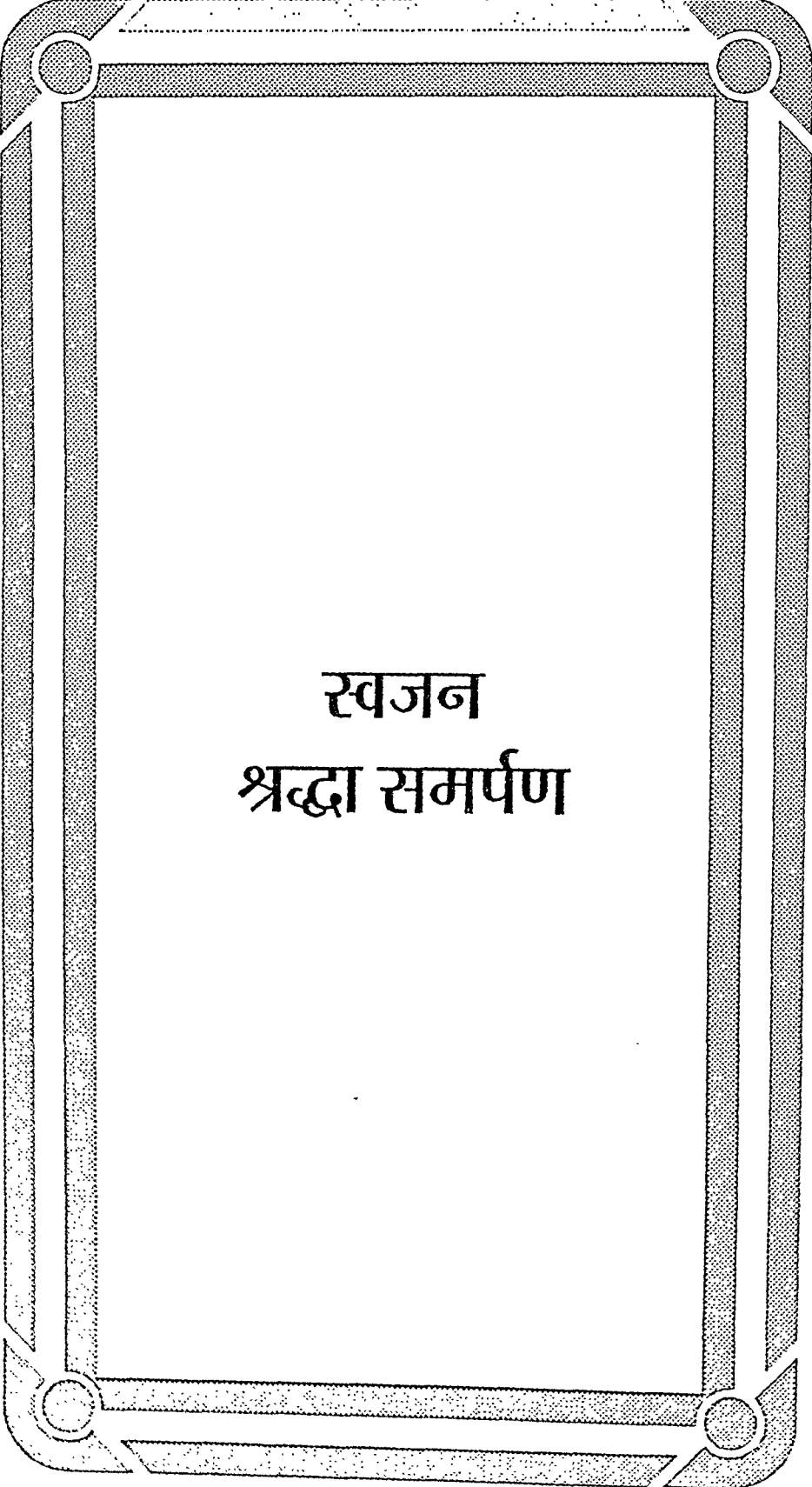
स्वस्त्ययन

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाङ्सस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ।।
स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ।।
ॐ शान्तिः ! शान्तिः !! शान्तिः !!!

गुरु के यहाँ अध्ययन करने वाले छात्र अपने गुरु, सहपाठियों तथा मानवमात्र का कल्याण-चिन्तन करते हुए देवताओं से प्रार्थना करते हैं—'देवगण! हम अपने कानों से शुभ-कल्याणकारी वचन ही सुनें। निन्दा, चुगली, गाली या दूसरी-दूसरी पाप की बातें हमारे कानों में न पड़ें। हमारा जीवन यजन-परायण हो-हम सदा भगवान् की आराधना में ही लगे रहें। नेत्रों से हम सदा कल्याण का दर्शन करें। किसी अमङ्गलकारी अथवा पतन की ओर ले जाने वाले दृश्य की ओर हमारी दृष्टि का आकर्षण कभी न हो। हमारे शरीर के एक-एक अवयव सुदृढ़ एवं सुपुष्ट हों, हम उनके द्वारा आप सबका स्तवन करते रहें। हमारी आयु भोग-विलास या प्रमाद में न बीतकर आप लोगों की सेवा में व्यतीत हो। जिनका सुयश सब ओर फैला है वे देवराज इन्द्र, सर्वज्ञ, पूषा, अरिष्टनिवारक तार्क्ष्य (गरुड़) और बुद्धि के स्वामी बृहस्पति—ये सभी देवता भगवान् की दिव्य विभूतियाँ हैं। ये सदा हमारे कल्याण का पोषण करें। इनकी कृपा से हमारे सहित प्राणिमात्र का कल्याण होता रहे। आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक—सभी प्रकार के तापों की शान्ति हो।'

स्वजन
श्रद्धा समर्पण
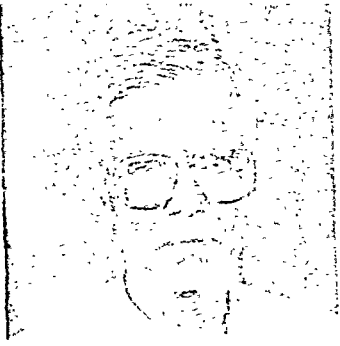
संस्कारों की खेती करने वाले मेरे समधी—श्री भैरारामजी

श्री तनसुखराय

(श्री भैरारामजी के सुपुत्र डॉ. हनुमानसिंह के श्वसुर श्री तनसुखजी ने इन्हें अपना समधी (समान है धी यानि बुद्धि जिसकी) कहा है और इस बात को बताने का प्रयास किया है कि इनके पावन संस्कार केवल उनके ही नहीं हैं उनका पूरा प्रभाव इनके दामाद डॉ. हनुमानसिंहजी पर भी है।)

आदरणीय श्री भैरारामजी से मेरी सबसे पहली जानकारी मेरे भतीजे शिशुपालसिंह, (अध्यापक) के द्वारा हुई जो 'बूचावास' उच्च प्राथमिक विद्यालय से स्थानान्तरित होकर श्रीडूंगरगढ़ के प्राथमिक विद्यालय में आये थे। यह बात सन् 1963 की है। उसने मुझे बताया कि 'गोडास' गांव में एक चौधरी श्री भैरारामजी हैं, जो सरपंच भी हैं, बड़े सदाचारी व पक्के आर्यसमाजी हैं। मैं उनसे बड़ा प्रभावित हूं। उनके एक लड़का है जो दसवीं कक्षा में पढ़ता है। लड़का भी बड़ा होशियार व अच्छा है अगर अपनी विमला का सम्बन्ध उनसे कर दें तो बड़ा अच्छा हो। मैंने पहले तो कहा कि भाई विमला 6ठी कक्षा में पढ़ती है, छोटी उमर की है अतः अभी सम्बन्ध की क्या बात करें ? पर वह अड़ गया और कहने लगा कि अभी अपने को शादी थोड़े ही करनी है बात कर लेते हैं। शादी बाद में कर लेंगे क्योंकि श्री भैरारामजी बड़े ही अच्छे व्यक्ति, समाजसेवी व तारानगर तहसील के माने हुए व्यक्ति हैं साथ ही लड़का भी होनहार लगता है। मैंने उसे कहा—देखेंगे ?

गर्मियों की छुट्टियों में एक दिन चूरू में श्री खींवारामजी, जो मेरी पत्नी के ननिहाल के हैं। उस समय काफी समय से आप 'ढाणी आशा' मिडिल स्कूल के प्रधानाध्यापक थे जो 'गोडास' के पास ही है, उनका भी चौधरी साहब से बहुत ही आत्मीय संबंध था, वे चौधरी साहब को बहुत मानते थे, उन्होंने कहा—ऐसा, 'बात का धनी' आदमी आपको दूसरा इस क्षेत्र में नहीं मिलेगा। यूं मेरे रिश्ते में अब वे साले लगते हैं।' उन्होंने कहा मैं श्री भैरारामजी से बात करूंगा। वे मेरे घनिष्ठ मित्र हैं। इस बात के साल भर बाद एक रोज कार्यवश मैं चूरू गया तो संयोगवश स्टेशन पर श्री भैरारामजी और हरफूलसिंहजी जो भैरारामजी के भतीजे हैं मिल गये। हरफूलसिंहजी मुझे जानते थे क्योंकि वे कॉलेज में मेरे से जूनियर थे। सही मौका देख

मैंने खींवारामजी से कहा, उन्होंने उचित समय समझकर हरफूलसिंहजी से बातचीत की, तब उन्होंने कहा, कहीं एकान्त में बैठ कर बात की जाये। हम लोग लोहिया कॉलेज के प्राध्यापक कक्ष में गये, बात की—मगर भैरारामजी पक्के आर्य समाजी विचारधारा के थे, उन्होंने बिना किसी भूमिका के इंकार करते हुए कहा कि 18 वर्ष पूर्व यह बात करना शास्त्रों के अनुकूल नहीं है अतः मैं अभी सम्बन्ध नहीं कर सकता। उस समय श्री खींवारामजी व हरफूलसिंहजी ने मेरी मदद करते हुए उन पर आपसी मैत्री-संबंधों का दबाव डालकर इस बात के लिए सहमत कर लिया कि एक बार लड़की देख ली जाये। दूसरे दिन खींवारामजी, चौधरी साहब और मैं हमारे गांव को रवाना हो गए। रास्ते में हम 'नाथासर' गांव उतरे तो वहां श्री लक्ष्मणसिंहजी ढाका के घर गये। वहीं नाश्ता लिया। वे अपने समय के पक्के आर्य समाजी थे। आपने चौधरी साहब को देखकर पूछा—चौधरी आपके साथ कैसे ? तब मैंने पूछा 'आप इन्हें जानते हैं ?' तो लक्ष्मणसिंहजी बोले—'अरे, आपको मैं कैसे भूल सकता हूँ ? आपने तो अपने गांव में हमारी मदद की थी जबकि हमारी साधारण पहचान थी। हुआ यों कि मैं तारानगर तहसील के एक गांव में भैंस खरीदने गया, सौदा होने पर पता चला कि मेरे पास रुपये कम हैं, बिना जान-पहचान के वे भैंस कैसे देते ? मैंने कहा—मैं भैंस ले जाता हूं—रुपया भिजवा देता हूं तब भैंस के मालिक ने कहा—आप किसी से कहलवा दो, पहचान करवा दो फिर ले जाव्ओ। मैंने साधारण पहचान के आधार पर ही श्री भैरारामजी का नाम ले लिया, जो पास ही 'गोडास' में थे। उनका नाम सुनते ही वे बोले—अरे, भैरजी कह देवे तो एक कांई सौ भैंसें ले जावो।' मैं 'गोडास' इनके पास गया इन्होंने तुरन्त मदद की और वहां आकर मुझे भैंस दिलवा दी। साधारण जानकारी पर कौन इतना कष्ट उठाता है ? अतः मैं इन्हें कैसे भूल जाऊँ ?' संबंध से पूर्व ही चौधरी साहब के इस मानवतापूर्ण व सेवाभावी आत्मीय स्वभाव के इस अद्वितीय उदाहरण को सुन, हृदय में उनके प्रति श्रद्धा उत्पन्न हो गयी तथा उनकी आस-पास के गांवों में प्रतिष्ठा सुनकर खुशी हुई सो अलग।

खैर, रात्रि को हम गांव पहुंचे। मेरी लड़की विमला उस समय 5वीं या 6ठी में पढ़ती थी। उसे देख भैरारामजी प्रसन्न हुए मगर संबंध के बारे में कुछ न बोले। दूसरे दिन हम ढाका के पास आ गये। रात्रि में खींवारामजी व मैंने उन से संबंध हेतु फिर चर्चा की तब उन्होंने कहा कि मैं 18 वर्ष से पहले सम्बन्ध नहीं करूंगा न ही बात पक्की। मैं धर्मानुसार ही आचरण करूंगा। उनकी स्पष्टता और विचारों से प्रभावित हो हम भी उनसे सहमत हो गये। हां, उनसे इस बात की स्वीकृति अवश्य ले ली कि जब भी संबंध किया जायेगा, हमें प्राथमिकता देंगे।

समय बीतता गया और हनुमानसिंहजी 'लोहिया कालेज' चूरू में प्रथम वर्ष में आ गये। उस समय हमारा जानकार नाथासर का कारीगर तारानगर गया हुआ था। श्री भैरारामजी ने तब तक तारानगर में मौहल्ला मोचियान में आटे की चक्की लगा ली थी। वह कारीगर उन्हीं के यहां कोई कार्य कर रहा था। उसने वहां

हनुमानसिंहजी को देखा तथा यह पता चलने पर कि भैरारामजी का ही पुत्र है, संबंध के बारे में पूछा। तो उन्होंने कह दिया—'नहीं किया' तो कारीगर ने कहा हमारे गांव में एक शिक्षित परिवार श्री लक्ष्मणसिंहजी ढाका का हैं, उनकी लड़की पढ़ी-लिखी एवं सुन्दर है। कहो तो संबंध करवा दूं ?' तब चौधरी साहब ने कहा—'देख लेंगे।'

मुखरामजी कारीगर ने यह बात गांव आकर लक्ष्मणसिंहजी को कही। तब उन्होंने कहा कि यह संबंध तो तनसुखजी की लड़की से हो चुका है और उन्होंने ही यह बात मुझसे व बड़े भाई साहब को कही और सारा किस्सा बताया। मैंने कहा, 'भैरारामजी बात के धनी हैं। उन्होंने जो कहा था वही करेंगे। संबंध से पूर्व हमें अवश्य इत्तला देंगे। फिर भी चाहो तो सम्पर्क कर पता कर लेते हैं।' जब मेरे भाई भागीरथ एवं साले साहब रामकुमारजी उनसे जाकर मिले तो उन्होंने एकदम सहज भाव में कहा, 'आइये, कैसे आना हुआ ? मैं आपको जाना नहीं ?' तब भाई ने रिश्ते की बात की। 'अपना क्या रिश्ता है ? ये सब तो मजाक में बात कही हुई है।' स्थिति की गम्भीरता देख भाई व साले साहब ने कहा—'नहीं-नहीं हम तो आपसे यूं ही मिलने आ गये।' तब चौधरी साहब हँसकर अपने विनोदी स्वभाव में चुटकी लेते बोले—भाई, कोई वहम तो नी होयो ? फिर उसी क्षण गम्भीर होकर उन्होंने कहा 'मैं आपसे मजाक कर रहा था, मैं पहचान् गया था और मास्टरजी को बोल देना कि जब भी रिश्ता करना होगा, पहले आपको ही इत्तला दूंगा।' मन ही मन चौधरी साहब मुखराम कारीगर की बात को याद कर चुके थे। फिर, भाई व रामकुमारजी ने सारी बात मुझे श्रीडूंगरगढ़ आकर कही। मैं उनके व्यवहार एवं बातचीत के उस प्रसंग से प्रभावित होकर और आश्वस्त हो गया।

समय तो कद रुकता है ? बीतता गया। तीन साल निकलने को आ गये। घर पर सभी को विमला की शादी की चिन्ता स्वभावतः थी अतः मुझे बार-बार चौधरी साहब से मिलने को कहते रहते थे। अधिक दबाव आने पर फिर एक बार मैं तारानगर चौधरी साहब के पास उनकी चक्की पर गया। चौधरी साहब प्रसन्नता से मिले, बातचीत हुई उसके पश्चात् बोले 'मास्टरजी, वैसे तो आप थोड़ी जल्दी कर गये, मगर अब आ ही गये हैं तो गांव चलते हैं।' रात को हम 'गोडास' गांव आये। उसी रात चौधरी साहब बोले, 'मास्टरजी अब अपने रिश्ते की बात सार्वजनिक कर देते हैं।' सुबह ही परिवार वालों को इकट्ठा कर चावल बनाकर यह बात सबको बतला दी कि श्री तनसुखजी की लड़की से अपने हनुमानसिंह का रिश्ता पक्का कर दिया है। मैंने तुरन्त ही रश्मीतौर पर कुछ देना चाहा तो सिर्फ एक रुपया लेकर आपने शकुन किया। उसी रात हनुमानसिंहजी भी गांव आये थे। उन्हें सुबह-सुबह ही तारानगर भेज दिया गया था। दोपहर बाद हम भी तारानगर लौट आये। वहां से मैं व डॉ. साहब राजगढ़ से चूरू गाड़ी में साथ-साथ आये। रास्ते भर कोई बात नहीं हुई मगर जब वे गाड़ी से उतरकर चूरू स्टेशन से बाहर की ओर जाने लगे तो मैंने अपने अन्तर में उठ रहे सवाल को आखिर उनके सामने रखते हुए कहा कि—'सुनो,

मैंने व आपके पिताजी ने मिलकर मेरी लड़की से आपका रिश्ता तय किया है। मेरी लड़की पढ़ने में इतनी होशियार नहीं कि पढ़कर वह भी डॉक्टर बन जाए। आप तो बनेंगे ही फिर कहीं मन में यह बात आ जाए कि मैं डॉक्टर लड़की से ही शादी करूंगा तब ? यदि बेटा, ऐसी कोई थोड़ी सी सम्भावना या धारणा हो तो बता दो, कोई बात नहीं, आपसी संबंध वैसे ही हमारे रह जायेंगे, मन को कोई ठेस नहीं लगेगी।'

तब डॉक्टर साहब ने बड़े ही आदरभाव में सहज होकर बहुत ही नम्रता से कहा कि 'आप दोनों ने जो कुछ मिलकर तय किया है, वह मुझे स्वीकार है, पिताजी का निर्णय ही मेरा है।' और आपने वही किया। पिताजी की आज्ञा शिरोधार्य की, उनकी बात पर अटल रहे।

समय का चक्र निर्बाध गति से आगे बढ़ता गया। डॉ. साहब सरदार पटेल मेडिकल कॉलेज में आ गये। द्वितीय वर्ष MBBS पूरा कर लिया। विमला पढ़ाई में आगे बढ़ नहीं पाई। सर्दियों में मेरी माताजी अस्वस्थ हो गई। उनकी तीव्र इच्छा थी कि विमला (पोती) की शादी देख लूं। मेरी धर्मपत्नी ने मुझे कहा—मगर मुझे भैरारामजी की बात का ख्याल आ गया कि 'अब शादी मास्टरजी मैं कहूंगा तब होगी।' मैंने कहा—'मैं उनके कहने पर ही बात करूंगा।' मगर मां का स्वास्थ्य बिगड़ते देख व उनकी भावना को समझते हुए बात करने की सोची। तभी अप्रैल में मेरे मित्र श्री गुगनरामजी *MA* हिन्दी की परीक्षा दे रहे थे। मैं उनके साथ बीकानेर गया। उनका लड़का महेन्द्र भी डॉ. साहब के साथ ही कालेज में पढ़ रहा था और रूम पार्टनर भी था। हम दोनों वहीं उनके साथ रुके। शाम को हम यूं ही घूमने गये तो गुगनरामजी ने कहा 'विमला की अब शादी कर देनी चाहिये।' 'मेरे 'क्यों' के जवाब में वे बोले कि 'क्या पता बाद में लड़का इंकार कर दे ?' मैं एक बार रुका, थोड़ा स्तब्ध हुआ और सोचा 'क्या पता इनके लड़के के साथ डॉक्टर साहब हैं, उन्होंने ऐसी कोई बात कही हो।' मैं मन में इस सोच को दबा नहीं पाया—और पूछ ही लिया तो बोले कि 'नहीं, ऐसी कोई बात नहीं सिर्फ मेरे मन में यह बात आई, और कह दी। देखो, चाहे ऐसा कुछ नहीं होगा किन्तु समय बीतने पर यदि लड़के ने इंकार कर दिया तो समस्या हो जानी है।'

मैंने सारी बातें लौटकर अपनी पत्नी को बता दी। वह सरल स्वभाव ग्रामीण महिला थी अतः थोड़ी चिन्तित हुई—मैं तो चिन्तित था ही। भैरारामजी को बुलाने के लिए पत्र लिखा ताकि एक बार बातचीत हो जाये। वे पत्र मिलते ही आये, बात हुई, सुनी फिर बोले (वही विनोद भरे स्वर) कि 'शादी के लिए तो थोड़े और ठहरो। हां विमला के लिए रोटियां अगर कम पड़ गई हैं आपके यहां तो मैं इसे अपने साथ घर ले जाता हूं। फिर एकदम गम्भीर स्वर में बोले—'चिन्ता न करो मास्टरजी, मैं वैसा आदमी नहीं कि वचन दे मुकर जाऊँ और न ही ऐसा मेरा डॉक्टर।' उसके बाद और कुछ दिन बीते। लोगों से तरह-तरह की बातें अफवाहें सुनने में आयी कि फलां

आदमी भैरजी को कार देगा, ये देगा, वो दे रहा है या रिश्ता कर रहा—और सचमुच में भी, ऐसा लोग रिश्ते लेकर उनके द्वारा तक गये मगर वचनों के धनी व बात के पक्के श्री भैरारामजी ने सबको स्पष्ट मना कर दिया और 'रिश्ता हो गया है' यही कहा।

उसके बाद, मई 70 में आप मेरे पास आये और बोले कि 'अब शादी करनी है।' मेरे पूछने पर कि 'बात पक्की ही जम गई है।' तो आपने कहा—'हां, और अब ही बीकानेर जाओ और मेरा नाम ले हनुमानसिंह से बात व तारीख पक्की कर आओ।' मैंने कहा 'चौधरी साहब आप चलो' तो बोले 'नहीं, मेरे विचार से यह कार्य आप ही को करना है।' फिर मैं बीकानेर गया। डॉ. साहब से बात हुई उन्होंने सुनकर कहा—यूं तो आप दोनों ने जो तय कर लिया वह समय ठीक है मगर मैं छः माह और चाहता था। किन्तु पिताजी की आज्ञा सर्वोपरि है। मैं बीकानेर से ही बारात लेकर आऊंगा।' बात तय हो जाने पर मैं पुनः श्रीडूंगरगढ़ लौटा और शादी की तारीख तय की 15 जून, 1970।

15 जून, 1970 को 20 बारातियों को लेकर गोडास से डॉ. साहब आये मगर भैरारामजी नहीं आ पाये। शादी बहुत ही सादगी और बिना दहेज तथा फिर एक रुपये के शकुन को देकर ही सम्पन्न हो गई। जब मां ने 500/- रुपये जुहारी में अपना अधिकार जताकर डालने का विशेष प्रयत्न किया तो डॉक्टर साहब ने उनसे दो रुपये लिए और बोले—'माँ, आपसे मैंने सबसे दुगुना ले लिया अब तो खुश।' यह थी डॉक्टर साहब की त्याग की भावना, जैसा पिता वैसा पुत्र। जो भैरारामजी के सिद्धान्त एवं आदर्श बातों में मुखरित होते थे, उनके पुत्र ने उनकी अनुपस्थिति में उन्हें चरितार्थ कर उनकी शिक्षा व संस्कारों की महत्ता को सबके सामने रख आदर्श स्थापित कर दिया। ये थी उनके संस्कारों की खेती जो समय आने पर उनके पुत्र में फल स्वरूप बन कर उसकी मिठास का सबको आभास दिला दिया। जो एक रुपया लेते हैं वह फिर कैसे बस किराया और दहेज को लेने पर सहमति जता सकते थे।

इस तरह 15 जून, 1970 को श्री भैरारामजी और मैं विधिवत समधी हो गये। तब से अब तक उनके पास जाते, मिलते रहने का कई बार सौभाग्य प्राप्त हुआ है। एक बार भी इस महान् आर्य समाजी मेरे समधी को मैंने अपनी याददाश्त में स्वयं के बनाये आदर्शों की सड़क से नीचे उतरते नहीं देखा। इस शादी के पहले अपनी पुत्री की शादी में भी यही सब हुई। न दहेज, न दिखावा, सादा विवाह व कम बाराती आये। इसी तरह अपने छोटे पुत्र की शादी में ग्यारह व्यक्तियों की बारात ले गये, जिसमें न तो भैरारामजी थे नही डॉ. हनुमानसिंह।

यही प्रक्रिया छोटी लड़की की शादी में देखने को मिली। कहने का तात्पर्य यही है कि आप पक्के आर्य समाजी व दहेज प्रथा के कट्टर विरोधी व दिखावे से दूर रहने वाले व्यक्ति थे और अब भी वैसे ही हैं। कथनी और करनी में अन्तर कभी देखने को नहीं मिला।

इनके साथ के सम्पर्क में इनको हमेशा अन्याय के विरुद्ध भी लड़ते विरोध करते ही पाया। ऐसा करने में इन्होंने कभी अपने परिवार-संबंधियों के साथ भी यही बर्ताव किया। अन्याय के विरुद्ध आवाज इन्होंने बहुत निष्पक्षता के साथ उठाई, बिना किसी अपने पराये की दूरी देखे। मुझे याद आता है चूरू जिलाधीश कार्यालय के सामने इन्होंने अपने ही परिवार के कुछ सदस्यों के विरुद्ध धरना देकर गोचर भूमि पर हुए नाजायज कब्जे को मुक्ति दिलवाई।

श्री भैरारामजी समाज सेवा के धर्म को निभाते हुए एक सच्चे गृहस्थ के उत्तरदायित्वों से कभी विमुख नहीं हुए। आपके त्याग व परिवार के प्रति समर्पण की भावना की मिसाल व चिरस्थायी रहेगी। बच्चों को शिक्षित करने में आपने कोई कमी या लापरवाही नहीं बरती। गांव में खेती करते, रात-रात भर जागकर, याद है हमें इनके वो लम्बे चमड़े के जूते जिन्हें पहनकर 'भैरजी' खेतों की रखवाली में नींद भी भूल जाते थे। इनके ऊंट गाड़े को चलाने वाला इनका आदमी भी बहुत मेहनती था। श्रम से कभी घबराये नहीं। तारानगर वाली चक्की तो आप चलाते ही थे। किसी की शिक्षा सुविधा में कोई कमी न रहे, यही इनकी मूल सोच रहती थी। गृहस्थ जीवन का पालन करते-करते आप समाज सेवा को भी ना भूले, जब जरूरत पड़ी तब आगे ही रहे। एक ही व्यक्ति द्वारा दो-दो जिम्मेदारियों का इतना सहज एवं सही निर्वाह अपने आप में अद्वितीय क्षमता का परिचायक है।

इनका समाज सेवा करते हुए सामाजिक बुराइयों व कुरीतियों का कट्टर एवं खुले शब्दों में विरोध करने वाला व्यक्तित्व ही सदैव मुखरित रहा। दहेज प्रथा, बाल विवाह, नारी अशिक्षा, दिखावा, मृत्युभोज अथवा अन्य कोई आडम्बर—इनके विचार तो इन्हें तीर की भांति भेदने, इनका उन्मूलन करने की आदर्श प्रेरणा देने में ही व्यतीत हुए।

जैसे ही आप गृहस्थ जीवन की जिम्मेदारियों से मुक्त हुए आपने नारी शिक्षा के लिए अलख जगाने हेतु अपने-आपको संकल्पित कर लिया। तब से आज तक आपको इसी पावन यज्ञ में समर्पित भाव से जुटे हुए पाया है। उम्र कभी इनको रोक नहीं पायी। 78 वर्ष की आयु को पार करने के पश्चात् भी मेरे समधी हमारे श्रद्धेय एवं हमारे अतीव प्रिय 'भैरजी' अपनी कर्मभूमि 'वैदिक कन्या छात्रावास' में पूर्णतः समर्पित भाव लिए, वही युवा चेहरे सी ताजगी और अपने क्रांतिकारी विचार और 'कुछ कर जाओ' वाली बुलन्द अपनी भावाभिव्यक्ति को साक्षात् सिद्ध करते हुए ही मिलते हैं।

तारानगर की वे ग्रामीण छात्रायें जिन्हें कभी प्राथमिक शिक्षा के लिए भी घर से बाहर नहीं निकाला जाता था, आपके संरक्षण में एक नहीं सौ से ऊपर ढाणी-ढाणी व कस्बों से आयी बालिकायें उच्च शिक्षा के साथ-साथ वैदिक शिक्षा प्राप्त कर रही हैं।

आप अपने इस पुनीत कार्य में अपना सर्वस्व जीवन और यथाशक्ति से अधिक अर्थ लगाकर अपने परिवार के हर सदस्य को अपनी मूल भावना से जोड़कर इसके निर्माण कार्य में लगे हुए हैं। आपसे प्रभावित होकर समाज के प्रतिष्ठित सेठ-साहूकारों ने भी इनके पुनीत कार्य की महत्ता समझकर अपनी-अपनी सामर्थ्य अनुसार वित्तीय सहायता उपलब्ध करवायी और करवा रहे हैं।

अन्त में यही कह सकता हूं कि इनका जीवन अनुकरणीय है। ऐसे व्यक्ति समाज में विरले ही होते हैं। मेरा ऐसा सौभाग्य है कि मुझे ऐसे आदर्श, सच्चे समाज-सेवक और नेक गृहस्थ रूप में समधी मिले। पिता के समान उनकी राह पर चलने वाले मधुरभाषी और श्रवण सा सोच लिये पुत्रवत दामाद मिले। अपनी बच्ची का भाग्य देखकर मेरे अन्तरमन में बहुत प्रसन्नता और अव्यक्त कर सकने वाली आत्म-संतुष्टि है। श्री भैरारामजी जैसे समधी पाकर मैं व आप जैसे पिता समान श्वसुर व माता तुल्य स्व. माताश्री व डॉक्टर साहब को पाकर हमारी पुत्री धन्य हो गयी।

अकाल से जूझने वाली कन्या सुप्रिया

प्रश्न सामर्थ्य और क्षमता का नहीं, उच्चस्तरीय भावनाओं का है। भगवान् बुद्ध के समय श्रावस्ती में भयंकर अकाल पड़ा। साधन सम्पन्न लोग न केवल घरों में छिप गये अपितु अपने पास उपलब्ध अन्न, वस्त्र भी छिपा बैठे। ऐसे समय बुद्ध के सामने सुप्रिया नाम की एक कुलीन कन्या ने राज्य के भरण-पोषण की प्रतिज्ञा की। वह घर-घर जाकर अन्न-वस्त्र माँगने लगी। उसकी निष्ठा से जन भावनाएँ प्रेरित हो उठीं और देखते-देखते अकाल से लड़ने वाली शक्ति सामर्थ्य जुटकर खड़ी हो गई।

कभी भी परिस्थितियाँ कितनी ही औंधी-सीधी क्यों न हों, यदि प्रारम्भ में कुछ ही निष्ठावान देवदूत खड़े हो गए तो न केवल लक्ष्य पूर्ण हुआ, अपितु वह इतिहास भी अमर हो गया।

मेरे प्रकाशस्तम्भ ! मेरे पिताश्री

डॉ. हनुमानसिंह कस्वां

अपने श्रद्धेय पुरुषों के बारे में जब कुछ सोचा या लिखा जाता है तो उनके गुण-विशेषताएं, अच्छाइयां और स्मरणीय प्रसंग ही हमारे समक्ष आते हैं। अपने पूज्य पिताश्री भैरारामजी आर्य के बारे में मैं ऐसा कुछ भी नहीं लिखने जा रहा हूँ। उनका ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते उनकी आशाओं का केन्द्र तो मैं जरूर रहा हूं पर अपने जीवनकाल में मुझे व्यक्तिशः उनका सान्निध्य बहुत ही कम मिला है।

किसी वृक्ष के बीज को भूमि में बोने और अंकुरित होने में प्रकृति का हाथ होता है पर अंकुरित होकर पौधा बनने के बाद विशाल वृक्ष बनाने की प्रक्रिया का निर्वाह एक चतुर माली और अनुभवी किसान ही कर सकता है। उसे इस बात की कोई आकांक्षा नहीं रहती है कि इस वृक्ष की शीतल छाया में वह अपनी खाट बिछाकर बैठेगा या इसके मधुर फलों का रसास्वादन करेगा। उसका लक्ष्य तो वृक्ष के पूर्ण विकास का ही रहता है और ऐसा लक्ष्य लेकर चलने वाले सफलता के सूत्रधार बन जाते हैं और ऐसा ही लक्ष्य लेकर चलने वाले हैं मेरे पूज्य पिताश्री भैरारामजी आर्य।

श्रम व स्नेह से भरपूर व्यक्तित्व

स्वतन्त्र भारत की पहली वर्षगांठ के बाद 16 अगस्त, 1948 को ग्राम 'गोडास' पोस्ट 'ढाणी आशा' तहसील तारानगर जिला चूरू (राजस्थान) में मेरा जन्म हुआ। अपनी तीन वर्ष की धुंधली सी स्मृति में पिताजी का श्रमशील व स्नेही रूप ही सामने आता है। जब सम्वत् 2008 में घर में मकान बनाने के लिये रात-दिन लगकर पिताजी 'कुई' खोदने में लगे रहते थे। मेरे लिये खेत से एक छोटी-सी हिरणी ला दी थी जिसे मैं अपनी चारपाई से बंधवा कर सोता था, खेलता था। पिताजी जानते थे छोटे बालक को घर के काम-काज में रुचि नहीं होती।

शिक्षा के प्रति समर्पित भाव

पिताजी स्वयं औपचारिक शिक्षा प्राप्त नहीं हैं पर शिक्षा के महत्व व उपयोगिता को वे प्रारम्भ से ही समझते रहे हैं। इसलिए अपने ममत्व को अधिक महत्व न देते हुए 5-6 वर्ष की आयु में ही मुझे गांव से आधा मील दूर 'ढाणी आशा'

की प्राथमिक शाला में भर्ती कराने के लिये ताऊजी श्री मालूरामजी के साथ भेज दिया। वहां श्री प्रह्लादरायजी मेरे अध्यापक थे। घी, शक्कर व बाजरी की रोटी का चूरमा मेरे दोपहर का भोजन होता था। अगले साल जब मैं कक्षा दो की परीक्षा दे रहा था तब पिताजी ने भी उसी विद्यालय से कक्षा 5 की परीक्षा मेरे साथ में दी। बाप-बेटे का इस तरह एक साथ परीक्षा देना, पिताजी के शिक्षा के प्रति समर्पित संस्कारों को सिद्ध करता है। उनके इन्हीं संस्कारों व समर्पित भावों ने मुझे एम.बी.बी.एस., एम.एस. जैसी परीक्षा को उत्तीर्ण करने की सामर्थ्य व प्रेरणा प्रदान की। आधुनिकता व वैज्ञानिक आविष्कार की जानकारी के रूप में लम्बे एरियल, बड़ी लाल बैटरी वाले रेडियो के प्रथम दर्शन भी मैंने यहीं ढाणी आसा में 'इचकदाना बिचकदाना-दाने ऊपर दाना' गाना सुनते हुए किये थे, गुरु थे श्री पूर्णमल लमोरिया।

कक्षा 4 तक तारानगर में तथा 5वीं 'ढाणी आशा' में खुलने पर वहां से उत्तीर्ण कर 1958-59 में तारानगर में कक्षा 6 में प्रवेश लिया और 1962 में आठवीं कक्षा में तीसरे स्थान को प्राप्त कर उत्तीर्ण हुआ। उन दिनों कक्षा IX में ही वैकल्पिक विषयों का चयन करना पड़ता था। सामान्य विज्ञान में मेरे 58% अंक थे। पिताजी की इच्छा मुझे डॉक्टर बनाने की थी। उस समय तारानगर में सिर्फ कला विषय ही था और जीव विज्ञान वर्ग की शिक्षा हेतु चूरू जाना आवश्यक था, जहां बागला हायर सैकण्डरी स्कूल में 'विज्ञान वर्ग' था। किन्तु वहां श्री कान्तिलालजी गोयल से मिलने पर उन्होंने Biology में स्थान खाली न होने पर दूसरे स्थान में या दूसरे वर्ग में प्रवेश की बात कही। पर साथ में यह भी सलाह दी कि यदि दूसरी जगह जीव विज्ञान में प्रवेश मिल जाये और फिर स्थानान्तरण होकर यहां आओ तो यहां प्रवेश मिल जायेगा। पिताजी की पक्की धुन, दृढ़ निश्चय व भविष्य के प्रति ठोस सोच ने फिर मुझे सादुलपुर में भर्ती करवाया और आखिर फिर T.C. लेकर 27.7.62 को बागला हा. सै. स्कूल, चूरू में भर्ती करवा ही दिया। पिताजी सदैव 'संघर्ष में ही सफलता का सूत्र छिपा रहता है' पर विश्वास करते रहे हैं। इसी समय के एक और प्रसंग को याद कर अवश्य बताना चाहूंगा।

जुलाई, 62 में जब बागला स्कूल, चूरू में प्रवेश लेने आया तब वहां पिताजी के मित्र खासोली सरपंच श्री चिमनाराम दैया बागला स्कूल के आगे मिले और पिताजी से पूछा कि 'लड़के को कहां लाये हो।' पिताजी ने जब Biology दिलाने व डॉक्टर बनाने की बात कही तब श्री चिमनारामजी ने कहा कि 'राबड़ी पीने वाले डॉक्टर नहीं बनते। डॉक्टर तो पैसे वाले तथा फल-फूल खाने वाले बनते हैं।' इस बातचीत ने मुझे अहसास करा दिया कि डॉक्टर बनने के लिये तथा पिताजी का सपना साकार करने के लिये मेहनत तो करनी ही पड़ेगी।

ममत्व व वात्सल्य

पढ़ाने के लिये मुझे गांव से दूर तारानगर भेज तो दिया पर माँ से अधिक कोमल पिता का मन मेरे से क्षण भर को भी दूर नहीं होता था। तारानगर व चूरू में

दोनों जगह में रोटी हाथ से बनानी पड़ती व पानी भी दूर से भरकर लाना होता था। तारानगर में कच्चे झोपड़ों में रहकर पढ़ते थे। लाईट नहीं थी, चिमनी की रोशनी होती। कई बार पिताजी रात को 3-4 बजे ही गांव से आ जाते। पूछने पर बताते रात को गांव में नींद नहीं आती। लड़का अकेला चिमनी से पढ़ता है, कहीं सो गया, झपकी लगी और झौपड़े में आग लग गई तो ? यह था उनका ममत्व और कर्त्तव्य बोध।

जुलाई, 65 में लोहिया कालेज चूरू में I year TDC (Science) में प्रवेश लेकर 52% से उत्तीर्ण की, किन्तु मेडिकल प्रवेश 52.4% पर रहा अतः भोपाल नोबल्स कालेज उदयपुर से पुनः I year TDC (Science) की परीक्षा देकर 64% अंक लेकर उत्तीर्ण की और जुलाई 1967 में सरदार पटेल मेडिकल कालेज, बीकानेर में दाखिला लिया। जब 52% अंक पर मेडिकल कालेज में सन् 1966 में दाखिला नहीं मिला तो शिक्षा का एक वर्ष व्यर्थ न जावे, मनुष्य की अपेक्षा पशुओं का डॉक्टर ग्रामीण क्षेत्रों में अधिक उपयोगी होगा, यह सोचकर पिताजी ने मेरा प्रवेश वेटरनरी कालेज में करवा दिया पर मैंने पुनः परीक्षा देकर अंक सुधारने की बात पर जोर देकर आग्रह किया तो आपने अनुमति दे दी।

मेडिकल प्रवेश की प्रक्रिया भी आसान नहीं रही। मेरे पास जो फार्म था, वह अंग्रेजी में था जिसे पूरा करने में कई दिक्कतें थी। पिताजी के प्रयास से ही चूरू के पास थैलासर गांव के श्री नारायणजी परिहार के घर से हिन्दी का दूसरा फार्म लाये। उसमें स्थायी निवासी के प्रमाणपत्र पर हस्ताक्षर करवाने में श्री शीशरामजी पूनिया जिला प्रमुख का सहयोग रहा।

चारों भाई-बहिनों की शिक्षा अच्छी से अच्छी हो पिताजी के इस सोच को सार्थक बनाने में सन् 1962-74 का समय आर्थिक दृष्टि से भी संघर्षमय रहा। पिताजी ने तारानगर वाले घर में आटे की चक्की लगाई जिसमें तौलने, मशीन का एवं आटा पीसने का काम मैं भी करता था।

पिताजी के मार्गदर्शन, आशीर्वाद व आदर्श का सम्बल पाकर फरवरी 1972 में एम.बी.बी. एस. किया। 13 मई, 1975 से सेवा प्रारम्भ हुई और 1976 में एम.एस. बना। छोटी-छोटी बातें, घटनायें बहुत हैं जो कुछ धुंधली-धुंधली याद है, कुछ है, कुछ नहीं भी है मगर पिताजी द्वारा प्रदत्त स्नेह और स्नेह में दी गई सीखें, जिन्हें मैं कभी भूल नहीं सकता, वे हैं—

1. समय की कीमत समझो।
2. शिक्षा की सार्थकता समझो।
3. संघर्ष से मुंह मत मोड़ो।
4. करनी और कथनी में भेद मत करो।
5. शब्दों की वाणी की अपेक्षा कर्मों की वाणी अधिक प्रभावी होती है।
6. आदर्श के प्रति समर्पित रहो।

पिताजी ने जो-जो सीखें हमें दी उन्होंने समय-समय पर और आज भी अपने जीवन में साक्षात् यह आभास दिलाया है कि कुछ भी असम्भव नहीं है। निरन्तर सत्य की ओर, सत्य का चिन्तन करते, निरपेक्ष भाव से लक्ष्य की ओर निर्बाध गति से बढ़ते रहो तो बाधायें स्वतः ही दूर होंगी और सफलतायें द्वार पर आ खड़ी होंगी। ऐसा वात्सल्य पिताश्री से पाकर मैं अभिभूत हूं। पिताजी के लिए शब्दों में कुछ अभिव्यक्ति करना मुझे मेरे ही प्रकाश स्तम्भ को लौ दिखाने के समान लगता है, जो मेरी सामर्थ्यशक्ति से बाहर है—मैं जिनसे हूं उनके लिए मेरे पास सिर्फ श्रद्धा ही होगी। मेरे पास जो भी शब्द या अर्थ हैं, सब उनके ही आशीर्वाद का फल है। मैं तो सिर्फ अपने सौभाग्य पर ईश्वर को अन्तर से नमन व पिताश्रीजी को भी नमन ही करूंगा एवं यही कामना करता हूँ कि ईश्वर ऐसे पथप्रदर्शक और प्रेरणा के स्रोत पिता सबको देवें ताकि संसार का तम दूर हो, सर्वत्र खुशियों का उजियारा फैले, पक्षी चहकें और फूलों की सुरभि फैले, सबका जीवन सुगन्धमय होकर जग को आनन्दित कर देवे।

नारी—अधिकार का निर्णय

एक बार काशी विश्वविद्यालय में स्त्रियों को वेदाध्ययन का अधिकार है या नहीं, इस पर हिन्दू संस्कृति के महाप्राण पं. मदनमोहन मालवीय ने विद्वानों की सभा आयोजित की। पंडितों ने अपनी-अपनी तरह के पक्ष रखे पर पं. प्रमथनाथ तर्कभूषण ने अपाला, घोषा, विश्वावारा के ब्रह्मवादिनी होने, मनु की पुत्री इला द्वारा ब्रह्माजी के यज्ञ का संचालन करने, गार्गी द्वारा याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ करने, रावण द्वारा सीताहरण के समय उनका यज्ञोपवीत तोड़ने जैसे अकाट्य तर्क रखे, तो एक भी विद्वान् उनका उत्तर नहीं दे पाया। तब से बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी में लड़कियों को भी वेद पढ़ाया जाने लगा। पर आज भी प्रतिगामिता उन तथ्यों की अवहेलना और उपेक्षा करती रहती है। जाति प्रथा पर भी मालवीय जी द्वारा कराये गये निर्णय ऐसे ही थे।

'बेटी ! बड़े घर की बेटी बनना'

श्रीमती विमला

मैं जब कक्षा छः या सात में पढ़ रही थी उस समय मैंने एक दिन मेरे पिताजी एवं माताजी को मेरे पूज्य श्वसुरजी के बारे में बात करते हुए सुना था। यद्यपि वे मेरे सामने कुछ नहीं कह रहे थे किन्तु मेरे सम्बन्ध के विषय में कुछ कह रहे थे। अतः बाल सुलभ जिज्ञासावश मैंने छिपकर सुना कि 'आस-पास के गांवों में उन्हें लोग बड़े आदर से देखते हैं, वे बात के बड़े धनी हैं, कट्टर समाज सुधारक हैं। अपने गाँव की कई रूढ़ियों मृतक भोज जैसी बुराइयों को उन्होंने दूर कर दिया है। इनके लड़के से विमला का सम्बन्ध बैठ जाय तो कितना अच्छा रहे।' तो मां ने कहा कि 'इसमें ना कि क्या बात है।' इस पर पिताजी ने कहा कि 'वे बड़े सिद्धान्तवादी हैं' पहले हाँ नहीं करते। कहते हैं कि जब लड़का विवाह योग्य होगा तब ही बात करेंगे।' मेरे को भी उस समय यही लगा कि माँ और पिताजी इतने क्यों चिन्तित हैं ऐसी क्या बात है ? क्योंकि मैं उस समय माँ और पिताजी की भावनाओं को नहीं समझती थी। किन्तु! हाँ मैंने भी उस समय अपने बालमन में भगवान से यही प्रार्थना की कि 'हे भगवन् ! मेरे पिताजी एवं माँ की इच्छा जरूर पूरी करना।'

ईश्वर ने मेरी प्रार्थना स्वीकार की या और कुछ हुआ, यह मैं अब भी नहीं जानती। एक नारी होने के कारण बस यह समझती हूँ कि अपने-अपने पूर्व जन्मों के सम्बन्धों के फलस्वरूप ही किसी से संबंध होता है। मेरा विवाह समय आने पर हुआ। अपने विवाह संस्कार के विषय में इतना ही लिखना चाहती हूँ कि गाँव में मेरा विवाह हुआ क्योंकि पिताजी वहीं पर हाई स्कूल में अध्यापक थे। बारात गोड़ास से आई थी। पचीस-तीस लोग आये थे। किन्तु उनमें पिताजी (श्वसुरजी) नहीं थे, क्योंकि वे बारात में ग्यारह (11) बारातियों से ज्यादा लाना पसन्द नहीं करते थे। उधर बारात का स्वागत सत्कार करने वाले तो सैकड़ों की संख्या में थे और बाराती डॉक्टर सा. के कुछ साथी। खैर वैदिक विधि से विवाह हुआ। दिन में विवाह संस्कार सम्पन्न हुआ।

जब बहू बनकर मैं आई तो सबसे पहले पिताजी ने ही मुझे घर के रहन-सहन और व्यवस्था के बारे में बताया। उनका वह प्रथम दिन का उपदेश व

सम्बोधन अभी तक नहीं भूली हूँ और न ही उनके वात्सल्य मय पवित्र हाथ का स्पर्श-सुख जो मेरे सिर पर उन्होंने पहले फेरा था।

हाथ फेरते हुए कहा कि बेटा देख तू इस घर की, इस परिवार की बड़ी बहू है अतः बड़े घर की बेटी की तरह ही ता जिन्दगी रहना। उन्होंने मुझे याद दिलाया कि मुंशी प्रेमचन्द की उस कहानी को सदा अपना आदर्श मानना जिसका शीर्षक 'बड़े घर की बेटी' है। इस घर को अपना समझना, किन्तु पीहर, पीहर को भी दूसरा नहीं समझना।

उसी दिन उन्होंने मुझे कहा कि रात को सोने से पहले और फिर प्रातः उठते ही 'गायत्री मंत्र' का जाप करना, इससे हमारी बुद्धि निर्मल और शुद्ध होती है। शादी के बाद पाँच वर्षों तक डॉक्टर सा. बीकानेर में एम. एस. में पढ़ते रहे तब मैं गाँव में ही रही। मेरी पूज्य दोनों माताएँ (सास) भी देवी रूप थीं। एक प्राण दो शरीर रहीं। वे ग्राम के वातावरण में पली होने पर भी पिताजी के हर कार्य में पूरा सहयोग ही नहीं दिया करती थीं अपितु आपस में अपने सौभाग्य पर भी गर्व करती थीं कि अपने को ऐसे श्रेष्ठ पति मिले हैं जिनका अधिकाधिक समय समाज सेवा में ही बीतता है, कितने लोग इनके पास सलाह-मशविरा लेने आते हैं।

इन पांच वर्षों में पिताजी ने मुझे एक नगर में रहने वाले डॉक्टर की पत्नी को क्या-क्या सावधानियाँ बरतनी चाहिए ? गाँव अथवा शहर के लोग कितने चालाक और चतुर होते हैं उनसे कैसे बचना चाहिए ? चालाक तो नहीं होना चाहिए किन्तु हम चालाक के चंगुल में न फंसें इसके प्रति भी कैसे सावधान रहें इसकी अनेक सच्ची घटनाएँ सुना-सुना कर मुझे ट्रेनिंग दी जो अब मेरे काम आ रही है।

पिताजी ने ही मुझे सिखाया कि बेटी, यदि तुम परिवार के सभी सदस्यों से आदर, स्नेह और सम्मान चाहती हो तो पहल तुम्हें ही करनी होगी, तुम पहले बड़ों का, बराबर वालों का आदर करो, छोटों को प्यार करो तो तुम्हें भी वैसा ही उत्तर मिलेगा। मैंने पिताजी के बताये हुए सारे उपदेशों को पालन करने का अभ्यास किया, और आज भी उनके अनुसार ही चलती हूँ। भगवान की कृपा से आज हमारे परिवार में सभी का आपसी प्रेम अटूट और अनुपम है।

यह सब पूज्य पिताजी का ही आशीर्वाद है। मैं सदा उनका पावन स्मरण करती रहूँ, यही ईश्वर से प्रार्थना है।

प्रेरणा के जीवन्त स्वरूप– मेरे दादाजी

डॉ. सुमीता कस्वां

नश्वर सृष्टि की विभिन्न उत्पत्तियों में मनुष्य जाति सर्वोत्कृष्ट है। वेदों में भी श्वासोच्छ्वास प्राणियों में मनुष्य को उच्चतम प्रजाति बताया गया है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवनकाल में समय चक्र की परिधि में एक जीवन्त संसार विद्यमान होता है। प्रत्येक मानव अपनी-अपनी दृष्टि से सांसारिक कार्यकलापों में जीवन के विभिन्न उद्देश्यों के साथ अपने आप को समाज से और राष्ट्र से जोड़े रखता है। व्यक्ति का अपना दृष्टिकोण समाज के दृष्टिकोण से कहीं न कहीं, किसी रूप में जुड़ा रहता है, तथा प्रभावित रहता है। ऐसे ही व्यापक दृष्टिकोण के स्वामी श्री भैरारामजी आर्य के उत्कृष्ट कुल में सबसे बड़ी सुपौत्री होने का सौभाग्य मुझे पूर्व जन्मों के सुकर्मों से प्राप्त हुआ। यह ईश्वर की असीम अनुकम्पा का प्रसाद ही है कि मेरा जन्म ऐसे कुल में हुआ जहां स्त्री जाति पूज्य रही है।

23 वर्ष के लघु जीवन काल में मुझ पर दादाजी के प्रेरणादायी व्यक्तित्व का सदैव प्रभाव रहा है। दादाजी ने सदैव हम सभी पौत्र-पौत्रियों को समान रूप से स्नेहाशीष दिया। यह हमारा सौभाग्य ही है कि हमें दादाजी का स्नेह सानिध्य बचपन से ही मिलता रहा। मेरी स्मृति के क्षणों में कोई भी ऐसा क्षण मुझे याद नहीं है जब मुझे कभी लड़की होने के नाते नकारा गया हो अपितु सदैव इस प्रेरणा से आगे बढ़ने को कहा कि—स्त्री/नारी किसी भी क्षेत्र में पुरुष से कमजोर नहीं है अतः जीवन में कुछ कर गुजरने की ललक रखो और उच्च से उच्च शिक्षा प्राप्त कर स्वयं को सांसारिक एवं व्यावसायिक रूप से सबल बनाओ।

दादाजी सदैव यही कहते रहे हैं कि लड़का अगर लायक नहीं है तो केवल एक ही घर अंधेरमय होगा किन्तु लड़की अगर अशिक्षित है तो कुल को अंधेरमय कर सकती है। बचपन में इन गूढ़ बातों को समझ नहीं पायी किन्तु अध्ययन के लिये घर से बाहर निकलने पर इन विचारों की सार्थकता एवं महत्ता का अनुभव हुआ। अपने आस-पास स्त्री जाति के प्रति संकीर्ण मानसिकता के लोगों को देखकर सदैव ही ईश्वर की कृपा के प्रति आभार व्यक्त करती रही हूँ कि उन्होंने हमें महान् नैतिकता वादी प्राणी की छत्रछाया में बड़ा होने का अवसर दिया।

एक छोटी-सी बात सदैव दिल को छू लेने वाली रही—दादाजी हमेशा हम सबको आप कहकर बुलाते हैं—कभी भी तू या तुम नहीं कहा और हमें भी सदा ऐसे ही आचार व्यवहार के प्रति प्रेरित किया। हर व्यक्ति के सम्मान, आदर के साथ व्यवहार व बातचीत में मधुरता—इस बात के प्रति सदैव जोर दिया। वे सदैव इस बात पर जोर डालते कि कार्य कोई छोटा नहीं है—हर कार्य अपने आप में बड़ा है अत: काम करने में कोई ऊंच-नीच मत देखो।

दादाजी ने सदा ही हमारे जिज्ञासु मन को अपने सहज और सरल तर्कों से शान्त किया है। बचपन में जब भी गांव जाते थे तो मरुभूमि की एक-एक चीज से हमारा निकट परिचय उन्होंने ही करवाया। बाल-मन की बेतुकी जिज्ञासाओं को कभी डाँट कर टाला नहीं बल्कि संयम और प्यार से हमें समझाया। बचपन की एक घटना मुझे अकसर याद आती है। एक बार मैं और मेरा अनुज सुमेश गांव गए थे। हम दोनों ने उस वक्त ऊँट को पहली बार इतनी नजदीक से देखा था। हम दोनों ने दादाजी के सामने सवालों की झड़ी लगा दी थी और दादाजी हमारे सभी प्रश्नों का उत्तर देते रहे और पूरी शाम हमारी जिज्ञासा को शांत करने में बितायी।

सामाजिक कार्यों में व्यस्त दिनचर्या के बावजूद दादाजी अकसर शाम को संगीत साधना में भी लगे रहते थे। हारमोनियम बहुत अच्छा बजाते हैं तथा हमें अच्छे-अच्छे भजन सुनाते और उनमें छिपे गूढ़ अर्थों को सरल भाषा में बताते थे। दादाजी सही मायने में पूर्ण रूप से कर्म और धर्म से सच्चे आर्य समाजी हैं। मूर्ति-पूजा का सदैव प्रतिरोध किया है। सत्यार्थ-प्रकाश के सन्दर्भ में हमें जितना भी ज्ञान है वो सब दादाजी की ही देन है। स्मृति क्षणों की पुस्तक को अगर मैं खोलकर आपको बताने लगूँ तो अनेक प्रेरणादायी बातों का खुलासा हो सकता है किन्तु स्थान की सीमा रेखा यह आज्ञा नहीं दे रही।

दादाजी ने हमारे पूरे परिवार को जिस ज्ञान, समझदारी और संयम के नेह से सींच कर विकसित किया है वह हम सबके लिये गर्व की अनुभूति है। आज न सिर्फ हमारे दादाजी का व्यक्तित्व प्रेरणादायी है अपितु समाज की विशिष्ट अपेक्षाएं हमारे परिवार से भी जुड़ गयी हैं। दादाजी के जीवन का प्रत्येक क्षण प्रेरणास्पद एवं अनुकरणीय है। उनका महान निस्वार्थपूर्ण और त्यागमय जीवन इस बात का उदाहरण है कि कोई भी व्यक्ति अगर दृढ़ निश्चय कर ले तो अपना और अपने परिवार का कल्याण कर सकता है, बल्कि साथ-साथ समाज और राष्ट्र के प्रति अपने नैतिक दायित्वों का निर्वहन भी सफलतापूर्वक कर सकता है।

ईश्वर से सदैव यही प्रार्थना है कि वे हमारे दादाजी को दीर्घायु प्रदान करें ताकि वे हमारा परिवार, समाज उनके वंदनीय कृत्यों से और लाभान्वित हो और समाज को एक सच्चे आर्य समाजी की सेवाएं मिलती रहें.... मिलती रहें।
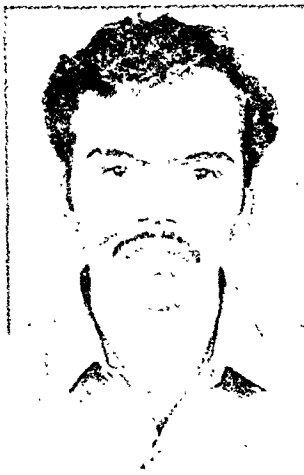
हमारे दादाजी हमारे आदर्श

सुमेश व सपना कस्वां

बचपन में अकसर बच्चे अपने दादा-दादी से राजा-रानी या शेर, बिल्ली आदि की रोचक कहानियाँ सुनते हैं किन्तु हमारे साथ ऐसी बात नहीं हुई। इसके शायद दो कारण रहे। एक तो हमारे दादाजी का तेजस्वी व्यक्तित्व जो हमें ऐसी कहानी सुनने को कभी प्रेरित नहीं करता दूसरा दादाजी से लम्बी ज्ञानपूर्ण बहस जो अकसर हमारी बातचीत का जरिया होती। कहने का तात्पर्य इतना ही है कि जब भी हमें अवसर मिलता हम दादाजी से धर्म, शिक्षा और बाह्य आडम्बरों से ग्रसित समाज की दोषपूर्ण मान्यताओं पर ज्ञानपूर्ण बातों का सिलसिला शुरू रखते।

हमारे दादाजी—एक साधारण परिवेश में जन्मे सरल, स्पष्ट और दृढ़निश्चयी व्यक्तित्व हैं। अगर शैक्षिक योग्यता के मापदण्ड से मुक्त होकर व्यावहारिक मानदण्डों से देखें तो यह कह सकते हैं कि 'निःस्पृह भाव से सच्ची समाज सेवा में जुटे हैं, हमारे दादाजी' भूमिका पुत्र—

हमारे दादाजी की वेशभूषा—सरल, हाथ में सदैव पथ प्रदर्शक और सबको सहारा देने का वायदा करती हुई लाठी और चमड़े का बैग। दादाजी की रुचिकर चीज़ों में से है—घी में गोंद या मेथी के लड्डू, दूध, बाजरे की रोटी, कढी और बिना मिर्च की सब्जी। सबसे महत्त्वपूर्ण अनुशासित जीवन—सुबह जल्दी उठना, पूजा-हवन इत्यादि करना, गोधूलि वेला से पूर्व शाम का भोजन करना।

उपर्युक्त पारिवारिक अनुभवों के अतिरिक्त एक दूसरा अनछुआ पहलू भी है वो है हमारे दादाजी का उद्धारोचित कर्म। समाज की वर्तमान दशा हम सबसे छिपी नहीं है जहां स्व-संस्कारोचित शिक्षा पूर्ण रूप से लुप्त है। समाज का मूल आधार नारी निरन्तर रूढ़िवादी विचारों और अभिशापों से ग्रसित है, समाज का भविष्य—युवक नशोन्मुख होकर भोगवाद की ओर अग्रसर है। चारों तरफ स्वार्थ, मैं-मैं की अन्धी दौड़। ऐसी प्रतिकूल परिस्थितियों के उपरान्त भी दादाजी ने समाज को स्वच्छ एवं सफल बनाने के लिए अपने आप को सदैव तत्पर रखा। आडम्बरों से अपने को कोसों दूर रखते हुए आर्य समाज की विचारधारा हमारे सामने प्रस्तुत की। इस संघर्षपूर्ण जीवन में यूँ तो अनेक अच्छे कार्य दादाजी ने किये किन्तु सबसे

महत्त्वपूर्ण एवं गौरवपूर्ण कार्य रहा—छात्राओं के लिये छात्रावास स्थापन, जहां नारी को पितृगृह में उस वस्तु के समान रखा जाये कि—रखने में नुकसान और बेचने में भी परेशानी—जहाँ पिता अपनी सामर्थ्य अनुसार शीघ्रातिशीघ्र लड़की के दायित्व से मुक्त होना चाहे—ऐसे समाज में नारी शिक्षा का बीज बोना—इसकी महत्ता और विशालता का विचार अपने आप में बहुत गौरवपूर्ण है। इस सुकार्य की शुरूआत कड़वी रही किन्तु विरोधी लोग इसके परिणाम देखकर नतमस्तक हैं। अपने विचारों को शब्दों में बांधने की कला हममें नहीं है लेकिन दादाजी के साथ बिताये प्रत्येक क्षण में हमने कुछ-न-कुछ सीखा है। वस्तुतः हमारे परिवार की समृद्धि, प्रसिद्धि में ईश्वर का आशीर्वाद व दादाजी की मेहनत का साक्षात् रूप है।

हमारी दृष्टि में यह एक अत्यन्त ही दुरुह किन्तु महान् कार्य है कि एक किसान अपने समाज को बदलने की ठानता है। यह शुरूआत साठ के दशक में हमारे पापा को उच्च शिक्षा हेतु गांव से बाहर भेजना, दोनों बुआओं को शिक्षित करने से हुई। दादाजी ने सदैव वही किया जो मन को सही लगा। समाज की जड़तापूर्ण मान्यताओं, विचारों से अपने प्रयासों को कभी प्रभावित नहीं होने दिया।

यह हमारे लिये एक गौरवपूर्ण अनुभूति रही है कि हम ऐसे परिवार, ऐसे कुल के अंश हैं, जिसने समाज को एक ऐसी दिशा-दृष्टि दी है कि समाज में आज हमारा परिवार सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए संतोष के शिखर पर स्थित है न ईश्वर की कृपा का साक्षात् दर्शन है। अपनी अनुभूति की झलक इस श्लोक के शब्दों में हमें अकसर देखने को मिलती है

'विरला जानन्ति गुणान्, विरलाः कुर्वन्ति निर्धने
स्नेहम् विरलाः पर कार्यरताः परदुखेनापि दुःखिता विरलाः'

सारांश में यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि हमारे दादाजी ऐसे व्यक्ति हैं जो सत्य के अनन्य भक्त, जीवन के अनेक मतैक्यों को दूर करने वाले समाज के सच्चे रक्षक हैं।

दादाजी के प्रति अपने विचारों को लिखने की बात के साथ अनायास ही महात्मा डिमास्थानीज के विचार सामने आ जाते हैं 'यदि हमें अपने महान पुरुषों की भांति कर्म करने का अवसर न मिले तो हमें कम से कम अपने विचार उनकी भांति रखने चाहिए और उनकी आत्मा व विचारों के महत्व का अनुकरण करना चाहिये।'

ईश्वर से यही प्रार्थना है कि हमें सदैव हमारे दादाजी के पथ का अनुकरण करने की दृष्टि दे।

मेरा सौभाग्य कि मेरे पिताजी आपश्री हैं

श्री जीतसिंह कस्वां

मेरे दादाजी स्वर्गीय श्री मोतीरामजी कस्वां एक मेहनतकश इंसान थे। उनका मुख्य कार्य कृषि ही था। आपके दो पुत्रों में ज्येष्ठ श्री मालारामजी व कनिष्ठ श्री भैरारामजी हैं। पिताजी श्री भैरारामजी पर बचपन में ही शिक्षा प्राप्त करने की धुन थी और इस प्रेरणा के मूल हमारे दादाश्री ही थे। दादाजी की स्वयं यह प्रबल इच्छा थी कि दोनों बालक कम से कम प्राथमिक शिक्षा तो अवश्य प्राप्त करें। इस हेतु दादाजी ने यथाशक्ति प्रयास भी किये किन्तु उनका साया अधिक समय तक न रहा। ऐसे में अपने भाई के साथ कृषि कार्य करते हुए ही पिताजी ने आवश्यक प्राथमिक अक्षर ज्ञान अर्जित किया। बुजुर्ग बतलाया करते हैं, पिताजी शुरू से ही प्रखर व कुशाग्र बुद्धि के थे। उसी समय स्वतन्त्रता संग्राम की चाह देश भर में तीव्रता से भड़क उठी थी। स्वतन्त्रता की ललक व देशभक्ति की भावना गांव-गांव में जोर पकड़ चुकी थी। गांवों-शहरों से इस भावना से ओत-प्रोत युवक देश के लिए सब कुछ उत्सर्ग करने को सड़कों पर तिरंगा लिए आ चुके थे। हमारा गांव व हमारा घर भी अछूता नहीं था। ताऊजी स्वयं घर-बार का कार्य छोड़ इस संग्राम में आ गये थे। ऐसे में सारे घर की जिम्मेदारी पिताजी के कंधों पर थी जिसे उन्होंने बेहिचक और पूरी समझदारी से निभाया।

यह पिताजी का ही आशीर्वाद है और उनकी ही प्रेरणा है जो हम दो भाई व दो बहिनें आज पूर्णतः शिक्षित हैं। छोटे होने के नाते मुझे पिताजी का सान्निध्य अधिक ही प्राप्त हुआ। आपने जीवन में हमेशा एक लक्ष्य को पकड़कर ही चलना तय किया है। पिताजी कहते हैं 'जब सोच लिया कि एक बार जो करना है फिर बाद में हिचक कैसी।' कैसी भी परिस्थितियों में मैंने पिताजी को तनिक भी विचलित नहीं देखा। यही कहते, 'बिना अड़चन-बाधा के काम हो जाये तो कार्य कैसा यही तो सीख बनती है—जूझने के लिए साहस देती है।' इस उम्र में भी पिताजी का अभी नित्य कर्म टूट जाये—नहीं, ऐसा हो ही नहीं सकता। नियमों से बंधकर व समय निर्धारित करके चलना कोई सीखे तो आपसे।

शिक्षा के प्रति पिताजी सदैव खुले विचारों के रहे हैं। नारी शिक्षा को महत्व अधिक दिया। उनका यही कहना है कि उसी देश का भविष्य उज्ज्वल है जहां

मातृशक्ति शिक्षित हो। किसी भी देश की उन्नति का मूल आधार शिक्षा ही है और नारी शिक्षा के बिना कोई भी स्थान, देश या व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में सफलता नहीं पा सकता है।

पिताजी 'अतिथि देवो भव' कहावत को चरितार्थ करते रहे हैं। उसकी सेवा कर ईश्वरीय आदेश को पूरा करना मानते हैं। पिताजी ने सदैव कुरीतियों का विरोध किया है। श्रम, शक्ति व सामर्थ्य से गरीबों की सहायता करते रहो—यही मानव धर्म है। आपने हमेशा रिश्तों से अधिक मानवीय संबंधों पर बल दिया है। उन्होंने अपने स्वभाव में हास-परिहास को भी बहुत महत्व दिया है—कहते हैं कि 'हँसकर आप बड़ी से बड़ी पीड़ा भूल सकते हैं और बड़ी से बड़ी बाधा टाल कर लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं। इससे एक नई शक्ति व ऊर्जा का संचार होता है।'

'इन्सान का तराजू इन्सान है जिसमें तोलकर यह जाना जा सकता है कि किसका कौन अनुगामी है ?' सत्य की राह में चलने वाले चाहे पहले अकेले चले हों मगर बाद में धीरे-धीरे उनके साथ सत्कर्मों से प्रवाहित हो जनसमूह साथ निकल पड़ता है। पिताजी जिस पावन उद्देश्य को लेकर चले थे, उसमें आज उनके साथ हजारों हाथ हैं। यह मेरा सौभाग्य है कि मैं ऐसे घर में पैदा हुआ—और पिताजी का इतना सान्निध्य पा रहा हूं कि मेरा जीवन तो इतने में ही सार्थक हो गया कि हर रोज उनके मुख-मण्डल की आभा, तेज प्रकाश की कुछ किरणें हमें छू कर हममें भी ऊर्जा का संचार कर रही हैं। ऐसा विश्वास है—आपके कदमों-पदचिह्नों के अनुगामी होकर हम सभी हमारा जीवन सही दिशा में जीने की प्रेरणा पाते रहेंगे।

आचार्य महिधर को माँ का आशीर्वाद

आचार्य महिधर आत्मज्ञान की इच्छा से घर छोड़कर विरक्त हो गये। उनकी माँ घर में कष्ट उठा रही है, इसका भी ध्यान न रहा। बहुत दिन तप-साधना करने पर भी उन्हें पूर्णतया सफलता प्राप्त न हुई तब वे घर लौट आये। बेटे को पाकर माँ के हर्ष का ठिकाना न रहा। उन्होंने कहा—बेटा! तूने दुःखी का दुःख पहचान लिया, तुझे पूर्णता प्राप्त होगी। मां के आशीर्वाद का ही फल था कि महिधर को वेद ज्ञान प्राप्त हुआ। उन्होंने चारों वेदों का भाष्य करने का गौरव प्राप्त किया।

मायके की कभी ना याद आयी ससुराल में इतना प्यार मिला

श्रीमती सत्यभामा कस्वां

मानव प्रेम के अग्रदूत, नारी शिक्षा के प्रचारक, सामाजिक चेतना के प्रतीक, निर्बलों के मसीहा, मानवतावादी, नवविचारों के प्रवर्तक, आर्य विचारों के प्रबल समर्थक, कर्त्तव्यनिष्ठ, सेवाभावी, आदर्श व्यक्तित्व लिए मधुर भाषी व एकदम देहाती हिन्दुस्तानी खादी वस्त्रों में लिपटे 'तारानगर के गांधी', 'बापू' या 'दादा' मेरे श्वसुर हैं।

पिताजी (श्वसुरजी) ने उपदेशों में जिन आर्य आदर्शों का, सत्यनिष्ठा, कट्टरता, निर्भीकता, लगन, चरित्र आदि जिन-जिन शब्दों का उल्लेख किया है—उनका बखूबी अपने जीवन में निर्वाह भी किया है। आपने घर, समाज व राष्ट्र की उन्नति के मूल पाठ को पढ़ा नहीं उसे गुनकर अपने घर से ही उसे प्रारम्भ कर सबके समक्ष एक आदर्श स्थापित किया है। पिताजी समाज व राष्ट्र की सेवा करते हुए क्षण भर भी अपनी पारिवारिक जिम्मेदारियों से विमुख नहीं हुए। उन्हीं का आशीर्वाद है कि आज उनके पुत्र, पुत्रियां एवं वधुएं आदि सभी शिक्षित हैं। आपने पारिवारिक जिम्मेदारियों को पूरा करते हुए नारी शिक्षा आन्दोलन पर विशेष बल दिया और एक समय जब परिवार इस स्थिति में आ गया कि आप उससे आश्वस्त हो गये—तब नारी शिक्षा हेतु पूर्ण मनोयोग से जुट गये। रात-दिन एक करते-करते अपने विचार को, स्वप्न को साकार कर दिया। आज 'वैदिक कन्या छात्रावास' उसी स्वप्न का साकार रूप है। तारानगर में स्थित इस छात्रावास में 130 के लगभग छात्राएं जो ग्रामीण अंचल से, ढाणी-ढाणी से हैं—यहां आकर रहती हैं। 'पिताजी' के निर्देशन में पलती-बढ़ती आर्य आदर्शों को ग्रहण कर जब शिक्षित हो वापस लौटती हैं तो 'दादा' के प्रति पूरे अन्तर्मन से कृतज्ञ होती हैं। सौभाग्य से मैं नारी हूं—नारी की पीड़ा व उत्पीड़न को समझती हूं—देखती हूं—सुनती हूं ऐसे में एक साधारण किसान परिवार का मुखिया जिसने समाज के आडम्बरों, झूठे रीति-रिवाजों को और तथाकथित उस समाज के कथित स्वार्थी विद्वान ठेकेदारों व राजनीतिज्ञों को अपने कार्यों द्वारा यह जतला दिया है कि सुधार के लिए सुधार की मानसिकता व उसके प्रति समर्पण ही मुख्य है न कि कोई नाम, पद या प्रतिष्ठा जिसके बोझ से आप कुछ

नहीं कर पा रहे हैं। मुझे गौरव है—मैं ऐसे परिवार की पुत्रवधू हूं जहां से इस 'नारी शिक्षा आन्दोलन' की ज्योति जली है।

पिताजी इतने बड़े होकर भी सबका पूरा ख्याल रखते हैं। तारानगर वाले मकान में छात्रावास प्रारम्भ करने से पूर्व उन्होंने परिवार के समस्त सदस्यों की इसके लिए सहर्ष सहमति ली। उन्होंने कहा—'इस पुनीत कार्य में घर के सभी प्राणी इसे सहर्ष स्वीकार करें।' 'तभी मेरा यह यज्ञ पावन है।' उनके इस कथन के पीछे जो भावना थी, यही कि मेरे द्वारा किये गये निर्णयों पर बाद में कोई प्रश्नचिह्न ना लगाये। फिर उनका का यह भी कहना है कि व्यक्ति को सर्वप्रथम अपने घर के सदस्यों को अपने पक्ष में लेकर चलना चाहिये फिर समाज उसके पश्चात् राष्ट्र स्वतः ही उसे स्वीकार करेगा। पिताजी ने हम सबके अन्दर बातों ही बातों में बहुत ही सहज होकर संस्कार डाल दिये।

पिताजी के इस कार्य में श्री रामदत्तजी उनके साथ हैं। आपने भी सब कुछ छोड़ छात्रावास की व्यवस्था व देख-रेख एवं सुरक्षा की जिम्मेदारी ले रखी है। आज तारानगर बस स्टैण्ड के पास चल रहे इस छात्रावास का समाज के 'कुछ लोगों' ने विरोध किया। इस पुनीत कार्य को रोकने का और इसमें भी अपनी स्वार्थ-सिद्धि चाही मगर पिताजी व श्री रामदत्तजी किसी भी परिस्थिति में विचलित नहीं हुए हैं। कोर्ट-कचहरी में घूमते-भागते, फिरते ये दोनों वृद्ध महापुरुष कभी थके नहीं। इन्हें तो सिर्फ अब उन्हीं छात्राओं की शिक्षा व सुरक्षा की चिन्ता पड़ी है—जिन्हें इन्होंने अपने मानस में मानस पुत्रियां बना उनकी शिक्षा का जिम्मा ले लिया है। समाज के समक्ष आत्मबल का इससे ज्यादा जीवन्त तरीके से कौन परिचय देगा ?

तारानगर व इस क्षेत्र के प्रबुद्ध लोग आज पिताजी के साथ हैं यह आपके प्रयासों का ही फल है। पिताजी के कुशल निर्देशन में छात्रावास की छात्राएँ स्वावलम्बी, स्वाभिमानी एवं निडर भारतीय नारी बन आदर्श प्रस्तुत करेंगी यही पाठ उन्हें पढ़ाया जा रहा है। दैनिक वैदिक नित्यकर्म, पूजा व हवन से वहां का वातावरण चित्त को शांति देने वाला है। पिताजी के शब्दों में 'नारी शिक्षित होकर एक नहीं दो घरों का भला करती है—उससे आने वाली पौध सही लगती है और इसी की पहली आवश्यकता है।'

नारी शिक्षा के अतिरिक्त आपने समाज की समस्त बुराइयों, कुरीतियों का खुलकर विरोध किया है। मृत्युभोज, पर्दाप्रथा, दहेज-दिखावा के पक्के विरोधी रहे हैं। पर्दा प्रथा के बारे में आप कहते हैं कि—ये आज के संदर्भों में एकदम प्रतिकूल व नारी की प्रतिभा पर आवरण है। आदर्श चरित्र को कभी पर्दे के पीछे नहीं रखा जा सकता है और न ही पर्दे के पीछे पैदा हो रही बुराइयों को समाप्त ही किया जा सकता है। इसका समाज पर विपरीत ही प्रभाव पड़ेगा। फिर पर्दे की आवश्यकता क्यों ? नारी की सौम्यता व लज्जाशीलता के गुण को पर्दे में छिपाकर समाज में आदर्श स्थापित कैसे किये जा सकते हैं, उसे तो समाज की आधारशिला माना है—मातृशक्ति

को सबके समक्ष बढ़ने दो तब वह स्वयं ही सबको अपनी ऊर्जा शक्ति से व ज्ञान से समाज को आलोकित कर देगी। मृत्युभोज व फिजूलखर्ची को आपने समाज पर एक दाग माना है, जिसकी आड़ में व्यक्ति अनायास ही अपनी शक्ति व सामर्थ्य से अधिक खर्च कर बाद में कठिनाइयां भोगता रहता है। जीते जागते माता-पिता की सेवा से दूर भागे बच्चे मृत्यूपरांत लोकलाज के भय से यह खर्च-प्रदर्शन करें तो किसी भी आत्मा को क्या संतुष्टि मिलेगी ?

ये आदर्श और इस विचारधारा की सरिता पिताजी के आशीर्वाद व देखरेख में हमारे परिवार में प्रवाहित है। मेरे पीहर में मेरे पिताजी श्री भूरारामजी मैहड़ा तथा ताऊजी श्री चौधरी जसराजजी ने इन्हीं सारे गुणों को दहेज में देकर मुझे विदा किया था। विरासत में मिले गुणों को इस नये घर में आकर पूज्य पिताश्री व स्नेहमय माँ की छत्र-छाया में और अधिक बल मिला है। पूरे परिवार का स्नेहमयी व उन्मुक्त वातावरण सबको अपनी प्रतिभा के अनुसार अपने स्वतन्त्र सृजन की अनुमति देता रहा है। आदरणीय डॉ. भैया व भाभीश्री दोनों का स्नेह भी माता-पिता समान रहा है। बाकी सभी बहिनों व पारिवारिक सदस्यों का प्यार परिवार के संस्कारों के अनुकूल पाकर मैं तो इतनी प्रसन्न हुई कि व्यक्त नहीं कर सकती। ससुराल कभी ससुराल नहीं मेरा अपना घर ही लगा। 'मैके की कभी ना याद आये ससुराल में इतना प्यार मिले।' गीत की पंक्तियां मेरे जीवन में सच उतर गयी हैं—तो इससे बड़ा किसी नारी का सौभाग्य क्या होगा ?

मैंने स्वयं शिक्षा बी.एस.सी., एम.एस.सी., बी.एड व एम.एड. इसी ससुराल के आंगन में आकर सबके अकथ्य सहयोग से प्राप्त की है। मेरे विद्याध्ययन काल के दौरान सभी परिवार वाले सहयोग की सद्भावना व हौंसला बढ़ाते रहते थे। उसी के कारण आज मैं स्कूल स्तर पर प्राध्यापिका के पद पर सरदारशहर में राजकीय सेवा में कार्यरत हूं।

काश ! ईश्वर सभी को ऐसा आदर्श परिवार स्वरूप प्रदान करे तो 'पिताजी' का स्वप्न इस आर्यावर्त में साकार हो जायेगा, सभी शिक्षित होकर एकजुट होकर रहेंगे। पिताजी के पदचिह्नों पर हम सब चलते रहें यही अन्तर दिल से कामना करती हूं।

मेरे दादाजी

कु. सीमा कस्वां

मुझे दादाजी के बारे में लिखने के लिये जब कहा गया तो मैं अवाक् रह गयी—मैं ... मैं क्या लिखूंगी ? मैं क्या कहूंगी ? उनके लिए जिनसे मुझे अपार प्यार, स्नेह और खूब सारी शिक्षायें मिलती रही हैं, मिल रही हैं। दादाजी सचमुच बड़े रोचक इंसान है। आते हैं जब भी तो यूं लगता है एकदम घर भर गया। उनकी बातें, किस्से सुनकर हमें बड़ा आश्चर्य होता है। कैसा समय था, कैसे लोग थे—कैसे-कैसे गांव-गांव घूम-घूम कर वे आर्य समाज के विचारों को समाज में जन-जन तक पहुंचाते रहे—अपने आप में एक मिसाल ही है।

हम यहाँ शहर में पल रहे, बढ़ रहे बच्चे जब पापा से या उनसे जब पुरानी बातें सुनते हैं तो कानों को विश्वास नहीं होता मगर सब सच है। मनुष्य कठिनाइयों से लड़कर ही ऊपर उठ सकता है। दादाजी कहते हैं कि सत्य का मार्ग अपना कर बढ़ते चलो। जो गलत लगे, जो बुरा है उसका कड़े शब्दों में विरोध करो और खुद के अन्दर अच्छाइयों को भरने का प्रयत्न करो। सद्-मार्ग पर चलो तभी सार्थकता है जीवन की। जीवन तभी सफल है जब किसी के काम आये। व्यक्ति की खुद की खुद के प्रति, समाज व देश के प्रति बराबर जिम्मेदारी है। आप नारी शिक्षा के कट्टर समर्थक हैं।

हमेशा सत्य बोलने, खूब पढ़ने, प्रेम से रहने, बड़ों की सेवा व सम्मान करने और बड़े लक्ष्य को लेकर चलने की शिक्षा देते हैं। दादाजी आज भी खूब पढ़ते हैं। पिताजी को किस-किस तरह पढ़ाया बताते हैं तो हमें बड़ी प्रेरणा मिलती है। दादाजी के तो बहुत पोतियां हैं—तारानगर में छात्रावास में पढ़ने वाली खूब सारी लगभग 130 लड़कियां नित्य दादाजी के साथ वेद पाठ करती हैं, अच्छी बातें सीख रही हैं, शिक्षा ले रही हैं। दादाजी कहते हैं यह यज्ञ है बेटा शिक्षा के लिए यज्ञ, नारी जाति के लिए यज्ञ, ताकि कल बेहतर बने सब सुखी रहें। काश, दादाजी की भांति ही सारे बुजुर्ग सोच पाते तो आज देश विश्व में नम्बर एक होता और कोई भी भारत में नर-नारी अशिक्षित नहीं होता।

विद्या हमें विनय, बुद्धि, धन सब कुछ देती है। विद्या जिसने प्राप्त की है निःसन्देह उसने संसार की सबसे अमूल्य सौगात प्राप्त कर ली क्योंकि विद्या प्राप्ति के

पश्चात् ही हम इस संसार को समझ सकते हैं एवं यहाँ एक सार्थक जीवन को एक उद्देश्य के साथ व्यतीत करने के लायक हो सकते हैं।

विद्या हमें पैतृक सौगात के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी आनुवांशिक रूप से प्राप्त नहीं हो सकती है। ना किसी से मांग कर या छीनकर हम विद्या को प्राप्त कर सकते हैं, अपितु विद्या तो अपनी लगन एवं अथक परिश्रम से ही प्राप्त हो सकती है। मगर इतना अवश्य है कि अगर हम चाहें एवं प्रयास करें तो प्रकृति की सजीव निर्जीव किसी भी प्रकार की रचना से कुछ न कुछ अवश्य सीख सकते हैं। विद्या प्राप्ति की सामग्री, विद्या प्राप्ति का समय एवं विद्या के उपयोग किसी निश्चित दायरे के मोहताज नहीं होते हैं, उदहारण स्वरूप अगर आज मैं विद्या के महत्त्व को समझ कर उसके बारे में कुछ शब्द कह पा रही हूं तो यह किसी पुस्तक का पढ़ा हुआ कोई पन्ना नहीं है अपितु यह मेरे दादाजी द्वारा दी गयी शिक्षा का अंश मात्र है जो मुझे विद्या का महत्त्व बताकर मुझे एक अच्छा विद्यार्थी एवं प्राप्त की गयी विद्या को अपने जीवन में उतारने को कहकर एक अच्छा इंसान बनाने की सीख देते रहते हैं। उनके अनुसार किसी को सीख देना एवं अच्छी शिक्षा देना ही पर्याप्त नहीं है उसके सामने हमें स्वयं को आदर्शरूप में प्रस्तुत करना होता है, क्योंकि किसी को शिक्षा देना एवं स्वयं उसके लिये आदर्श प्रस्तुत करना ये दोनों पहलू ही सच्ची शिक्षा प्रदान कर सकते हैं। मैं गर्व के साथ कह सकती हूं कि मेरे दादाजी हमें 'सच्ची शिक्षा' देते हैं।

भक्त महिला को प्रभु का सन्देश

'मैं तो इतने दिनों से भगवान की भक्ति कर रही हूँ—एक स्त्री ने सन्त को बताया—पर मुझे आज तक उन्होंने कभी स्वप्न में भी दर्शन नहीं दिये, आप कहते हैं कि वे आप से कभी भी अलग नहीं होते? बात यह थी कि वह स्त्री भक्ति तो करती थी पर अपने परिवार, पड़ौसी और सम्बन्धियों, सबके साथ उसका व्यवहार बहुत रूखा व अहंकारपूर्ण था। घर वाले भी उसके आचरण से दुःखी थे।

सन्त बोले—'आज भगवान से पूछकर बतायेंगे आप से क्यों नहीं मिलते।' दूसरे दिन स्त्री मिली तो वह बोले—माई भगवान तुझ पर नाराज हैं, कह रहे थे वह हमारे बच्चों से लड़ती-मारती-पीटती और द्वेष रखती है, उससे मिलने का मन नहीं करता। स्त्री समझ गई। उस दिन से उसने अपना व्यवहार मीठा बना लिया। फलस्वरूप दूसरे लोग उसे इतना प्यार और आदर देने लगे कि वह उस शान्ति में ही भगवान की उपस्थिति अनुभव करने लगी।

चरित्र का निर्माण करो, देश आगे बढ़ जायेगा

राहुल कस्वां

हमारे दादाजी सचमुच बहुत महान् व्यक्ति हैं। वे हमें बहुत प्यार-स्नेह बांटते हैं। उनका जब भी यहाँ सरदारशहर आना होता है या हमारा उनसे मिलने जाना होता है तो वे बातों ही बातों में हमें बहुत सारी शिक्षा दे देते हैं और वे सब इतना सहज कहते हैं कि उनको हमेशा याद रखना मुश्किल नहीं—हां मुश्किल है तो उन्हें निभाना। हमारे दादाजी कहते हैं कि व्यक्ति को स्वयं का चरित्र निर्माण करना ही प्रथम व मुख्य ध्येय रखना चाहिए—कहते हैं ना कि—'खुद भला तो जग भला' खुद उन्नति करो, अच्छे बनो सब अच्छा ही होगा—घर, समाज व देश स्वतः ही सुधरता चला जायेगा। व्यक्ति का चरित्र इन सबकी नींव है जिस पर ही कोई इमारत बनायी जा सकती है। अगर धन जाए तो चिन्ता नहीं, शरीर-स्वास्थ्य बिगड़े तो कुछ चिन्ता, कुछ गया लगे मगर चरित्र जाए तो जीवन व्यर्थ हो जाए—इसे हमेशा याद रख जहन में उतारने की शिक्षा देते हैं।

दादाजी बताते हैं वे समाज की बुराइयों से सदैव लड़ते रहे हैं और लड़ते रहेंगे। सचमुच गांवों में आज भी नारी शिक्षा को महत्त्व नहीं दिया जाता है लेकिन हमारे दादाजी ने न जाने कब से इस ओर अपने आपको लगा रखा है। तारानगर में छात्रावास में गांवों-ढाणियों की वे लड़कियां पढ़ रही हैं जो शायद पढ़ नहीं सकती थीं। दादाजी उनको प्रेरणा देते हैं। उनके परिवार को प्रेरणा देते हैं। समाज में सबको बराबरी का दर्जा मिले इसलिए नारी शिक्षा को महत्व देते हैं। वे बताते हैं नारी हमारी जननी-मां है—इसे सम्मान दो। पूजा करो। आदर करो तो ही आगे बढ़ोगे।

दादाजी बढ़ते नशे व मादक पदार्थों के प्रसार से बहुत व्याकुल रहते हैं। वे अक्सर कहते हैं—इन्हें रोको, देश को बर्बाद कर देंगे यह सब। बच्चों-युवाओं को तो बस खूब पढ़ना, खेलना व अच्छा शुद्ध सात्विक भोजन करना चाहिए। पाश्चात्य संस्कृति से दूर रहना चाहिए। पोप छोड़ भजनों को सुनो, देश भक्ति के गीत गाओ। तब कल्याण होगा।

दादाजी मूर्तिपूजा के कट्टर विरोधी, सादा जीवन, सादे वस्त्र पहनने वाले, सीधी सच्ची बात बोलने वाले और एक बार में ही दोस्त बन जाने वाले व्यक्ति हैं। उनके यहां आने पर हमें खूब ज्ञान की बातें सुनने को मिलती हैं। जो हमें प्रेरणा देती हैं। आपके उच्च विचार और आदर्शों की बातें हमें प्रभावित करती हैं आगे बढ़ने को प्रेरित करती हैं। मुझे गर्व है मुझे ऐसे दादाजी मिले जिनका सब सम्मान करते हैं। उन्होंने जो कहा अपने जीवन में उसे उतार कर भी दिखाया ताकि सब इनका अनुसरण कर सकें। हम सब उनके बताये मार्ग पर चलते रहेंगे—उनसे सीख पाते रहेंगे ऐसा विश्वास है और आपके दीर्घायु होने की व निरन्तर स्नेह पाने की कामना है।

स्वामी दयानन्द : धरासूं में तप

स्वामी दयानन्द विरजानन्दजी से आदेश लेकर तपोबल प्राप्त करने धरासूं चट्टी पहुँचे व वहाँ परशुराम शिला पर बैठकर उन्होंने कड़ा तप किया। 6 वर्ष बीते। उन्हें अपना संकल्प बल, ब्रह्म तेज बढ़ता प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने लगा। साधना के प्रति मोह ने रोका—'और भी ऊँचे आयाम पार कर मुक्त हो जावो।' ऐसे में अन्दर से धमकी भरा आदेश आया—'मैंने इसलिए तुझे साधना करने भेजा था? चल, उठ, समाज में व्याप्त अनीति अंधविश्वास मिटा। धर्म की चादर को मैला करने वाले पाखण्डियों का खण्डन कर'। लगा—स्वयं से गुरुदेव अन्दर से कह रहे हों। वे उठ खड़े हुए और उन्होंने धर्मान्धों के बीच आकर अपना अड्डा जमाया, ज्ञान विस्तार कर जनमानस में व्याप्त भ्रान्तियों का खण्डन किया और यही उनकी जीवन साधना बन गई।

मेरे दादाजी

कु. प्रियंका कस्वां

'जो विद्या से ही जी चुराता है, उसे कभी कुछ भी प्राप्त नहीं हो पाता है—इसलिए बच्चों को खूब पढ़ना चाहिए' ऐसा कहते हैं मेरे दादाजी। दादाजी जब भी सरदारशहर आते हैं खूब प्यार करते हैं। अपने किस्से-कहानियां बताते हैं, कहते हैं—देखो तुम्हें भी बहुत बड़ा बनना है, खूब पढो। मगर बहुत जल्दी-जल्दी बोलते हैं। मैं तो थोड़ा-थोड़ा समझ भी नहीं पाती-छोटी हूं ना।

दादाजी ने साधुओं जैसे कपड़े पहन लिये हैं—साधु जैसे ही लगते हैं। आते हैं। और फिर जल्दी से वापस गांव चले जाते हैं। कहते हैं, मेरे खूब पोतियां हैं। सचमुच लगता है दादाजी बहुत बड़े आदमी हैं। सब इनको मान देते हैं। मैं बहुत प्यार करती हूं 'इतना सारा—।'

दादाजी कहते हैं—जब तक सांस है, शक्ति शरीर में बनी है निरन्तर काम करते रहो—ऐसा काम करो जो औरों को जीवन प्रदान करे—तब उन्हें देख मुझे एक गीत की पंक्ति याद आती है जो उन्हें अपनी श्रद्धा के साथ अर्पित करती हूं कि—

क्या मार सकेगी मौत उसे औरों के लिए जो जीता है
मिलता है जहां का प्यार उसे औरों के जो आंसू पीता है

बस इसी के साथ सदैव आपके स्नेह व शिक्षा संदेश की आकांक्षी आपकी पौत्री यही चाहती हूं कि आपके बताये मार्ग पर चलूं, आगे बढ़ूं, बढ़ती रहूं।

जब तक सांस है, कुछ कर लो!

हमारे पर बहुत ऋण हैं जितने उतारे जायेंगे उतने ही कम हो जायेंगे और बाकी जो रह जायेंगे अगले जन्मों में घसीटते रहेंगे। मैं मुक्ति को तो नहीं जानता लेकिन जनता का जितना भला हो जाये उतना ही थोड़ा है। जब तक सांस है, कुछ कर डालो जिससे समाज की उन्नति हो सके।

—आर्यजी

मेरे धर्म पिता एक आदर्श

श्री जसवन्तसिंह ओला
श्रीमती अमरावती ओला

मैं बड़ा सौभाग्यशाली हूं, क्योंकि मुझे ईश्वर कृपा से ऐसे धर्म पिता (श्वसुरजी) मिले हैं जिन पर न केवल हमारा परिवार ही, न केवल हमारा समाज ही अपितु पूरा चूरू अंचल का क्षेत्र उनके व्यक्तित्व और कृतित्व के प्रति श्रद्धा-नत है।

सादा जीवन, सामान्य साक्षर और विषम परिस्थितियों में एक गांव में जन्मा किसान का बेटा अपनी लगन और कर्म के द्वारा लोगों के सामने इतना बड़ा आदर्श, इतना बड़ा काम कर सकता है ? इसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता। आज तारानगर तहसील की वे बालिकाएं जो उनके संरक्षण में शिक्षा और संस्कार प्राप्त कर रही हैं कल वे माताएँ बनेंगी तब क्या अपने इन संस्कारों के निर्माता के व्यक्तित्व की कहानी अपने सनातियों से नहीं कहेगी ? अवश्य कहेंगी कि ऐसे वयोवृद्ध दादाजी जिन पर न केवल बालिका शिक्षा के प्रसार की ही धुन सवार रहती थी अपितु समाज में फैले अनेकानेक अन्धविश्वासों, रूढ़ियों के विरुद्ध भी बराबर लड़ते रहते थे।

मैं बचपन से ही अपने श्रद्धेय के बारे में बराबर सुनता आया हूँ क्योंकि आपका बचपन भी मेरे ही गांव में बीता है, आप बहुत ही छोटी उम्र में हमारे गांव में अपनी बड़ी बहन के पास आ गये थे। करीब 10-12 वर्षों तक यहीं खेले और सामान्य ज्ञान प्राप्त किया। मेरे गांव को वे अपना संस्कार दीक्षा देने वाला मानते हैं क्योंकि आर्य समाज के सम्पर्क में वे सबसे पहले यहीं पर आये थे। एक बार उन्होंने हमारे किसी वयोवृद्ध गुरुजन से यह भी मजाक में कहा था कि मैं अपनी बड़ी लड़की का कन्यादान इस गांव में करके एक प्रकार से ऋषि ऋण से मुक्त हो गया हूँ।

मुझे इस बात की अपार प्रसन्नता है कि मेरा विवाह एक ऐसे आर्यसमाजी परिवार में हुआ जो हमारे ही परिवार की तरह कट्टर आर्य समाजी हैं। अपितु आज तो यह स्थिति है कि हमारे इस गांव के आस-पास के हमारी जाति के लोग भी श्री भैराराम जी के साथ किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध बताने और बनाने में अपनी शान समझते हैं।

पूज्य पिताजी के संस्कारों का ही यह प्रभाव है कि आर्थिक और सामाजिक स्थिति में भारी अन्तर होने पर भी कोई भी भाई-बहिन या बहनोई-साले अपने

आपको किसी से बड़ा या छोटा अनुभव नहीं करते। भाई डॉ. हनुमानसिंहजी बीकानेर में इतने बड़े प्रतिष्ठित डॉक्टर एवं समाजसेवी हैं। कितने बड़े-बड़े लोग उनसे भिन्न-भिन्न प्रकार की सलाह लेने आते हैं अपने यहाँ बुलाकर खुद को सम्मानित अनुभव करते हैं। किन्तु वे ही डॉक्टर सा. जब मुझ से अथवा अपनी बहिन से मिलते हैं तो मेरे विवाह के समय की जो उनकी मानसिकता तथा प्रेम व स्नेह था उसी का हम सब अनुभव करते हैं। मैं और मेरी पत्नी अमरावती पूज्य पिताजी के पूज्य चरणों में अपना प्रणाम निवेदन करते हैं।

श्रमशीलता से बीमारियों का पलायन

श्रम की महत्ता कितनी अपार है और इससे अभाव व दरिद्रता को ही नहीं, बीमारियों तक को भगाया जा सकता है, इसे समझाते हुए महात्मा आनन्द स्वामी एक कथा सुनाया करते थे—पहाड़ की अनुमति से बीमारियाँ पर्वत पर रहने लगीं। कुछ दिन बीते एक किसान को कृषि योग्य भूमि की कुछ कमी पड़ी। पहाड़ बहुत सारी जमीन दबाये खड़ा है यह देखकर परिश्रमी किसान पहाड़ काटने और उसे चौरस बनाने में जुट गया। किसान ने बहुत-सी भूमि कृषि योग्य कर ली। यह देखकर दूसरे किसान भी जुट गये। किसानों की संख्या देखते-देखते सैकड़ों तक जा पहुँची। पहाड़ घबराया और अपने बचाव के उपाय खोजने लगा। और कुछ तो समझ में नहीं आया—उसने सब बीमारियों को इकट्ठा किया और फावड़े तथा कुदाल चलाते हुए किसानों की ओर संकेत किया और कहा—यह रहे मेरे शत्रु, तुम सब की सब इन पर झपट पड़ो और मेरा नाश करने वालों का सत्यानाश कर डालो।

अपने-अपने आयुध लेकर बीमारियाँ आगे बढ़ीं और किसानों के शरीर से लिपट गई पर किसान तो अपनी धुन में लगे थे। फावड़े जितना तेजी से चलाते, पसीना उतना ही अधिक निकलता और सारी बीमारियाँ धुलकर नीचे गिर जातीं। बहुत उपक्रम किया, पर बीमारियों की एक न चली। एक अच्छा स्थान छोड़कर उन्हें गन्धवासिनी बनना पड़ा सो अलग।

पहाड़ ने जब देखा कि बीमारियाँ उसकी रक्षा नहीं कर सकीं, तो वह बड़ा कुपित हुआ और अपने पास से भगा दिया। तब से बीमारियाँ हमेशा गन्दगी में प्रश्रय पाती हैं।

मेरे धर्म पिता एक आदर्श

श्री जसवन्तसिंह ओला
श्रीमती अमरावती ओला

मैं बड़ा सौभाग्यशाली हूं, क्योंकि मुझे ईश्वर कृपा से ऐसे धर्म पिता (श्वसुरजी) मिले हैं जिन पर न केवल हमारा परिवार ही, न केवल हमारा समाज ही अपितु पूरा चूरू अंचल का क्षेत्र उनके व्यक्तित्व और कृतित्व के प्रति श्रद्धा-नत है।

सादा जीवन, सामान्य साक्षर और विषम परिस्थितियों में एक गांव में जन्मा किसान का बेटा अपनी लगन और कर्म के द्वारा लोगों के सामने इतना बड़ा आदर्श, इतना बड़ा काम कर सकता है ? इसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता। आज तारानगर तहसील की वे बालिकाएं जो उनके संरक्षण में शिक्षा और संस्कार प्राप्त कर रही हैं कल वे माताएँ बनेंगी तब क्या अपने इन संस्कारों के निर्माता के व्यक्तित्व की कहानी अपने सनातियों से नहीं कहेगी ? अवश्य कहेंगी कि ऐसे वयोवृद्ध दादाजी जिन पर न केवल बालिका शिक्षा के प्रसार की ही धुन सवार रहती थी अपितु समाज में फैले अनेकानेक अन्धविश्वासों, रूढ़ियों के विरुद्ध भी बराबर लड़ते रहते थे।

मैं बचपन से ही अपने श्रद्धेय के बारे में बराबर सुनता आया हूँ क्योंकि आपका बचपन भी मेरे ही गांव में बीता है, आप बहुत ही छोटी उम्र में हमारे गांव में अपनी बड़ी बहन के पास आ गये थे। करीब 10-12 वर्षों तक यहीं खेले और सामान्य ज्ञान प्राप्त किया। मेरे गांव को वे अपना संस्कार दीक्षा देने वाला मानते हैं क्योंकि आर्य समाज के सम्पर्क में वे सबसे पहले यहीं पर आये थे। एक बार उन्होंने हमारे किसी वयोवृद्ध गुरुजन से यह भी मजाक में कहा था कि मैं अपनी बड़ी लड़की का कन्यादान इस गांव में करके एक प्रकार से ऋषि ऋण से मुक्त हो गया हूँ।

मुझे इस बात की अपार प्रसन्नता है कि मेरा विवाह एक ऐसे आर्यसमाजी परिवार में हुआ जो हमारे ही परिवार की तरह कट्टर आर्य समाजी हैं। अपितु आज तो यह स्थिति है कि हमारे इस गांव के आस-पास के हमारी जाति के लोग भी श्री भैराराम जी के साथ किसी न किसी प्रकार का सम्बन्ध बताने और बनाने में अपनी शान समझते हैं।

पूज्य पिताजी के संस्कारों का ही यह प्रभाव है कि आर्थिक और सामाजिक स्थिति में भारी अन्तर होने पर भी कोई भी भाई-बहिन या बहनोई-साले अपने

आपको किसी से बड़ा या छोटा अनुभव नहीं करते। भाई डॉ. हनुमानसिंहजी वीकानेर में इतने बड़े प्रतिष्ठित डॉक्टर एवं समाजसेवी हैं। कितने बड़े-बड़े लोग उनसे भिन्न-भिन्न प्रकार की सलाह लेने आते हैं अपने यहाँ बुलाकर खुद को सम्मानित अनुभव करते हैं। किन्तु वे ही डॉक्टर सा. जब मुझ से अथवा अपनी बहिन से मिलते हैं तो मेरे विवाह के समय की जो उनकी मानसिकता तथा प्रेम व स्नेह था उसी का हम सब अनुभव करते हैं। मैं और मेरी पत्नी अमरावती पूज्य पिताजी के पूज्य चरणों में अपना प्रणाम निवेदन करते हैं।

श्रमशीलता से बीमारियों का पलायन

श्रम की महता कितनी अपार है और इससे अभाव व दरिद्रता को ही नहीं, बीमारियों तक को भगाया जा सकता है, इसे समझाते हुए महात्मा आनन्द स्वामी एक कथा सुनाया करते थे—पहाड़ की अनुमति से बीमारियाँ पर्वत पर रहने लगीं। कुछ दिन बीते एक किसान को कृषि योग्य भूमि की कुछ कमी पड़ी। पहाड़ बहुत सारी जमीन दबाये खड़ा है यह देखकर परिश्रमी किसान पहाड़ काटने और उसे चौरस बनाने में जुट गया। किसान ने बहुत-सी भूमि कृषि योग्य कर ली। यह देखकर दूसरे किसान भी जुट गये। किसानों की संख्या देखते-देखते सैकड़ों तक जा पहुँची। पहाड़ घबराया और अपने बचाव के उपाय खोजने लगा। और कुछ तो समझ में नहीं आया—उसने सब बीमारियों को इकट्ठा किया और फावड़े तथा कुदाल चलाते हुए किसानों की ओर संकेत किया और कहा—यह रहे मेरे शत्रु, तुम सब की सब इन पर झपट पड़ो और मेरा नाश करने वालों का सत्यानाश कर डालो।

अपने-अपने आयुध लेकर बीमारियाँ आगे बढ़ीं और किसानों के शरीर से लिपट गईं पर किसान तो अपनी धुन में लगे थे। फावड़े जितना तेजी से चलाते, पसीना उतना ही अधिक निकलता और सारी बीमारियाँ धुलकर नीचे गिर जातीं। बहुत उपक्रम किया, पर बीमारियों की एक न चली। एक अच्छा स्थान छोड़कर उन्हें गन्धवासिनी बनना पड़ा सो अलग।

पहाड़ ने जब देखा कि बीमारियाँ उसकी रक्षा नहीं कर सकीं, तो वह बड़ा कुपित हुआ और अपने पास से भगा दिया। तब से बीमारियाँ हमेशा गन्दगी में प्रश्रय पाती हैं।

समाज-सुधारक व चिन्तक श्री भैराराम आर्य

श्री प्यारेलाल एवं
श्रीमती मनोरमा कपूरिया

किसी व्यक्ति को शब्दों की परिधि में कैद कर पाना एक दुःसाहसिक कार्य है और ऐसे व्यक्ति के सम्बन्ध में कुछ लिखकर कहना और भी दुष्कर हो जाता है, जब वह व्यक्ति चहुँमुखी प्रतिभा का धनी हो।

व्यक्ति अपने कार्यों से महान् बनता है। विषम परिस्थितियों में ही व्यक्ति के विवेक, धैर्य और सहनशीलता की अग्नि परीक्षा होती है। वह स्वयं के अन्दर के आत्मबल की शक्ति को ऐसे ही समय जान सकता है। एक सुसंस्कारित और सही मनोविज्ञान को जान-समझ सकने वाला ही मानव तुरन्त बिना हिचकिचाये अपनी समस्याओं में ही उनका निराकरण ढूढ़ लेता है। उन्हें ये परिस्थितियां तनिक भी विचलित नहीं कर पाती हैं। इन सभी गुणों का संगम है—हमारे पूजनीय श्री भैरारामजी आर्य। आप स्वभाव से मृदुभाषी, विचारों में स्पष्टवादी और व्यवहार में पूर्ण मानवतावादी हैं। आपके निश्छल स्नेह, उदारता, सौम्यता व आत्मीयता को स्वयं मैंने कई बार अनुभूत करने का सौभाग्य पाया है।

श्री भैरारामजी का मानना है कि मनुष्य को सबसे पहला संस्कार मिलता है—अपनी ही जननी-जन्मदायिनी मां से। व्यक्तित्व निर्माण के प्रारम्भिक दौर में मां की शिक्षा नींव का कार्य करती है अतः सम्पूर्ण समाज के परिवेश को संस्कारित करने के लिए मुख्य केन्द्र या स्रोत या यूं कहें तो अतिशयोक्ति नहीं होगी—नारी का पूर्णतः शिक्षित होना आवश्यक है तब ही समाज अपनी व्यवस्था को व्यक्तिशः संस्कारित कर एक प्रतिष्ठित समाज के स्वरूप को निर्मित कर सकता है। अतः श्री आर्य जी ने अपने कार्य क्षेत्र में सर्वप्रथम ध्येय बनाया—'नारी की शिक्षा व जागृति का।' बालिकाओं के अध्ययन के लिये 'गोडास' में प्राथमिक विद्यालय की नींव रखी। अपने व्यक्तिगत भवन से 'वैदिक कन्या छात्रावास' प्रारम्भ कर उसे आज तारानगर बस स्टैण्ड के पास एक भव्य रूप दे दिया है जहां 100 के लगभग छात्रायें शिक्षित हो रही हैं—नये युग की संरचना में अपनी प्रारम्भिक शिक्षा विधि-विधान से प्राप्त कर रही हैं ताकि आने वाले कल को वे अपनी सुशिक्षा व संस्कार के प्रभाव से सुव्यवस्थित कर सकें। हमारी प्राचीन परम्परा इस भारतवर्ष की गौरवमयी

परम्पराओं को पुनः जीवित कर नये आदर्श स्थापित कर—इसे प्रतिष्ठित कर सकें। आने वाली पीढ़ियों में सहज ही सुशिक्षा की नींव भरकर आर्य संस्कृति के विशाल भवन को मजबूती प्रदान कर सकें। आपके द्वारा चलाये जा रहे 'वैदिक कन्या छात्रावास' में विशेषतः ग्रामीण बालायें ही लाभान्वित हो रही हैं।

श्री आर्यजी ने सही मायने में आर्य शब्द को अपने अन्दर समाहित किया है। आपने निःस्वार्थ भाव से अपने जीवन के अमूल्य क्षणों को व सुखों को त्याग कर पूर्ण समर्पित भाव से सेवादान किया है। श्री आर्यजी बिना किसी सम्मान लिप्सा-लालसा के अपने कार्य में जुटे हैं—कर्म की कर्मठता का ऐसा सच्चा कोई दूसरा उदाहरण बहुत कम ही नजर आता है। आपने समाज में फैली अनेक कुरीतियों व विसंगतियों का जमकर पुरजोर शब्दों से न केवल विरोध किया है बल्कि प्रत्यक्ष व्यक्तिशः स्वयं ने ही आगे होकर उनका बहिष्कार कर एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है। आपने जो कहा उसे पहले स्वयं के जीवन में व्यवहारगत रूप में लागू कर फिर करने को कहा। इसी कारण आप आज समाज के मील के पत्थर कहलाते हैं।

श्री आर्य जी ने जो कुछ किया व कर रहे हैं, वह आज प्रशंसनीय व अनुकरणीय है। हालांकि अक्षर-अक्षर इसका पालन करना आम व्यक्ति के लिए दुष्कर है किन्तु आपके बताये कुछ मार्गों का अनुसरण ही समाज को लाभान्वित ही करेगा। आप प्रकाश स्तम्भ हैं जिससे भटके लोग दिशा पाकर अपना रास्ता तय कर पाते हैं। डॉ. राममोहन त्रिपाठी के शब्दों में—

जब होंठ हिले, मन ही मन में, कीमत के लिए कल्पना पड़ता है
चन्दन घिसता है, मेहन्दी पिसती है, कंचन को भी तपना पड़ता है

ऐसी राह पर चल रहे कर्मयोगी, समाज सुधारक, युग पुरुष व चिन्तक को शत-शत नमन व ईश्वर उनमें शक्ति संचार करें ताकि समाज और अधिक लाभान्वित हो।

महात्मा आनन्द स्वामी

सही अर्थों में महात्मा वे माने जा सकते हैं, जिन्होंने आर्य समाज के मंच से ईश्वर भक्ति के साथ परमार्थ-समाज सुधार का नारा लगाया, स्वयं वैसा जीवन जीने के लिये अपना धन समाज हेतु समर्पित कर दिया। दीर्घायुष्य रहकर वे आजीवन सभी धर्म-सम्प्रदायों की अगाध श्रद्धा पा सके, इसके मूल में उनकी परमार्थ परायणता ही थी।

इतिहास की पोथी—मेरे दादा जी

श्री राजेन्द्रसिंह कस्वां

मैं समझता हूँ कि मेरे पूज्य दादाजी श्री भैरारामजी का जितना और जैसा प्यार मुझे मिला है उतना और वैसा शायद उनके दूसरे पोते-पोतियों को नहीं मिला, कारण, चाचाजी डॉ. हनुमानसिंहजी का परिवार बीकानेर में रहता है और जीतसिंहजी का सरदारशहर में। अतः मेरे उन भाई-बहिनों को तो कभी-कभी जब दादाजी वहाँ जाते तभी इतना स्नेह मिलता जब कि मुझे भगवान कृपा से उनके पास में ही रहने का सौभाग्य मिला है अतः वास्तविक और ढेर सारा वात्सल्य मैंने ही पाया है। इस पर मुझे गर्व है।

दादाजी जो शिक्षा देते हैं, उसे पहले अपने आप में उतार कर देते हैं। अच्छे उपदेश का उदाहरण वे खुद के द्वारा देते हैं। सदा समय पर काम करो, सबेरे जल्दी उठो, कभी हिम्मत नहीं हारो। सादगी का जीवन बीताओ ये सभी बातें तभी अपना असर करती हैं जब कहने वाले का खुद का व्यवहार भी वैसा हो। मैंने स्कूल में पढ़ते समय और अनेक लोगों के भाषण और प्रवचन सुनते समय यह अनुभव किया कि उनकी अच्छी-अच्छी बातें प्रभाव क्यों नहीं डालतीं, उनका असर क्यों नहीं होता। इसकी गहराई में जाने पर यही पाता हूँ कि वे खुद वैसा आचरण नहीं करते जैसा कहते हैं। वे केवल कहने का नाटक करते हैं, रटे हुए भाषण की तरह बोलते हैं, तभी उनका प्रभाव नहीं पड़ता। इस अनुभव की सचाई मैं दादाजी की कथनी और करनी की एकता में पाता हूँ।

दादाजी जब कभी फुर्सत के समय में मिलते हैं तो पहले वैदिक धर्म की बातें कहते हैं किन्तु जब मैं इनके प्रचार में उनके द्वारा किये गये विवरणों को पूछता हूँ तब जो कथा कहते हैं, उसमें बड़ा आनन्द आता है क्योंकि उसमें आज के 25-30 वर्षों पहले के गांवों के लोगों के जीवन, उनके रहन-सहन तथा सोचने के नजरिये तथा उनके भोलेपन की बातों को सुनने का आनन्द भी आता है, साथ ही दुःख भी होता है कि उनका जीवन कितना दुखदायी हुआ करता था। वे कैसे हिम्मतवाले लोग थे कि ऐसी स्थितियों में भी बड़ी हिम्मत के साथ रहते थे।

इन्हीं बातों में हमारे परिवार की कठिनाइयों को सुनकर भी रोंगटे खड़े हो जाते हैं। मेरे पूज्य दादाजी मालारामजी को जेल में कितनी तकलीफ से रखा था, कैसे कैसे वे पैदल चलकर आर्य समाज के जलसों और कांग्रेस के जलसों में जाकर वहाँ से जोश लेकर आते और गांव-गांव और ढाणी-ढाणी में लोगों की चेतना को जगाते। इसी क्रम में जाट जाति पर सामन्तों द्वारा किये गये अत्याचारों की कहानियाँ भी सुनने को मिलतीं।

इस प्रकार मेरे ये छोटे दादाजी मेरे लिए तो समाज और परिवार की इतिहास की पुस्तक के समान हैं। मैं दादाजी के हर काम में इसी कारण सदा बराबर जुड़ा रहता हूँ कि इस महापुरुष के जीवन से अधिक से अधिक शिक्षा ग्रहण कर सकूं। मुझे इस बात का गर्व है कि मेरे दोनों दादाजी तारानगर तहसील के बड़े समाजसेवी हैं।

अनगढ़ विचार बनाम विक्षिप्तता

बिना सोचे नेवले को मार दिया

अस्त-व्यस्त विचार व्यक्ति को जल्दबाज बनाते हैं व ऐसे व्यक्ति दूरगामी निर्णय न लेकर ऐसे कदम उठा बैठते हैं जिन्हें प्रकारान्तर से विक्षिप्तता ही कहा जा सकता है।

देव शर्मा के घर पुत्र ने जन्म लिया। उसी दिन एक नेवली ने नेवले को भी जन्म दिया। दयावश ब्राह्मणी ने उस बच्चे को पाल लिया। दोनों बच्चों में बड़ा प्रेम था। एक दिन ब्राह्मणी पानी भरने चली गई। बच्चा सो रहा था। नेवला भी पास ही बैठा था। दैवयोग से उधर एक सर्प निकला और बच्चे को काटने लपका। नेवले ने यह देखा तो साँप के टुकड़े-टुकड़े कर डाले। उसके मुँह में खून लग गया। वह इसी अवस्था में मालकिन को देखने कुएँ की ओर दौड़ा। द्वार पर ही ब्राह्मणी मिल गई, नेवले के मुँह में खून लगा देखकर उसने सोचा यह बच्चे को काटकर आया है। यह विचार आते ही उसने भरा हुआ घड़ा नेवले के ऊपर दे मारा, नेवला मर गया। घर जाकर ब्राह्मणी ने सारी बात समझी तो उसे बड़ा पश्चाताप हुआ। इसलिए बिना विचारे कोई काम नहीं करना चाहिए।

स्वस्त्ययन
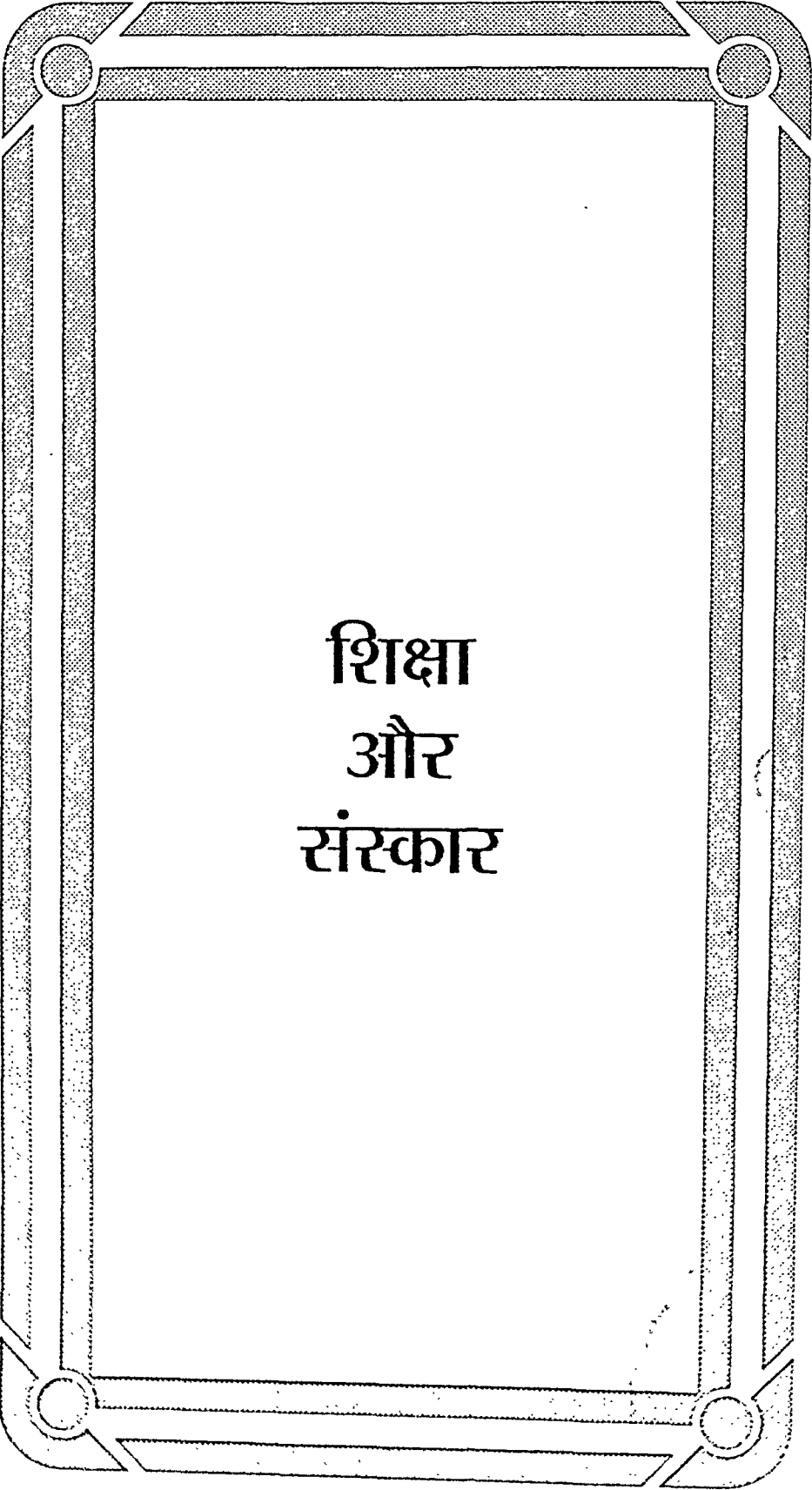
ॐ सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्यं करवावहै।
तेजस्वि नावधीतमस्तु। मा विद्विषावहै।।
ॐ शान्तिः! शान्ति!! शान्ति!!!

हे परमात्मन्! आप हम गुरु-शिष्य दोनों की साथ-साथ सब प्रकार से रक्षा करें, हम दोनों का आप साथ-साथ समुचित रूप से पालन-पोषण करें, हम दोनों साथ-ही-साथ सब प्रकार से बल प्राप्त करें, हम दोनों की अध्ययन की हुई विद्या तेजस्विनी हो—हम कहीं किसी से विद्या में परास्त न हों और हम दोनों जीवनभर परस्पर स्नेह-सूत्र से बँधे रहें, हमारे अंदर परस्पर कभी द्वेष न हो। हम दोनों के तीनों तापों की निवृत्ति हो।

ॐ आप्यायन्तु ममाङ्गानि वाक् प्राणश्चक्षुः श्रोत्रमथो बलमिन्द्रियाणि च सर्वाणि।
सर्वं ब्रह्मौपनिषदं माहं ब्रह्म निराकुर्यां मा मा ब्रह्म निराकरोत्,
अनिराकरणमस्त्वनिराकरणं मेऽस्तु।
तदात्मनि निरते य उपनिषत्सु धर्मास्ते मयि सन्तु, ते मयि सन्तु।।
ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

हे परमात्मन्! मेरे सारे अङ्ग, वाणी, नेत्र, श्रोत्र आदि सभी कर्मेन्द्रियाँ और ज्ञानेन्द्रियाँ, प्राणसमूह, शारीरिक और मानसिक शक्ति तथा ओज—सब पुष्टि एवं वृद्धि को प्राप्त हों। उपनिषदों में सर्वरूप ब्रह्म का जो स्वरूप वर्णित है, उसे मैं कभी अस्वीकार न करूँ और वह ब्रह्म भी मेरा कभी परित्याग न करे। मुझे सदा अपनाये रखे। मेरे साथ ब्रह्म का और ब्रह्म के साथ मेरा नित्य सम्बन्ध बना रहे। उपनिषदों में जिन धर्मों का प्रतिपादन किया गया है, वे सारे धर्म उपनिषदों के एकमात्र लक्ष्य परब्रह्म परमात्मा में निरन्तर लगे हुए मुझ साधक में सदा प्रकाशित रहें, मुझ में नित्य-निरन्तर बने रहें और मेरे त्रिविध तापों की निवृत्ति हो।

ॐ शान्तिः! शान्तिः!! शान्तिः!!!

शिक्षा
और
संस्कार
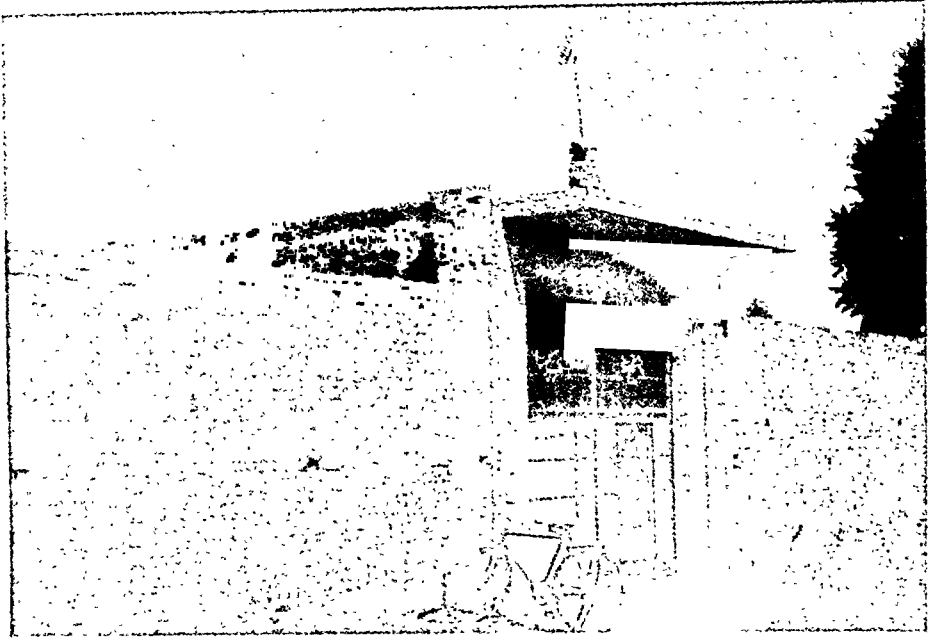
वैदिक कन्या छात्रावास भवन, तारानगर

वैदिक कन्या छात्रावास में एक कर्मठ व्यक्तित्व : श्री भैरारामजी आर्य
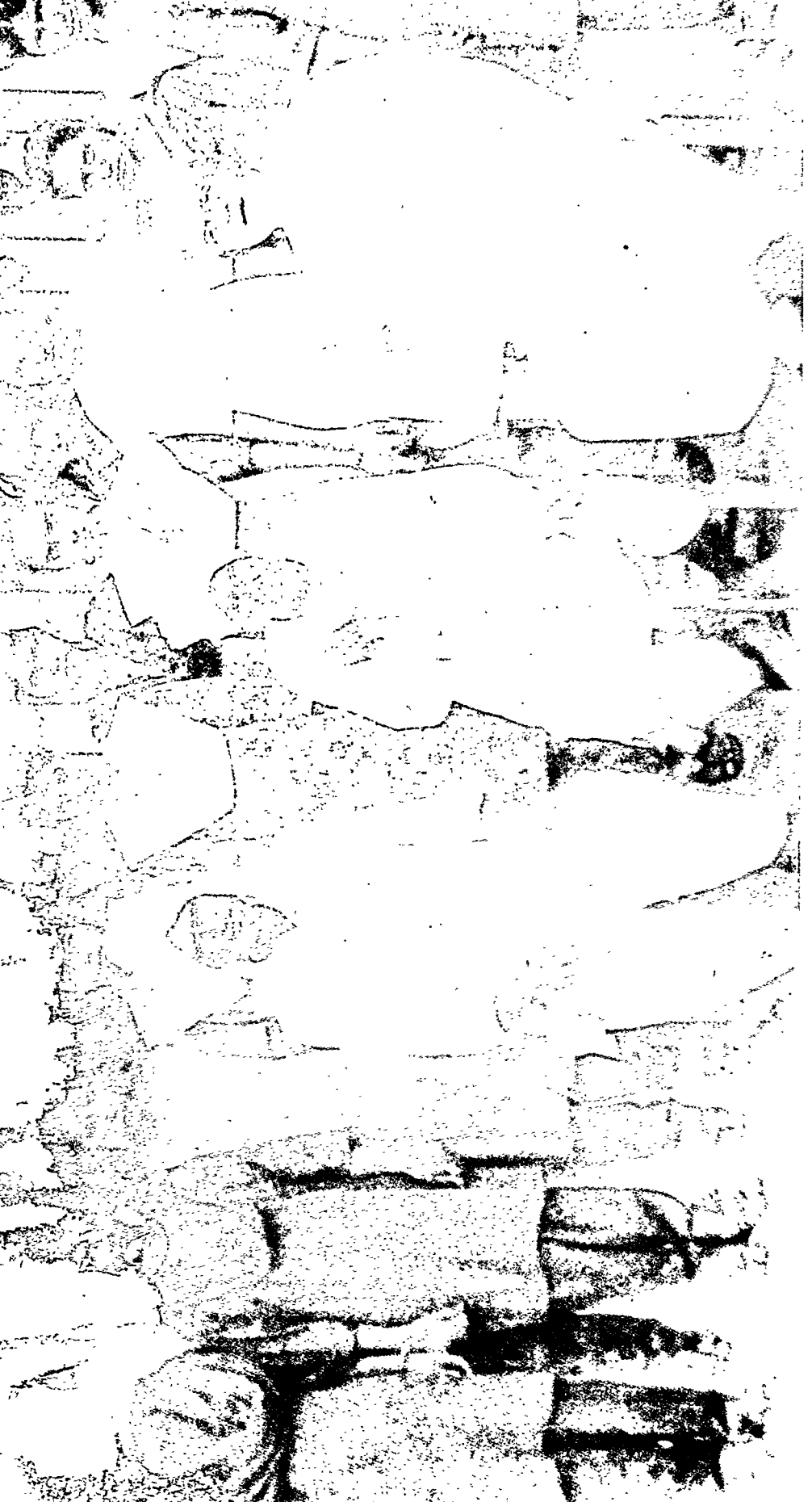
वैदिक कन्या छात्रावास की कन्याओं के साथ श्री रामदत्त आर्य, श्री भैराराम आर्य तथा श्री नेतमल सामसुखा
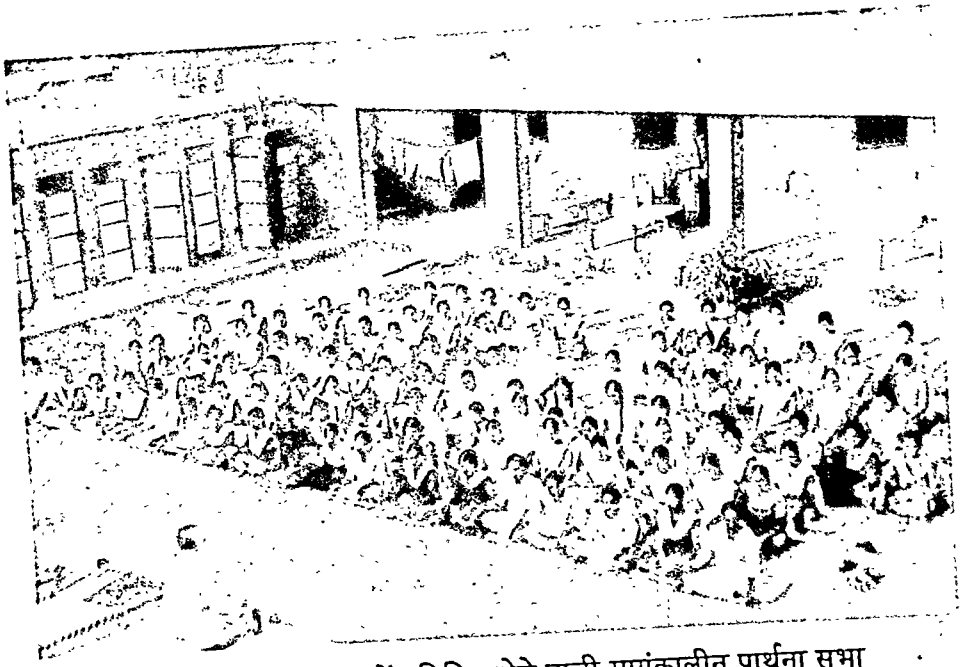
वैदिक कन्या छात्रावास में प्रतिदिन होने वाली सायंकालीन प्रार्थना सभा

वैदिक कन्या छात्रावास की कन्याओं द्वारा सामूहिक पैरेड क

वैदिक कन्या छात्रावास में श्री आर्य के सम्मान समारोह में बोलते हुए
डॉ. हनुमानसिंह कस्वां
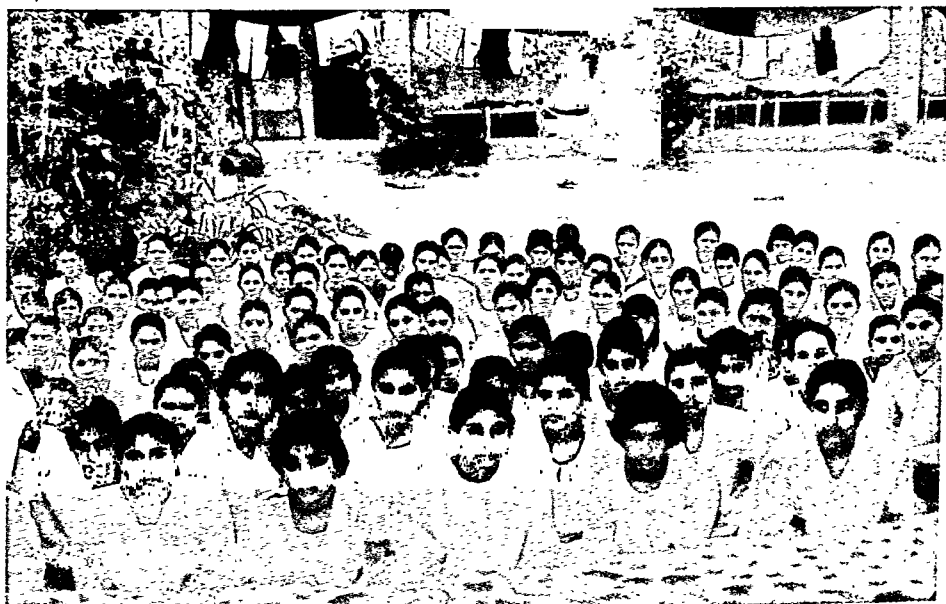
वैदिक कन्या छात्रावास की छात्राएं
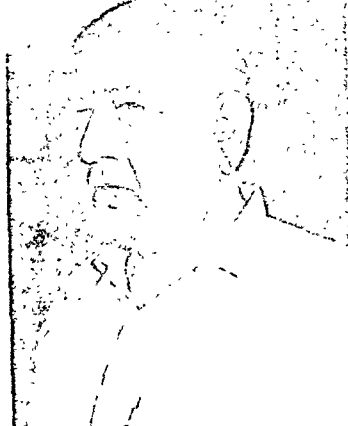
वैदिक कन्या छात्रावास की विकास यात्रा

हरफूलसिंह कस्वां

परिवार, समाज और राजनीति के क्षेत्र में मैं बहुत समय तक पूज्य चाचाजी श्री भैरारामजी से जुड़ा रहा हूँ और अब भी जुड़ा हुआ हूँ तथा जीवन पर्यन्त जुड़ा ही रहूँ, यही कामना है। कई अवसरों पर विचारों की साम्यता न होने के कारण मेरे द्वारा प्रतिरोध किया गया, किन्तु न जाने इनके व्यक्तित्व में कैसा चुम्बकत्व है कि मैं इनके आकर्षण से कभी भी स्वयं को मुक्त नहीं कर पाया और सदैव इनके मार्गदर्शन से कार्य करता रहा हूँ। यहाँ मैं अपने अनेकानेक राजनैतिक कार्यकलापों की चर्चा न कर केवल वैदिक कन्या छात्रावास के जन्म और संघर्ष की कथा की चर्चा करना चाहूँगा क्योंकि पूज्य चाचाजी के जीवन की यह घटना सबसे महत्त्वपूर्ण और गौरवशाली है।

सन् 1988 में जब सर्वप्रथम चाचाजी ने कन्या छात्रावास की स्थापना का विचार मेरे समक्ष रखा तो मैंने अपनी असहमति व्यक्त की क्योंकि तारानगर जैसे कस्बे में बालिकाओं का छात्रावास बनाना अव्यावहारिक सा प्रतीत हुआ। मेरी राय में देहात के लोगों द्वारा अपनी किशोर और युवा लड़कियों को कस्बे के माहौल में छात्रावास में रहने और पढ़ने भेजना, असंभव सा लग रहा था। उस पर छात्रावास का खर्चा वहन करना, उन बालिकाओं की सुरक्षा व्यवस्था करना, ऐसे कई प्रश्न मैंने उनसे किये। किन्तु उन्होंने अपना निश्चय नहीं बदला। मेरे ही विचारों को बदलते हुए अपने इस सुकार्य में बराबर अपने साथ लगाये रखा। इस पुनीत कार्य में पूज्य चाचाजी के परम मित्र डॉ. ओम प्रकाशजी गुप्ता शुरू से ही बराबर के सहयोगी रहे।

कन्या छात्रावास को साकार रूप देने के लिए सर्वप्रथम संस्था के पंजीकरण हेतु आवेदन किया गया तथा प्रचार-प्रसार हेतु पैम्पलेट छपवाकर गांव-गांव निकल पड़े। स्थान की दृष्टि से अपना तारानगर का मकान तय कर लिया गया। इस विषय में उनके द्वारा अपने दोनों पुत्रों को भी अवगत करा दिया गया। उनमें पिताजी के पुण्य कार्य के प्रति अन्य विचार उत्पन्न होने का प्रश्न ही नहीं था।

छात्रावास के शुभारम्भ वर्ष 1988 जुलाई-अगस्त माह में सर्वप्रथम सात छात्राओं ने प्रवेश लिया तथा 89-90 में केवल नौ ने और 90-91 में यह संख्या

बाईस तक पहुँच गई। छात्राओं के खाने-पीने की व्यवस्था से लेकर स्कूल से लाने व पहुंचाने व रात्रि में उनकी सुरक्षा की सम्पूर्ण जिम्मेदारी स्वयं ही ने निभाई। सत्कार्यों में ईश्वर भी सहयोग करता है इसका साक्षात् रूप हमने चाचाजी के सहयोगी श्री रामदत्तजी आर्य के रूप में देखा जो फौज से सेवानिवृत्ति लेकर अपना पूर्ण सहयोग देते हुए इस कार्य में सहयोगी बने। कहते हैं एक और एक ग्यारह भी होते हैं। यह बात इन दोनों तपस्वियों ने सार्थक कर दिखाई। दोनों तपस्वियों की लगन और तपस्या रंग लाने लगी। इस पावन यज्ञ के प्रभाव से अब कोई प्रभावित न हो यह संभव ही न था। मैं भी तन-मन से पूर्ण रूप से इस यज्ञ में सम्मिलित हो गया।

अब योजनाबद्ध रूप से प्रयत्न आरंभ किये गये। छात्रावास हेतु भूमि पाने के लिये जिलाधीश चूरू एवं राज्य सरकार को भी आवेदन दिया गया। उचित भूमि-स्थान की तलाश शुरू हो गई। इस क्रम में कई स्थानों के प्रस्ताव सामने आये उसमें तारानगर शहर के पश्चिम किनारे में अपनी खाली भूमि-बाड़ी में उक्त छात्रावास निर्माण का प्रस्ताव भी आया किन्तु इनके पुत्र डॉ. हनुमानसिंहजी द्वारा इस स्थान को सुरक्षा की दृष्टि से उपयुक्त नहीं पाया गया क्योंकि यह स्थान शहर से दूर, आवागमन से कटा हुआ, छात्राओं की दृष्टि से असुरक्षित था। अतः डॉक्टर हनुमासिंह की ही सलाह पर अपने ही मकान में जहाँ छात्रावास चल रहा था, वहाँ और निर्माण कर छात्रावास बनाने का निर्णय लिया गया। सारे खर्च की जिम्मेदारी दोनों भाइयों ने अपने पर ली। यह प्रस्ताव सभी को मान्य हो गया तथा नक्शा इत्यादि बनने शुरू हो गये। इसी बीच प्रयागचन्दजी सोमानी व उनका लड़का श्याम सुन्दर, नागपुर से तारानगर आये। उनसे चाचाजी का मिलन हो गया। रावतराम छींपा के सहयोग से श्याम सुन्दर ने अपने पड़-दादा के नाम की भूमि, जो बलदेवदास सोमानी के नाम से सन् 1890 में धर्मशाला बनाने हेतु धर्मार्थ दी हुई थी, उसे द्वारा इकरारनामा छात्रावास को प्रदान कर गये। परन्तु नये स्टेन्ड पर होने से खेमानियों के कुएं से दक्षिण में सारी भूमि पर अवैध कब्जे थे। कब्जे वालों से कहा गया कि भूमि खाली करो लेकिन परिस्थिति बड़ी विकट थी। इसी बीच बनवारीलाल सोनी ने कब्जा कर पेड़ लगा रखे थे उसने एक मन्दिर बनाने हेतु मन्दिर का शिलान्यास करने के लिये लोगों को इकट्ठा किया—हरफूलसिंह, अमरसिंह व परसाराम ने उसे बुलाकर समझाया किन्तु कोई असर नहीं हुआ। यह बात जनवरी 1992 की है। दोनों तरफ के लोगों द्वारा प्रतिरोध किया गया। बात काफी बढ़ गई तथा लड़ाई-झगड़े की स्थिति बन गई। ऐसे में पुलिस को इतला कर दी गई कि मौके पर पहुँचो अन्यथा बात बिगड़ सकती है। पुलिस के प्रयास से शिलान्यास रोक दिया गया।

लोगों द्वारा बीच-बचाव करने पर बनवारीलाल ने कहा कि इस भूमि को नपवा लो। नापने पर छात्रावास की भूमि निकली तो मैं खाली कर दूँगा। अगले दिन कस्बे के पटवारी व नगर पालिका के गजधर को बुलाकर पैमाईश करवाई गई। भूमि

छात्रावास की ही निकली, लेकिन बनवारीलाल सोनी नहीं माना व कहा कि पंचों द्वारा फैसला करवा लिया जावे। जिस पर बनवारीलाल व ऋषिकुमार ने पांच-पांच रुपये के स्टाम्प लिखकर दे दिये व अपने पंच भंवरसिंह राजवी, बीछराम व अमरसिंह कस्वां व मालसिंह सहारण ढाणी आशा को बनाया। इन चारों पंचों ने लक्ष्मीनारायण वकील को सरपंच बनाया। कई बार पंचों द्वारा इसे सुलझाने के प्रयास हुए परन्तु बनवारीलाल सोनी इन्कार कर गया। जिस पर तारानगर में रहने वाले देहाती लोगों की गुगनसिंह के घर पर रात्रि में दिनांक 3-03-92 को गुप्त मीटिंग हुई जिसमें सर्व सम्मति से यह फैसला किया गया कि चार टीम बनाकर कल शाम को देहात से आदमियों को बुलाया जाये अगर बनवारीलाल कब्जा खाली ना करे तो उखाड़ दिया जावे। चार मार्च को देहात से लगभग 5 हजार व्यक्ति इकट्ठे हो गये तथा डॉ. हनुमानसिंह भी बीकानेर से आ गया। पुलिस को इस बारे में आभास मिलने से उपखण्ड अधिकारी, राजगढ़ को बुला लिया गया। एस.डी.एम. साहब ने बनवारी लाल को भी बुलवा लिया छात्रावास की तरफ से पन्द्रह बीस मुख्य कार्यकर्त्ता अमरसिंह, परसाराम, रामकुमार बेनीवाल, कुन्दनमल, रामकिशन, गुगनसिंह सहारण, ओम प्रकाश वकील, डॉ. हनुमानसिंह, हरफूलसिंह आदि गये। डॉ. हनुमानसिंह ने सभी के सामने बनवारीलाल से बातचीत की तो उसने गेट की चाबी सभी के सामने दे दी, परन्तु फिर निकल कर चला गया व खोजने पर भी नहीं मिला। डॉ. हनुमानसिंह ने भी काफी प्रयास किया।

देहात से आये कार्यकर्ताओं को यह बात रास नहीं आई। कुछ नौजवान कार्यकर्त्ताओं ने बनवारीलाल के कब्जे की बाड़ फाड़ डाली। हालात गंभीर होते देखकर एस.डी.एम. साहब ने चूरू से फोर्स मंगवा ली, परन्तु आगे कार्यवाही नहीं हुई तथा सुबह 5 मार्च को एस.डी.एम. साहब ने बनवारी के कब्जे की भूमि कुर्क करके तहसीलदार को रिसीवर नियुक्त कर दिया। 5 मार्च को ही बनवारीलाल ने मुंसिफ कोर्ट में यथा स्थिति का आदेश भी ले लिया तथा पुलिस में 9 व्यक्तियों पर डाके का केस भी एस.पी. को पेश होकर कर दिया जिसमें निम्न व्यक्ति थे (1) श्री भैराराम कस्वाँ, (2) डॉ. हनुमानसिंह कस्वाँ, (3) हरफूलसिंह कस्वाँ, (4) अमरसिंह कस्वाँ, (5) गुगनसिंह सहारण, (6) रामकुमार बेनीवाल, (7) ओम प्रकाश सिहाग, (8) रामदत्त ज्याणी, (9) हेमराज ज्याणी।

शहर का वातावरण छात्रावास के खिलाफ जरूर नजर आया। लेकिन सामने कोई नहीं आया। घटना में आगे 5 आलमारियां व रिषीकुमार का होटल शेष रहे। उन्हें बुलाकर कहा गया तो ऋषिकुमार ने अपना कब्जा खाली कर दिया व आलमारी वालों में प्रथम रोज की घटना में एक आलमारी को नुकसान पहुँच गया था। कमेटी ने उसको 3000 रुपये दे दिये व दो अन्य आलमारी वालों की मदनमोहन चेयरमेन व द्वारकाप्रसाद धानाराम सदस्य नगरपालिका को पूछकर बाग के उत्तर में

आलमारियां रखवा दी गई। रिषी कुमार के छप्पर आदि के 15000 रुपये दे दिये गये। इस प्रकार कुर्क शुदा भूमि के अलावा सारा कब्जा खाली हो गया।

परन्तु बनवारीलाल ने तीन आदमी और मिलाकर पीछे की भूमि पर भी अस्थाई आदेश यथावत् स्थिति का ले लिया, जिसमें छात्रावास का शिलान्यास करवाया जाना था। भूमिदान दाता भी बाहर से चलकर आये पर सब कार्य रुक गये। परन्तु नौजवान कार्यकर्त्ताओं का खून खौल उठा और कदम आगे से आगे बढ़ाते रहे। एक मीटिंग भूमिदान दाताओं के सम्मान में ओसवाल पंचायत भवन में रखी गई जिसमें प्रयागचन्द व श्रीनिवास खेमाणी का सम्मान किया गया।

श्री तनुरामजी भाकर की अध्यक्षता में कमेटी की मीटिंग में श्री गुमानसिंह सारण ढाणी आशा को सर्वसम्मति से कोषाध्यक्ष नियुक्त किया गया तथा नागरमल कुल्हाड़िया को सहायक तय किया गया। छात्रावास निर्माण हेतु कोष संग्रह पर भी विचार-विमर्श किया गया जिसमें मीटिंग में ही निम्नलिखित दान की घोषणा हुई—

(1) श्री भैराराम कस्वाँ—1,00,000 रुपये मय जीवन दान

(2) श्री हरफूलसिंह कस्वाँ—एक कमरा

(3) श्री अमरसिंह कस्वाँ—एक कमरा

(4) श्री इन्द्राज कुल्हाड़िया—एक कमरा

(5) श्री परसाराम महला—एक कमरा

(6) श्री खेमाराम सहारण—एक कमरा

यह तय किया गया कि एक किराये की जीप लेकर तहसील के सभी गांवों में प्रचार किया जावे व 19 तारीख को छात्रावास की भूमि में ही सबको इकट्ठे किये जावे। प्रचार कार्य चालू कर दिया गया। इसी बीच में लूणकरण सोनी, श्री रावतराम छींपा व श्री नरपत पुत्र श्री बनवारीलाल, हरफूलसिंह के पास चलकर आये तथा राजीनामे की बात की। जिस पर हरफूलसिंह ने कहा—राजीनामा करना बहुत बढ़िया बात है, परन्तु अगर कोई शर्त रखोगे तो कमेटी के सामने रख दूँगा। मैं अपने आप कोई निर्णय नहीं ले सकता। बात मान ली गई व ए.डी.जे. कोर्ट से कुर्की की अपील उठा ली गई। परन्तु बनवारीलाल कुछ समय बाद फिर किसी के बहकावे में आकर बदल गया। मुकदमेबाजी फिर शुरू हो गई। छात्रावास का चन्दा नियमित रूप से चलता रहा दिनांक 1-7-92 को मुहूर्त निकलवा कर पाया भरवा लिया गया। भवन का नक्शा आदि तैयार कर दिनांक 10-7-92 को ठेका देकर निर्माण कार्य भी शुरू करवा दिया गया। दो कमरों पर पट्टियां पड़ने के बाद दिनांक 07-08-92 को बनवारीलाल की अपील पर सेशन कोर्ट ने अस्थाई निषेधाज्ञा जारी कर चेजा बन्द करवा दिया। यह निर्माण प्रक्रिया ऐसे ही रुकती, चलती रही। अब छात्रावास में 21 कमरे, मुख्य द्वार, स्नान घर व शौचालय बने हुए हैं। पूज्य चाचाजी

व श्री रामदत्तजी आर्य ने अपना जीवन समर्पित कर रखा है। सम्पूर्ण व्यवस्था व देख-रेख इन्हीं के द्वारा की जा रही है।

नारी शिक्षा एवं जागृति के लिये किये गये प्रयासों, कार्यों एवं समर्पण को देखते हुए पूज्य चाचाजी श्री भैरारामजी आर्य का बहादुर सिंह भोमिया चेरीटेबल ट्रस्ट, संगरिया द्वारा कुछ समय पूर्व सम्मान किया गया। सम्मानित करते हुए एक शाल, प्रशस्ति पत्र व नकद राशि रु. 11000/- प्रदान किए गए।

अपने समर्पण भाव और तपस्या की यात्रा जारी रखते स्वामी केशवानन्द चेरीटेवल ट्रस्ट के वार्षिक अधिवेशन में चौ. भैरारामजी ने संन्यास ग्रहण कर लिया। अपने आप को गृहस्थाश्रम से मुक्त कर संन्यासाश्रम में पदार्पण कर अपना पूर्ण जीवन समाज सेवा एवं नारी शिक्षा के प्रति समर्पित कर दिया। निस्सन्देह यह मेरे लिये व्यक्तिशः गौरव का विषय है कि मैं ऐसे शिक्षा सन्त महामानव के मूल्यों और आदर्शों से जुड़ा रहा हूँ।

वैदिक कन्या छात्रावास की विकास यात्रा में पूज्य चाचाजी के सहयोगी कई और व्यक्ति भी रहे हैं जिन्होंने अपनी सामर्थ्य और क्षमतानुसार परोक्ष एवं अपरोक्ष रूप से निरन्तर सहयोग दिया है तथा दे रहे हैं। उन सबका उल्लेख भी उतना ही आवश्यक है। ये महानुभाव हैं—

1. श्री रामकिशनजी कुल्हाड़िया
2. श्री इन्द्राज जी कुल्हाड़िया
3. श्री अमरसिंहजी कस्वां
4. श्री नोरंगजी धींधवाल
5. श्री गुमानसिंहजी सारण
6. श्री तनुरामजी शाखर
7. श्री हरफूलसिंहजी कस्वाँ
8. श्री करतारसिंहजी गुलिया
9. श्री जीतारामजी जांदू
10. श्री भजनसिंहजी पचार

इनके अतिरिक्त संस्था के निर्माण में नौजवानों की जोशीली इकाई भी पूर्ण रूप से सक्रिय है।

हमारे आदर्श : हमारे दादा

(वैदिक कन्या छात्रावास की छात्राओं की भावाभिव्यक्तियां)

अन्तेवासिनी छात्राएँ

'दादा' श्री भैरारामजी खाली समय में रामायण, महाभारत, वेद और अन्य ग्रन्थ पढ़कर उनमें से खास-खास बातें छांटकर हमें बताते हैं। हमें इनकी बातें बताने की शैली बहुत अच्छी लगती है। —कु. कलावती कुलड़िया (देवगढ़)

मेरा विचार है कि आज के जमाने में नारी जाति का इतना सम्मान करने वाला, उसकी शिक्षा को इतना महत्व देकर इतना कष्ट उठाने वाला दूसरा कोई पुरुष नहीं हो सकता—सिर्फ हमारे 'दादा-आर्यजी' ही हैं। —कु. शीला भाकर (भनीण)

चौधरी श्री भैराराम जी का चेहरा आज भी लाल दमकता रहता है। वे किसी प्रकार का व्यसन नहीं करते न ही किसी युवक को करने देते हैं। उनका कहना है कि युवा शक्ति का सही प्रयोग होना चाहिए। आप लगभग 80 वर्ष से ऊपर होकर भी युवाओं की भांति कार्य करते हैं तो हम सब अवाक् रह जाती हैं।

—कु. बलवंती (अमरासर)

'दादा' के जीवन से हमें कभी नहीं रुकने व निरन्तर कार्य करने की सीख मिलती रही है। आज भी हम उन्हें खाली बैठे देखते नहीं हैं। भगवान ने उन्हें 'नारी शिक्षा' जैसे पुण्य कार्य के लिए निमित्त कर भेजा है। मैं इनके कार्य में हाथ बंटाने के लिए सदैव तत्पर रहूंगी। मैं यही चाहती हूं, यही मेरी कामना है।

—कु. सीमा आर्य (गुडान)

हर रविवार को हम से सामूहिक हवन कराते हैं। श्री भैराराम जी हमें सच्चाई की बहुत शिक्षा देते हैं। जीवन के नित्य कर्मों में अनुशासन बना रहे व अपना दैनिक कर्म टूटे नहीं, यही शिक्षा देते हैं।

—विनोद कुमारी ज्याणी (भलाऊ टीबा)

आपने हमारी रक्षा के लिए अपना पूर्ण जीवन दांव पर लगा रखा है। न सोते हैं—रात में भी। बेटियां समझकर हमें कितना लाड-प्यार व दुलार देते हैं जिसे मैं लिख नहीं सकती। अपने शरीर का तो ध्यान नहीं रखते।

—कु. निर्मला शिवराण (चुनकिया ताल)

मिट्टी के घड़ों पर कोयले से लिख-लिख कर पशु चराते-चराते अक्षर ज्ञान पाने वाले दादा आज हर समय हमारे लिए, नारी शिक्षा व हित के लिए लगे रहते हैं। उन्हें देखकर आश्चर्य तो होता है मगर सच है, अच्छा भी लगता है। पोतियों से मजाक भी खूब करते हैं दादा। इसलिए तो दादा हम सबके प्रिय हैं।

—कु. शकुन्तला ज्याणी (भलाऊ टीबा)

दादोजी भैराराम जी सादा जीवन रखते हैं। खुद कपड़े बिना साबुन के धोते हैं फिर भी कपड़े साफ धो लेते हैं। बहुत परिश्रमी हैं। बहुत ज्ञान की बातें बताते हैं और हमारी सुरक्षा व हर जरूरतों का पूर्ण ध्यान रखते हैं।

—कु. सुनीता ईसराण (भलाऊ टीबा)

श्री भैराराम जी आर्य बहुत ही सभ्य तथा महापुरुष व्यक्ति हैं जिनके जीवन से हमें सीखें मिलती हैं। —कु. मीरां सहारण (गाजूवास)

दादाजी सत्संग के अन्दर देश भक्ति के गीत गाते हैं, भजन सुनाते हैं और अच्छी बातों को ग्रहण करने की प्रेरणा देते हैं।

—कु. लक्ष्मी सहारण (धीरवास छोटा)

मूर्ति पूजा छुड़वावें, करें दहेज का विरोध
पाखण्ड को भगावें, नारी को दिलावें शिक्षा
होगा जग का कल्याण यही दादोजी का काम
देखियो क्या होगा ?

इनका जीवन सहनशीलता से भरा पड़ा है। नारी जाति के कल्याण के लिए जो कार्य इन्होंने किया है भगवान इन्हें शक्ति देते रहें। —कु. सुनीता आर्य (गुडान)

दादाजी में नारी कल्याण की भावना कूट-कूट कर भरी है।

—कु. विद्या मूहाल (गोडास)

ज्यादा चमक-दमक, दिखावा अच्छा नहीं है। नशाखोरी जीवन को जहर बना देती है। —कु. रोमती सरावग (पडरेऊ टीबा)

इनमें कोई भी दुर्गुण नहीं है। वे हमें अच्छी शिक्षा देते हैं और प्रत्येक के लिए भलाई के कार्य करते हैं। आर्य समाज के प्रचार में भी लगे रहते हैं।

—कु. दुर्गा कस्वां (करणपुरा)

नारी जाति के कल्याण के लिये इन्होंने जितने कष्ट सहे हैं, उतने कष्ट आज के जमाने में कोई सह नहीं सकता है। 'दादाजी' का कार्य पूरे देश में सराहनीय है।

—कु. रेशमा सहारण (रोझानी)

श्री भैराराम जी गांधीवादी हैं और गांधीजी के समान ही खादी वस्त्र अपने हाथों से बुनकर पहनते हैं। सचमुच में हमारे तो वे ही गांधी हैं।

—कु. सुलोचना जीनवाल (ढाणी आशा)

हमारे समाज में बड़े आदमी विरले ही होते हैं। हम लोगों का सम्पर्क भी उनके साथ मुश्किल ही हो पाता है मगर जो हमारे साथ दादा श्री भैरारामजी हैं बहुत ही भले और महान् आदमी हैं जिनका वाणी से मैं बखान नहीं कर सकती। यह हमारा सौभाग्य है। —कु. विनीता शर्मा (झोथड़ा)

श्री भैरारामजी आर्य द्वारा खोला गया 'वैदिक कन्या छात्रावास' अब प्रसिद्ध हो रहा है। उनका नाम अमर हो रहा है और होकर रहेगा।

—कु. गीता कुमारी भालोठिया (झाड़सर)

श्री भैरारामजी आर्य व श्री रामदत्त जी आर्य दोनों महान् पुरुष हैं। एक ऐसी जगह जो कुछ भी ना थी—जंगल सी थी छात्रावास खोल उसे हरा-भरा कर दिया है। नारी कल्याण सुधार में अपना समस्त जीवन लगा रहे हैं।

—कु. कृष्णा सहारण (जोंठा)

बहुत कष्ट सहकर, नारी शिक्षा के लिए आजीवन और अब भी पूर्णतः जुटे हुए हैं। नारी जगत् इनका जीवन पर्यन्त आभारी रहेगा।

—कु. शारदा सियाग (धीरवास बड़ा)

आप उच्च विचारों के धनी व शुद्ध भावना के व्यक्ति हैं।

—कु. मुकेश सहारण (कैलास)

80 वर्ष के दादा आज भी काम करते हुए, हम लड़कियों को काम में जुटे रहने की प्रेरणा देते हैं, हमें सफलता की राह बतलाते हैं। आप वीर और विद्वान व्यक्ति हैं। —कु. बाला कुलरिया (हरिपुरा)

जन्म से कठिन परिश्रम किया, आज भी वैसे ही जुटे हैं सचमुच प्रेरणादायक व्यक्ति हैं—हमारे दादा। आपकी ही कृपा से तारानगर का छात्रावास एक दिन नक्षत्र की भांति चमक उठेगा। —कु. गिरदावरी बावल (पण्डरेऊ टीबा)

आर्यजी 'दादा' बहुत ही विनोदी स्वभाव के और आनन्दमय व्यक्ति हैं। आर्यजी की बुद्धि बड़ी कुशाग्र है। वे हमेशा कहते हैं—

नारी निन्दा मत करो, नारी गुण की खान।
नारी से नर उपजे, ध्रुव-प्रह्लाद समान।

नारी को अधिकतम शिक्षा देने का प्रयास करना चाहिए।

—कु. सुलोचना सियाग (खोंडा)

आप में बचपन से ही ईमानदारी, सत्य व परिश्रम आदि के गुण थे। 'सादा जीवन उच्च विचार' यही है आर्य जी के जीवन का आधार। इनके जीवन ने हम सबको प्रभावित किया है। इनकी सादगी, सरलता व परिश्रम को देख हमें प्रेरणा मिलती है। धन्य हैं ऐसे पुरुष जिनके कारण हम ग्रामीण बालायें शिक्षित हो रही हैं। 'आर्य श्री भैराराम जी की जय हो।' —कु. इन्दुबाला शर्मा (झोथड़ा)

खान-पान, रहन-सहन व वेशभूषा में साधारण जीवन व्यतीत करने वाले, सीधे-सादे हमारे भैरजी दादाजी पक्के गांधीवादी हैं। संकट में कभी नहीं घबराते। अहिंसा के पुजारी हैं। नारी जाति को शिक्षा दिलाकर उसे मान दिलाने का संकल्प लिये हैं। जब से इस कल्याणकारी कार्य में जुटे हैं, अपना घर-जमीन तक नारी जाति की शिक्षा के लिए दान कर एक आदर्श स्थापित किया है। आप महान् हैं। 'वैदिक कन्या छात्रावास' की सभी ग्रामीण बालायें जिनकी शिक्षा आपके द्वारा ही सम्भव हुई है। आपकी सदैव ऋणी रहेंगी। 'दादा' का सपना साकार हो। विश्व भर की नारियां शिक्षित हों। दादा लम्बी उम्र पायें हमें शिक्षा देते जायें।

—कु. सुलोचना धिनवाल (ढाणी आशा)

भजन गाते सुधरा

महर्षि दयानन्द के एक शिष्य थे अमीचन्द। वे गाते भी बहुत अच्छा थे व तबला भी बजाते थे पर उन्हें शराब पीने की बुरी लत थी। अन्य शिष्यों ने कहा—भगवन् इन्हें आप अपने साथ न रखें। इनसे हम सबकी प्रतिष्ठा गिरती है। स्वामीजी बोले—'पहले यह गाता था, पेट के लिये व मनोरंजन के लिए। अब कुछ समय से जब से हमसे जुड़ा, भगवान् की खातिर उन्हीं को सुनाकर गीत गाता है। यह स्वयं बदलेगा।' हुआ भी यही। प्रेरक प्रभु के सन्देश को फैलाने वाले, गीत सुनाते-सुनाते अमीचन्द बदल गए, उनकी शराब पीने की आदत भी छूट गयी और समाज सुधार के कार्य में स्वामीजी के सहयोगी बने।

ग्रामोत्थान का पाँच सूत्री कार्यक्रम

डा. ज्ञानप्रकाश पिलानिया

शहर अपनी हिफाजत अपने आप कर सकते हैं। हमें तो अपना ध्यान गांवों की ओर लगाना चाहिए। हमें उनकी संकुचित दृष्टि, उनके पूर्वाग्रहों एवं वहमों आदि से उन्हें मुक्त करना है और इसे करने का सिवाय इसके और कोई तरीका नहीं है कि हम उनके साथ उनके बीच में रहें, उनके सुख-दुख में हिस्सा लें और शिक्षा और उपयोगी ज्ञान का उनमें प्रचार करें।

पढ़े-लिखे नवयुवकों को मेरी सलाह है कि वे प्रयत्न में लगे रहें और अपनी उपस्थिति से गांवों को अधिक प्रिय और रहने योग्य बना दें। —महात्मा गाँधी

1. गाँव जगे देश जगे :

भारत गांवों का देश है। भारत का हृदय गाँवों में धड़कता है। गाँधीजी का दरिद्रनारायण गाँवों में बसता है। गाँव भारत की रीढ़ है। यदि गाँव जिन्दा है तो भारत जिन्दा है। देश की उन्नति के लिए, गाँव की सुध लेनी ही पड़ेगी। गाँव के वातावरण को कुरीतियों के दूषण से मुक्त करना होगा। ग्रामवासियों में चेतना जगानी होगी, उन्हें आत्मचिंतन के लिए प्रेरित करते रहना होगा। ग्राम चेतना जगाए बिना राष्ट्र जागरण नहीं हो सकता।

2. जो जागत है सो पावत है :

ऋषि आह्वान करता है 'उतिष्ठत, जागृत, प्राप्य, वरान् निबोधत' : उठो, जागो और श्रेष्ठ पुरुषों से आगे बढ़ने का मंत्र प्राप्त करो। अज्ञान-निद्रा त्याग कर उठ बैठने पर और विद्या के प्रकाश में जागृत हो जाने पर ही उन्नति का मार्ग सूझ सकता है। आज आवश्यकता है जागने की। सदियां बीत गई सोने में। गुलामी के अंधकार में गाफिल पड़े रहे। अशिक्षा के कोहरे में आलस्य से लेटे रहे। अज्ञान के प्रमाद में जड़ता से जकड़े रहे। आज स्वाधीनता के प्रभात की पुकार है कि आलस्य छोड़ो। प्रमाद त्यागो, जागो, उठो और अपने लक्ष्य को प्राप्त करो। जागना ही जीवन है। चलना ही जीवन है। चलना ही चेतना है। कर्म ही पुरुषार्थ है। जागना ही पाना है। सोना ही खोना है। चरैवेति, चरैवेति।

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहाँ जो सोवत है।
जो सोवत है सो खोवत है, जो जागत है सो पावत है।।

3. ग्रामीण सांस्कृतिक विरासत एवं पतन का दौर :

हम अपनी प्राचीन ग्रामीण संस्कृति पर गर्व करते हैं क्योंकि वह प्रेम, भाईचारा, सद्भाव और सह-अस्तित्व की भावना पर आधारित थी। पंच के मुख से परमेश्वर बोलता था। गाँव एक कुटुम्ब था। एक घर की खुशी पूरे गाँव की खुशी और एक घर की गमी पूरे गांव की गमी होती थी।

विदेशियों के आक्रमण, आक्रान्ताओं के दमन एवं गुलामी की लम्बी यातनाएँ, सहकार एवं भाईचारे पर आधारित भारतीय ग्राम्य संस्कृति को पूरी तरह नष्ट तो नहीं कर सके परन्तु उसका स्वरूप अत्यन्त विकृत कर दिया। गाँव में अशिक्षा, अविश्वास, रूढ़िवादिता, गरीबी और अकर्मण्यता का बोलबाला हो गया। गाँव के अधिकांश लोगों का जीवन पशुओं जैसा हो गया। कालान्तर में, पश्चिमी संस्कृति एवं नई भौतिकवादी होड़ ने भारतीय समाज में अफरातफरी पैदा कर दी। नवीनता तथा विकास के नाम पर एक अंधी दौड़ हुई, जिससे ग्राम समाज में अनेक नई विकृतियां पैदा हो गई। नशा, फिजूलखर्ची, मुकदमेबाजी, शोषण तथा अत्याचार ने समाज की नींव को ही चरमरा दिया। सात्विक परम्पराओं पर तथाकथित आधुनिकता का मुलम्मा चढ़ाकर, ग्रामवासी अनेक आत्मघाती मान्यताओं में फंस बैठे।

परन्तु, पराधीनता के अंधकार में भी स्वाधीनता के जुगनू चमकते रहे। संस्कृति की विकृति को दूर करने के लिए समाज सुधार के प्रयासों की एक परम्परा चली। स्वामी दयानंद ने स्वभाषा, स्वदेशी एवं स्वराज्य का उद्घोष किया। लोकमान्य तिलक ने स्वाधीनता का नारा बुलन्द किया। महात्मा गांधी ने 'करो या मरो' का मंत्र फूंका। देश आजाद हुआ। कर्मयोगी शिक्षा संत स्वामी केशवानंद (1883-1972) इसी देशभक्ति एवं जनचेतना परम्परा की एक कड़ी थे।

4. स्वामी केशवानन्दजी का ज्ञान यज्ञ :

राजस्थान के सीकर जिले के एक छोटे से गाँव मंगलूणा में, एक अति साधारण किसान (ढाका जाट) परिवार में जन्मे स्वामी केशवानन्दजी ने, जो बचपन में ही अनाथ हो गये थे, शिक्षा को मानव कल्याण और समाजोत्थान का सर्वप्रथम और सर्वोत्तम साधन जानकर, ज्ञान दान को अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित किया था। उसी लक्ष्य की सिद्धि में उन्होंने अपना सुदीर्घ जीवन खपा दिया—एक पैसा पास न होते हुए, शिक्षा यज्ञ के लिए दर-दर भीख मांगने का अपमान सहते हुए और मरुभूमि में दुष्कर पैदल यात्राओं के कष्ट भोगते हुए भी, कभी अपनी दृष्टि से उन्होंने लक्ष्य को ओझल न होने दिया। उस शिक्षा के मसीहा ने स्वयं अर्द्धशिक्षित होकर शिक्षा शून्य रेगिस्तानी देहातों में ज्ञान गंगा बहा दी, जिनके आह्वान पर लाखों लोग

शिक्षित हुए। उन्होंने जीवन पर्यन्त शिक्षा की ज्योति प्रज्वलित रखी। सन् 1932 में उन्होंने, स्वनामधन्य चौधरी बहादुरसिंह भौमिया द्वारा 9 अगस्त, 1917 को स्थापित और कर्मयोगी चौधरी हरिशचन्द्र नैण द्वारा संरक्षित, 'जाट विद्यालय संगरिया' के संचालन का दायित्व संभाला और जीवन के शेष चालीस वर्षों में उसे मिडिल स्तर से महाविद्यालय, शिक्षक प्रशिक्षण शाला, कन्या विद्यालय, संग्रहालय, पुस्तकालय, औषधालय एवं 300 एकड़ भूमि पर कृषि फार्म विकसित कर, एक ग्रामीण मिडिल स्कूल को, विशाल संस्था का रूप देकर 'ग्रामोत्थान विद्यापीठ' वना दिया। ग्रामोत्थान विद्यापीठ उत्तर भारत की एक ऐसी प्रगतिशील संस्था है, जो शिक्षा-प्रचार-प्रसार के साथ-साथ समाज-सुधार, महिला कल्याण तथा जन-जागृति की अग्रदूत बनकर, जन आकांक्षाओं के अनुरूप जनसेवा में संलग्न है। ग्रामोत्थान विद्यापीठ स्वामी जी महाराज की कर्म-स्थली और श्रद्धा-स्थली है। यह प्रेरणा का, चेतना का एवं उदारता का अक्षय पात्र है, जिससे सब सेवा का प्रसाद पाते हैं।

5. समाज सुधार यज्ञ :

सामाजिक न्याय के समर्थक के रूप में, स्वामी केशवानन्दजी ने आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के उत्थान-उद्धार का कार्य किया। उन्होंने रूढ़ियों, अंधविश्वासों तथा नशा-सेवन, दहेज-प्रथा, औसर, अस्पृश्यता जैसी सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध अपने जिज्ञासु मन की शक्ति का प्रयोग करके, मरुक्षेत्र के मुक्ति के शक्तिशाली आन्दोलन को आगे बढ़ाया।

स्वामीजी महाराज की मान्यता थी कि यदि ग्राम्य समाज को उन्नति की दौड़ में पिछड़ने से बचाना है तो सर्वप्रथम शिक्षा का प्रसार-प्रचार एवं निरक्षरता का उन्मूलन करना होगा। तदुपरान्त समाज सुधार का मार्ग प्रशस्त करना होगा। उन्होंने अपना सारा जीवन शिक्षा-प्रसार एवं समाज-सुधार में लगाकर, गांववासियों को सही रास्ता दिखाया। परन्तु गांवों में अब भी सजगता नहीं आ पाई है अतः इस कार्यक्रम की प्रासंगिकता उतनी ही बनी हुई है। आज आवश्यकता है स्वयं जागरण की, समाज सुधार की एवं राष्ट्र निर्माण की। समग्र विकास के तीन चरण हैं—मनुष्य, परिवार और समाज का विकास। खुद सुधरो और समाज को सुधारो। खुद बदलो और समाज में नई चेतना लाओ।

आज हमारे देश का ग्रामीण अंचल, स्वातंत्र्य प्राप्ति के पश्चात् क्रियान्वित की गई अनेक वृहद् विकास योजनाओं के बावजूद, सामाजिक कुरीतियों एवं व्यसनों के कारण, आगे बढ़ते हुए शेष संसार के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने में अपने आप को अक्षम पा रहा है। झूठी प्रतिष्ठा, तड़क-भड़क तथा शान-शौकत के लिये अपव्यय से ग्रसित सामाजिक परम्पराएँ, मान्यताएं एवं संस्कार समाज के लिए अभिशाप हैं। आज की महती आवश्यकता है समाज-सुधार यज्ञ। इस यज्ञ के आप पुरोहित बनें।

6. स्वामी केशवानन्द स्मृति चैरिटेबल ट्रस्ट का समाज-सुधार कार्यक्रम :

जीवन पर्यन्त राष्ट्र-सेवा, शिक्षा-प्रचार, दलितोद्धार तथा सामाजिक कुरीतियों से संघर्ष करने में तूफान जैसी गति से प्रवाहमान रहने वाले युग-स्रष्टा केशवानन्दजी अचानक 13 सितम्बर, 1972 को परहितरत रहते हुए देहली के तालकटोरा मार्ग पर चिरनिद्रा में सो गये। कर्मयोगी शिक्षा-संत स्वर्गीय स्वामी केशवानन्द इतिहास के वे अमिट हस्ताक्षर हैं जिन्होंने 'आत्मनोमोक्षार्थाय जगत् हितार्थाय' का संकल्प लेकर 65 वर्ष तक जन-कल्याण करते हुए, इसी में अपने मोक्ष एवं आत्मा-कल्याण के दर्शन किये। स्वामीजी की पुण्य स्मृति में स्थापित एक लोकोपकारी सार्वजनिक अराजनीतिक न्यास (ट्रस्ट) ने, उनकी ग्रामोपयोगी विचारधारा का प्रचार-प्रसार करना अपना पावन कर्तव्य समझ कर, गाँव के कल्याण और उन्नति के लिए, पाँच सूत्री मन्त्र के रूप में निम्नलिखित समाज-सुधार कार्यक्रम प्रचारित किया है :

7. ग्रामोत्थान का पंचशील :

i. विवाहोत्सव सुधार :

(क) बाल विवाह, अनमेल विवाह न किया जाए।

(ख) बारात में अधिकतम 25 व्यक्ति हों।

(ग) विवाहोत्सव यथासम्भव दिन में किया जाए, जिससे बिजली व रोशनी पर अपव्यय बच सके।

(घ) आतिशबाजी व बैंड का प्रयोग न करें।

(च) टैंट व क्राकरी पर यथासम्भव कम खर्च किया जाए।

(छ) किसी भी रूप में दहेज का लेना व देना पूर्णतः निषेध हो।

विवाहोत्सव पर केवल एक रुपया और नारियल मंगल प्रतीक के रूप में दे दिया जाए। टीका, शुगन, सुमठनी एवं अन्य रिवाज रस्म के बहाने किसी प्रकार का लेन-देन नहीं किया जाए।

ii. जन्मोत्सव शोधन :

(क) जन्मोत्सव की पावन वेला पर छूछक, सिरधोवन आदि रीति-रिवाज के माध्यम से दिखावे, प्रतिष्ठा एवं अहंभाव के पोषण का अवसर बनाकर किसी प्रकार का लेन-देन न किया जाए।

(ख) शुभ अवसर पर परोपकार हेतु दान दिया जाए।

iii. मृत्युभोज निवारण :

(क) मृत्यु के दुखद अवसर पर एवं शोकसंतप्त वातावरण में मृत्युभोज तथा मौसर का कोई औचित्य नहीं है। शोकाकुल परिवार से मृत्युभोज के नाम पर दुराग्रह

उपाध्याया पद की पात्र होगी किन्तु आचार्य की पत्नी मात्र होने वाली आचार्यानी तथा उपाध्याय की पत्नी उपाध्यायी या उपाध्यायानी कहलावेगी। इसी को भगवान् पाणिनी ने (2900 विक्रम संवत् पूर्व) इन्द्रवरुण भव (4-1-49) सूत्र से बताया है। इससे स्पष्ट है कि ईसा पूर्व 3000 वर्ष तक आचार्या और उपाध्याया का लोकजीवन में अस्तित्व था। आचार्या और उपाध्याया अविवाहित या विवाहित हो सकती है।

नवदम्पति अग्नियों का आधान करते हैं। इन्हें मोटे-मोटे दो भागों में विभक्त किया जा सकता है, श्रोताग्नि और स्मार्ताग्नि। सम्पूर्ण श्रौत और गृघ अनुष्ठान इन्हीं अग्नियों में होते हैं। इनकी रक्षा पति-पत्नी का परम कर्त्तव्य है। पति के प्रवास में होने पर अग्निकार्यों को अकेली पत्नी करती है। पत्नी भी किसी कारण से न कर पा रही हो तो अन्य प्रतिनिधि हो सकता है। इन प्रतिनिधियों को कूर्मपुराण उत्तरार्ध में गिनाया जाता है।

ऋत्विक पुत्रो ऽथवापत्नी शिष्यो वापिसहोदर 118/48

अनन्य मनसा नित्यं जुहुयात् संभतेन्द्रियः 149

त्रिकाण्ड मण्डन में स्मृतिवचन से पत्नी का यह दायित्व स्पष्ट शब्दों में बताया गया है।

अग्निहोत्रं च नित्येष्टिः पितृयज्ञ इतित्रयम् ।
कर्त्तव्यं प्रोषिते पत्यौ नान्यत् स्वामिक्रियान्वितम् ।।

पति के प्रवास गमन पर पत्नी अग्निहोत्र, नित्येष्टि तथा पितृयज्ञ ये तीनों करे, केवल वे न करे जो स्वामी के साथ से ही करने योग्य हों। ये वचन नारी के ज्ञान तथा अधिकार को स्पष्ट रूप से बता रहे हैं।

इस शास्त्र विधि से यह नहीं समझ लेना चाहिये कि केवल विवाहिता को ही ये अधिकार हैं कुमारी को नहीं।

ब्रह्मचारी के कर्त्तव्य बताते हुए भगवान मनु कहते हैं—

उपनीय गुरुः शिष्यं शिक्षयेच्छौचमादितः ।
आचार मग्निकार्यं च सन्ध्योपासन मेव च ।।2/69

उपनयन दीक्षा देकर गुरु प्रारम्भ में शिष्य को शौचाचार, अग्निकार्य और सन्ध्योपासन की शिक्षा दें। यहाँ ब्रह्मचारी को अग्निकार्य सिखाना कुमार और कुमारी के अधिकार का सूचक है। अध्ययन में अवकाश होने पर भी होम मंत्रों (2.105) अथवा वषट्कार (हवन 2/109) की छुट्टी नहीं दी गई है। यह भली-भांति समझ लेना चाहिये कि मनुस्मृति धर्म संविधान है अतः यहाँ आए शब्दों का पुल्लिंग रूप स्त्री का भी सूचक है। गुरु, पुरुष व स्त्री को तथा शिष्य कुमार कुमारी को समान रूप से बताता है। संविधान का स्वरूप इसी प्रकार का होता है। अपेक्षित होने पर ही लिंग अपने विशिष्ट अर्थ को देता है। वेद भी स्पष्ट शब्दों में ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते

पतिम् (अथर्ववेद 11.5.18) कहकर कन्या को ब्रह्मचर्य बता रहा है। इतिहास से इसका समर्थन होता है।

कृपाचार्य की भगिनी कृपी से द्रोणाचार्य के विवाह का वर्णन करते हुए भगवान् व्यास कहते हैं

शारद्वती ततो भार्यां कृपी द्रोणोज्वविन्दत ।
अग्निहोत्रे च धर्मे च दमे च सततं रताम् ।। 129/46

द्रोण ने शरद्वान की पुत्री कृपी को भार्या रूप में प्राप्त किया जो सदैव अग्निहोत्र, धर्म और दम में लगी रहती थी। इसी आदि पर्व में भगवान् व्यास ने 130वें अध्याय में आचार्य द्रोण के मुख से पुनः यह बात कहलाई है।

सोऽहं पितृनियोगेन पुत्रलोभाद् यशस्विनीम् ।
नतिकेशीं महाप्रज्ञा मुप येमे महाव्रताम् ।
अग्निहोत्रे च सत्रे च दमे च सततं रताम् ।।46।।

मैंने यशस्विनी, महाप्रज्ञा, महाव्रता, अग्निहोत्र सत्र (विशेष यज्ञ) और दम में सदा निरत कृपी से अपने पिता के आदेश से तथा पुत्रलोभ से विवाह किया। कुमारी कुन्ती की सेवा से सन्तुष्ट महर्षि दुर्वासा ने वरदान के रूप में कुन्ती को अथर्ववेद के मंत्रों का उपदेश दिया जिनसे वह जब चाहे अभीष्ट देवता का आह्वान कर सकती थी—

तत स्तामनवधाङ्गी ग्राह्यामास च द्विजः ।
मंत्रग्रामं तदा राजन् अथर्वशिरस्थितम् ।।

वन पर्व 305/20

कुन्ती ने कुमारी अवस्था में ही सूर्य का आह्वान किया था। उसकी यह विद्या विवाह के बाद भी काम आई थी। धर्म, वायु, इन्द्र से युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन की प्राप्ति उसे तथा नकुल सहदेव की अश्विनी कुमारों से माद्री को हुई थी।

अश्वपति की पुत्री सावित्री-हुत्वाग्निं विधिवत् (वन पूर्व 293/28) विधिपूर्वक अग्निहोत्र कर देवपूजा का प्रसाद पिता को दिया करती है। सत्यवान से विवाह होने के अनन्तर भी उसका नित्यकर्म पति को मृत्यु मुख से छुड़ाने के लिये और भी कठोर व्रतों के साथ चलता है। देवर्षि नारद द्वारा बताई गई अवधि का उसे ध्यान था। उस दिन भी वह अग्निहोत्र तथा अन्य पोर्वाह्निक नित्य कर्म करती है।

अद्य तद् दिवसं चे ति हुत्वा दीनं हुताशनम्। 296-101

आज वह दिन है इस ध्यान से दीनमना सावित्री अग्निहोत्र करके, यह भाव स्पष्ट ही है।

महर्षि विश्वामित्र की यज्ञ रक्षा के लिये प्रस्थान करते हुए राम का स्वस्तिवाचन माता कौसल्या करती है। (बालकाण्ड 22/3)। स्वस्तिवाचन वेद मंत्रों से ही होता है। देवी कौसल्या सन्ध्या, प्राणायाम तथा अग्निहोत्र करती है।

अग्नि जुहोतिस्म तदा मंत्रवत् कृतमङ्गलाअयो 20/15

मंगलाचार करती हुई कौसल्या मंत्रों से अग्नि में आहुति दे रही थी। वन जाते समय श्री राम कौसल्या को उनकी दिनचर्या के लिये कहते हैं कि आप अग्निहोत्र में सदा ध्यान रखें, अग्निकार्येषु च सदा (24/29) इसी भांति वे सुमंत्र के द्वारा भी सन्देश भेजते हैं। धर्मनित्या यथाकालम् अग्न्यगारपरा भव (58/15) देवि ! आप धर्मकार्यों को अविचल करते हुए यथा समय अग्निहोत्र करें। राम के इस सन्देश से स्त्रियों के नित्य हवन की उचित समय पर करने की अनिवार्यता स्पष्ट ज्ञात होती है। महाराज दशरथ के देहावसान के बाद भी कौसल्या का अग्निहोत्र नियमित था। वे ननिहाल से लौटे भरत को कहती हैं—

अथवा स्वयमेवाहं सुमित्रानुचरा सुखम् ।
अग्निहोत्रं पुरस्कृत्य प्रस्थास्ये यत्र राघवः ।। अयो. 15/14

मैं स्वयं ही सुमित्रा को साथ लिए हुए अपने अग्निहोत्र को आगे कर वन में प्रस्थान कर दूंगी जहाँ राम हैं। इस प्रकार सधवा और विधवा के अधिकारों में भी कोई अन्तर नहीं है। वस्तुतः अग्निहोत्र की स्वामिनी पत्नी ही होती है। पुरुष को अपने लिये नवीन अग्नि का आधान करना होता है। यदि स्त्री विधवा हो जाती है तो अग्निहोत्र उसका है ही, इसको साथ लेकर वन जाने की वात कौसल्या ने कही है।

सीता की खोज में लगे हनुमान सम्भावना करते हैं कि सीता सन्ध्योपासना के लिये इस नदी पर अवश्य आयेगी। जैसा वशिष्ठ के लिये प्रयोग किया गया है वैसा ही प्रयोग 'मंत्रवित्' का तारा के लिये हुआ है।

ततः स्वस्त्य कृत्वा मंत्रविद् विजयैषिणी। कि.का. 16-12

अपने पति की विजय चाहती हुई मंत्रज्ञा तारा ने स्वस्तिवाचन कर महल में प्रवेश किया।

वानरशिरोमणि विद्याधर राज जाम्बवान् की पुत्री जाम्बवती भगवान् कृष्ण का स्वस्त्ययन-स्वस्तिवाचन करती है। (अनुशासन पर्व 14/41)

बाणासुर के मंत्री विभाण्डक की पुत्री चित्रलेखा महाविदुषी तथा महायोगिनी है जो अपनी सखी उषा के लिए श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध का द्वारका से हरण कर लाती है। यह कथा भागवत पुराण तथा हरिवंश पुराण में वर्णित है। ऐसी वेद विद्या निष्णाता सैकड़ों देवियों के चरित इन पुराणों में विस्तार से हैं। इनमें कुमारी, विवाहिता, विधवा, नर-वानर, किन्नर, दैत्य, देव आदि सभी वर्ग की स्त्रियाँ हैं तथा सभी का समान रूप से वेद सम्बन्ध है। ये सभी युगों की हैं। सावित्री सत्यवान् भगवान राम से बहुत पूर्व हुए थे, कुन्ती आदि बहुत पश्चात्। इसी प्रकार सत्य, त्रेता, द्वापर युगों में सभी वर्ग तथा अवस्था की नारियों को ज्ञान-विज्ञान में वरिष्ठ तथा वैदिक क्रियाकलापों में निरत पाते हैं। किसी भी धर्मशास्त्रीय ग्रन्थ में कालिनिषेध प्रकरण में भी नारी को वेद के अधिकार से वंचित नहीं बताया गया है। मध्यकाल के कतिपय ग्रन्थों में ऐसी ध्वनि समस्त आर्ष वाङ्मय के प्रतिकूल ही है।

इस काल में भी नारी को वैदिक संस्कार सम्पन्न पाते हैं। तभी तो महाकवि भास (1753 ई. पूर्व), कालिदास (500 ई. पू.), भवभूति तथा बाण (सप्तम शताब्दी) आदि महान् कवियों ने नारियों का यही उदात्त भव्य रूप चित्रित किया है। लगभग 2500 वर्षों के दीर्घकालखण्ड में इन शतशः कवियों ने स्त्रियों को ब्रह्मसूत्र (यज्ञोपवीत) विभूषित वेदादिशास्त्रों के अध्ययन में निरन्तर योग के सामर्थ्य से सम्पन्न बताया है। इनको कवियों की कल्पना कहकर टाला नहीं जा सकता है। ये वेद-वेदांगों के महान् विद्वान और संस्कृति के अनुपम चितेरे थे। भवभूति तो कवि बाद में किन्तु महामीमांसक और यज्ञयागादि में निरत सतत वेदाभ्यासी पहले हैं। शिकायत है कि उन्हें महान् विद्वान के रूप में ही देखा जाता है, कवि रूप में उन्हें इतना मान नहीं दिया जाता है। ऐसे इन भवभूति में अपने कल्पित पात्र ब्रह्मचारिणी मात्रेयी को निगमान्त समस्त विद्या पढ़ने वाली वाल्मीकि शिष्या और फिर अगस्त्य की शिष्यता ग्रहण करने को प्रयासशील बताया है। इसी उत्तररामचरित नाटक में भगवती सीता तथा महासती अरुन्धती का चरित जिस अति उत्कृष्ट रूप में चित्रित किया गया है वह बड़े-बड़े ऋषियों के लिए भी अनुकरणीय है।

श्री आद्यशंकराचार्य के साथ जिस अद्वितीय विद्वान् महान् वेदज्ञ मीमांसा शिरोमणि मण्डन मिश्र का शास्त्रार्थ हुआ था, इस अद्वितीय शास्त्रार्थ की मध्यस्थता तथा निर्णायिका मण्डन की पत्नी भारती थी। मण्डन के पराजित होने पर इसने भी शंकर भगवत्पाद से शास्त्रार्थ किया था। ऐसा कौन सा शास्त्र था जिसमें इसकी बेरोकटोक गति न थी।

दुर्गासप्तशती (मार्कण्डेय पुराण का 81 से 93 अध्याय तक का 13 अध्यायों का देवी माहात्म्य खण्ड) में सभी विद्याओं तथा सभी स्त्रियों को देवी का ही भेद अथवा स्वरूप बताया गया है—

विद्याः समस्ता स्तव देवि! भेदा
स्त्रियः समस्ता सकला जगत्सु। (11.5 या 91.5)

इस रूप में विद्या और स्त्रियों के समीकरण को देखना आद्या शक्ति का अपमान है। कहां-कहां इस सत्य को नकारेंगे? भगवान श्रीकृष्ण गीता में विभूति योग का उपदेश देते हुए कहते हैं कि नारियों की कीर्ति श्री, वाक् (वाणी), स्मृति, मेधा, धृति और क्षमा में ही हूँ। वाग् रूपा सरस्वती भगवान् की शक्ति है। नारी और वाक् अभिन्न हैं। इस वाक् में ईश्वर की विभूति के दर्शन किए जा सकते हैं। उस वाङ्मयी दिव्य विभूति नारी का अपमान ईश्वर का अपमान और अपने अभ्युदय व निःश्रेयस का अपमान है।

धर्मशास्त्र, पुराण और इतिहास की इस परम्परा को अवैदिक कहना दुस्साहसपूर्ण आग्रह की पराकाष्ठा ही है। श्रौतसूत्रों, गृह्यसूत्रों और शतपथ आदि ब्राह्मणों के सहस्रों प्रमाण, वाक्य तथा असंख्य वेदमंत्र इस विषय में उद्धृत किए जा सकते हैं।

अग्नि जुहोतिस्म तदा मंत्रवत् कृतमङ्गलाअयो 20/15

मंगलाचार करती हुई कौसल्या मंत्रों से अग्नि में आहुति दे रही थी। वन जाते समय श्री राम कौसल्या को उनकी दिनचर्या के लिये कहते हैं कि आप अग्निहोत्र में सदा ध्यान रखें, अग्निकार्येषु च सदा (24/29) इसी भांति वे सुमंत्र के द्वारा भी सन्देश भेजते हैं। धर्मनित्या यथाकालम् अग्न्यगारपरा भव (58/15) देवि ! आप धर्मकार्यों को अविचल करते हुए यथा समय अग्निहोत्र करें। राम के इस सन्देश से स्त्रियों के नित्य हवन की उचित समय पर करने की अनिवार्यता स्पष्ट ज्ञात होती है। महाराज दशरथ के देहावसान के बाद भी कौसल्या का अग्निहोत्र नियमित था। वे ननिहाल से लौटे भरत को कहती हैं—

अथवा स्वयमेवाहं सुमित्रानुचरा सुखम् ।
अग्निहोत्रं पुरस्कृत्य प्रस्थास्ये यत्र राघवः ।। अयो. 15/14

मैं स्वयं ही सुमित्रा को साथ लिए हुए अपने अग्निहोत्र को आगे कर वन में प्रस्थान कर दूंगी जहाँ राम हैं। इस प्रकार सधवा और विधवा के अधिकारों में भी कोई अन्तर नहीं है। वस्तुतः अग्निहोत्र की स्वामिनी पत्नी ही होती है। पुरुष को अपने लिये नवीन अग्नि का आधान करना होता है। यदि स्त्री विधवा हो जाती है तो अग्निहोत्र उसका है ही, इसको साथ लेकर वन जाने की बात कौसल्या ने कही है।

सीता की खोज में लगे हनुमान सम्भावना करते हैं कि सीता सन्ध्योपासना के लिये इस नदी पर अवश्य आयेगी। जैसा वशिष्ठ के लिये प्रयोग किया गया है वैसा ही प्रयोग 'मंत्रवित्' का तारा के लिये हुआ है।

ततः स्वस्त्य कृत्वा मंत्रविद् विजयैषिणी। कि.का. 16-12

अपने पति की विजय चाहती हुई मंत्रज्ञा तारा ने स्वस्तिवाचन कर महल में प्रवेश किया।

वानरशिरोमणि विद्याधर राज जाम्बवान् की पुत्री जाम्बवती भगवान् कृष्ण का स्वस्त्ययन-स्वस्तिवाचन करती है। (अनुशासन पर्व 14/41)

बाणासुर के मंत्री विभाण्डक की पुत्री चित्रलेखा महाविदुषी तथा महायोगिनी है जो अपनी सखी उषा के लिए श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध का द्वारका से हरण कर लाती है। यह कथा भागवत पुराण तथा हरिवंश पुराण में वर्णित है। ऐसी वेद विद्या निष्णाता सैकड़ों देवियों के चरित इन पुराणों में विस्तार से हैं। इनमें कुमारी, विवाहिता, विधवा, नर-वानर, किन्नर, दैत्य, देव आदि सभी वर्ग की स्त्रियाँ हैं तथा सभी का समान रूप से वेद सम्बन्ध है। ये सभी युगों की हैं। सावित्री सत्यवान् भगवान राम से बहुत पूर्व हुए थे, कुन्ती आदि बहुत पश्चात्। इसी प्रकार सत्य, त्रेता, द्वापर युगों में सभी वर्ग तथा अवस्था की नारियों को ज्ञान-विज्ञान में वरिष्ठ तथा वैदिक क्रियाकलापों में निरत पाते हैं। किसी भी धर्मशास्त्रीय ग्रन्थ में कालिनिषेध प्रकरण में भी नारी को वेद के अधिकार से वंचित नहीं बताया गया है। मध्यकाल के कतिपय ग्रन्थों में ऐसी ध्वनि समस्त आर्ष वाङ्मय के प्रतिकूल ही है।

इस काल में भी नारी को वैदिक संस्कार सम्पन्न पाते हैं। तभी तो महाकवि भास (1753 ई. पूर्व), कालिदास (500 ई. पू.), भवभूति तथा वाण (सप्तम शताब्दी) आदि महान् कवियों ने नारियों का यही उदात्त भव्य रूप चित्रित किया है। लगभग 2500 वर्षों के दीर्घकालखण्ड में इन शतशः कवियों ने स्त्रियों को ब्रह्मसूत्र (यज्ञोपवीत) विभूषित वेदादिशास्त्रों के अध्ययन में निरन्तर योग के सामर्थ्य से सम्पन्न बताया है। इनको कवियों की कल्पना कहकर टाला नहीं जा सकता है। ये वेद-वेदांगों के महान् विद्वान और संस्कृति के अनुपम चितेरे थे। भवभूति तो कवि बाद में किन्तु महामीमांसक और यज्ञयागादि में निरत सतत वेदाभ्यासी पहले हैं। शिकायत है कि उन्हें महान् विद्वान के रूप में ही देखा जाता है, कवि रूप में उन्हें इतना मान नहीं दिया जाता है। ऐसे इन भवभूति में अपने कल्पित पात्र ब्रह्मचारिणी मात्रेयी को निगमान्त समस्त विद्या पढ़ने वाली वाल्मीकि शिष्या और फिर अगस्त्य की शिष्यता ग्रहण करने को प्रयासशील बताया है। इसी उत्तररामचरित नाटक में भगवती सीता तथा महासती अरुन्धती का चरित जिस अति उत्कृष्ट रूप में चित्रित किया गया है वह बड़े-बड़े ऋषियों के लिए भी अनुकरणीय है।

श्री आद्यशंकराचार्य के साथ जिस अद्वितीय विद्वान् महान् वेदज्ञ मीमांसा शिरोमणि मण्डन मिश्र का शास्त्रार्थ हुआ था, इस अद्वितीय शास्त्रार्थ की मध्यस्थता तथा निर्णायिका मण्डन की पत्नी भारती थी। मण्डन के पराजित होने पर इसने भी शंकर भगवत्पाद से शास्त्रार्थ किया था। ऐसा कौन सा शास्त्र था जिसमें इसकी बेरोकटोक गति न थी।

दुर्गासप्तशती (मार्कण्डेय पुराण का 81 से 93 अध्याय तक का 13 अध्यायों का देवी माहात्म्य खण्ड) में सभी विद्याओं तथा सभी स्त्रियों को देवी का ही भेद अथवा स्वरूप बताया गया है—

विद्याः समस्ता स्तव देवि ! भेदा
स्त्रियः समस्ता सकला जगत्सु । (11.5 या 91.5)

इस रूप में विद्या और स्त्रियों के समीकरण को देखना आद्या शक्ति का अपमान है। कहां-कहां इस सत्य को नकारेंगे ? भगवान श्रीकृष्ण गीता में विभूति योग का उपदेश देते हुए कहते हैं कि नारियों की कीर्ति श्री, वाक् (वाणी), स्मृति, मेधा, धृति और क्षमा मैं ही हूँ। वाग् रूपा सरस्वती भगवान् की शक्ति है। नारी और वाक् अभिन्न हैं। इस वाक् में ईश्वर की विभूति के दर्शन किए जा सकते हैं। उस वाङ्मयी दिव्य विभूति नारी का अपमान ईश्वर का अपमान और अपने अभ्युदय व निःश्रेयस का अपमान है।

धर्मशास्त्र, पुराण और इतिहास की इस परम्परा को अवैदिक कहना दुस्साहसपूर्ण आग्रह की पराकाष्ठा ही है। श्रौतसूत्रों, गृह्यसूत्रों और शतपथ आदि ब्राह्मणों के सहस्रों प्रमाण, वाक्य तथा असंख्य वेदमंत्र इस विषय में उद्धृत किए जा सकते हैं।

मंत्र के ऋषि छन्द और देवता जानना मंत्र प्रयोगकर्त्ता के लिये अनिवार्य है। ऋषि तत्व का साक्षात्कार करने वाला होता है।

प्रत्येक मंत्र का ऋषि सूक्त अनुवाक् आदि के प्रारम्भ में दिया हुआ होता है। किसी भी वेदसंहिता को लेकर इस तथ्य को देखा जा सकता है। अनेक सूक्त और मंत्रों का साक्षात्कार स्त्रियों में किया है। वे उनकी ऋषि अथवा स्त्री लिङ्ग में कहें तो ऋषिका हैं। ऋग्वेद की ऐसी 27-28 ऋषिकाओं के नाम भगवान् शौनक ने बृहद् देवता में एक स्थल पर ही दे दिए हैं। इन ब्रह्मवादिनियों के नाम ये हैं—

घोषा, गोधा, विश्ववारा, अपाला, उपनिषत्, निषत्, जुहू, अगस्त्य, भगिनी, अदिति, इन्द्राणी, इन्द्रमाता, सरमा, रोमशा, उर्वशी, लोपामुद्रा, यमी, नारी, शश्वती, श्री लाक्षा, सर्पराज्ञी, वाक् श्रद्धा, मेघा, दक्षिणा, रात्रि, सूर्या और सावित्री। इन्द्राणी का नाम शची है तथा वह पुलोम दैत्य की पुत्री है। श्री ओझाजी (आधि देविकाध्याय) के अनुसार अगस्त्य की भगिनी का नाम असमाति है। वे शशीयसी का नाम भी देते हैं जो तरुत नरेश की पत्नी है। इसी भांति रोमशा सिन्धुराज भावयव्य की पत्नी है और शश्वती असंगराज की। सार्पराज्ञी सर्प माला कद्रू है। इनमें अनेक के पति, पुत्र, पौत्र आदि भी ऋषि-मंत्र के साक्षात् द्रष्टा हैं। इस प्रकार नारियों में ये तीस ऋषि हैं। (जिस नारी वर्ग में ऋषि स्त्रियों ने हमें मंत्र दिये हैं उन्हें मन्त्रोच्चारण के अधिकार से वंचित बताना मिथ्यादर्प के अतिरिक्त और क्या है ? ज्ञान की वास्तविक प्रतिष्ठा के लिये इस विश्ववारा संस्कृति के उत्थान के लिये अनिवार्य है कि शिक्षा-दीक्षा का मूल वेद हो। हम वेद की ओर लौटें, तभी भटकाव से मुक्ति सम्भव है।)

सफल व असफल माताएँ

परिवार में सत्प्रवृत्ति समावेश करने में नारी की भूमिका बहुत बड़ी है। मदालसा ने अपने तीन बच्चों को ब्रह्मज्ञानी व एक को पति की इच्छानुसार राजतन्त्र का अग्रगामी बनाया। विनोबा, बिठोवा, बालकोवा रूपी तीन रत्न माँ की ही देन हैं। यशोदा नटखट कृष्ण के लिये सुधार व दुलार दोनों दृष्टि रखती थीं। महाभारत के पात्रों में सफल माता के रूप में जहाँ कुन्ती का नाम आता है। वहाँ असफल माँ-बाप के रूप में गांधारी-धृतराष्ट्र का भी जिन्होंने अपने बेटों की अनीति पर अंकुश न लगाकर मोहवश उसे बढ़ाया ही।

बालक की प्रथम शिक्षा गुरु—नारी

श्री गोपालदास शर्मा

विचारकों ने चार प्रकार के गुरु माने है (1) ईश्वर, (2) माता-पिता, (3) दीक्षा गुरु एवं (4) शिक्षा गुरु। इनमें ईश्वर के उपरान्त माता-पिता का ही प्रमुख स्थान है और इन दोनों में भी माता का स्थान सर्वोपरि है। माता ही शिशु की ईश्वर के बाद इस संसार की प्रथम गुरु है, वह जैसी चाहे वैसी शिक्षा शिशु को दे सकती है। महाराज कुवलयाश्व की पत्नी मदालसा इसका प्रमाण है जिसकी शिक्षा से तीन पुत्र विरक्त होकर जंगल में चले गये, चौथे पुत्र अलर्क को भी जब ऐसी शिक्षा दी जाने लगी तो महाराज ने उसे गृहस्थ जीवन के विनाश की बात बताकर इसे संसारी बनाने की शिक्षा देने का आग्रह किया।

माता के उपदेश से बालक अलर्क गृहस्थ धर्म में प्रवृत्त हुआ। विवाह आदि संस्कारों के बाद सांसारिक विषयों में आसक्ति रखते हुए राजा बना। ममता से अंधा रहने वाला गृहस्थ दुःखों का केन्द्र होता है यह मानकर गृह त्यागकर वनगमन से पूर्व मदालसा ने पुत्र से कहा—

'गृहस्थ धर्म का अवलम्बन करके राज्य करते समय यदि तुम्हारे ऊपर प्रियबन्धु के वियोग से, शत्रुओं की बाधा से, धन के नाश से कोई असह्य दुःख आ पड़े तो मेरी इस अंगूठी से पत्र निकालकर पढ़ लेना।'

कालांतर में अलर्क ने कष्ट की पीड़ा, वेदना की व्यथा, चित्त की व्याकुलता के कारण अंगूठी से पत्र निकालकर पढ़ा जिसमें लिखा था—

—संग (आसक्ति) का सब प्रकार से त्याग करना चाहिये, किन्तु यदि कभी उसका त्याग नहीं किया जा सके तो सत्पुरुषों का संग करना चाहिये।

—कामना को सर्वथा छोड़ना चाहिये परन्तु यदि वह न छोड़ी जा सके तो मुमुक्षा (मुक्ति की इच्छा) के लिए कामना करनी चाहिए।

बालक ध्रुव की माँ सुनीति ने भी विलाप करते हुए बालक को शिक्षा दी—'बेटा, तू दूसरों के लिए किसी अमंगल की कामना मत कर। जो दूसरों को दुःख देता है उसे स्वयं ही उसका फल भोगना पड़ता है।'

माताओं द्वारा बालिकाओं को विदाई के अवसर पर जो शिक्षा दी जाती रही है उसमें प्रमुख है—

'ऋण हो जाए इतना खर्च मत करना, पाप हो ऐसी कमाई मत करना, क्लेश हो ऐसी वाणी मत बोलना, चिन्ता हो वैसा काम मत करना, रोग हो वैसा खाना मत खाना, शरीर दीखे ऐसा वस्त्र मत पहनना। हाथ देखने वाले ज्योतिषी को कभी अपनी भाग्य रेखाओं के बारे में मत पूछना—तेरा कार्य ही तेरे भाग्य का निर्माण करेगा।'

शिक्षा के क्रम में माता के प्रमुख दायित्व के बाद दीक्षा और शिक्षा गुरु के बारे में संक्षिप्त जानकारी प्रस्तुत है। प्राचीन काल में गुरु शिष्य का विवाद न था। जिज्ञासु शिष्य अपनी इष्ट सिद्धि के लिए गुरु-चरणों की शरण में जाता था। गुरु उसके अज्ञान का निवारण करता था। शिक्षा का चरम उद्देश्य था—'आत्मज्ञान की उपलब्धि।' अज्ञानतिमिर से अंधशिष्य के प्रज्ञा-चक्षु को ज्ञान रूपी अंजनशलाका से उन्मीलित-प्रकाशित करने वाला गुरु होता था। शिष्यों के आचार-चरित्र के निर्माण, शास्त्रों के रहस्य की जानकारी एवं धर्म की शिक्षा देने वाला आचार्य माना गया है।

जीविका के लिये अध्यापन करने वाले उपाध्याय कहे गये हैं।

इसी तरह अपनी-अपनी विशेषताओं के अनुसार शिष्य, छात्र, विद्यार्थी तथा अन्तेवासी शब्द प्रयुक्त किये जाते रहे हैं। शासन करने योग्य को 'शिष्य' कहते थे। अनुशासनप्रियता इसका विशेष धर्म माना गया है। अध्ययनकाल में पूर्ण अनुशासित होकर वह सामाजिक जीवन में सफल होता था।

छात्र उन्हें कहते थे जो केवल स्वाध्यायरत होकर गुरुजनों के यत्किंचित् दोष पर आवरण देकर यश को फैलाते थे। अध्ययनकाल में अपनी शंका का तत्काल समाधान न होने पर समाधान के लिये धैर्यपूर्वक समय की प्रतीक्षा करते थे।

विद्यार्थी उसे कहते थे जो गुरु को विद्या का धनी समझ कर उनसे विनम्रतापूर्वक विद्या की याचना करता था। विद्या का लाभ ही उसका प्रमुख प्रयोजन होता था। विद्या के प्रति उत्कट अनुराग और गुरु के प्रति शुश्रुषा भाव विद्यार्थी शब्द के अर्थ में सूचित होता है।

अन्तेवासी उसे कहा जाता था जो गुरु के समीप रहकर विद्याध्ययन करता था। उसे सदैव शंका समाधान का सुयोग मिलता था और निरन्तर सेवा शुश्रुषा करने का सुअवसर भी प्राप्त होता था। इसलिये अन्तेवासी अधिक सौभाग्यशाली माना जाता था।

शिक्षा के क्षेत्र में नारी के महत्व व दायित्व दर्शन के बाद गुरु, आचार्य, शिष्य-छात्र की व्याख्या भी आपने जानी। नारी शिक्षा के प्राचीन आदर्श और वर्तमान स्वरूप के बीच समय के अन्तराल, शासन संस्कृति के प्रभाव एवं हमारे परतन्त्र सोच के कारण एक लम्बी खाई खिंच गई है। देश के वर्तमान सामाजिक

परिवर्तन के युग में हमारी छात्राओं के सामने एक ऐसा भीषण संघर्ष उपस्थित है जो छात्रों के सामने उतने विकट रूप में नहीं है। परिवार के वातावरण में सिद्धान्तों एवं आदर्शों की जो धारा प्राप्त होती है, उससे बिलकुल विरोधी धारा उन्हें शिक्षण-संस्थाओं में मिल रही है। हमारी शिक्षित बालिकाओं-महिलाओं के जीवन में जो असामंजस्य और विकृति आज दिखाई देती है उसका कारण यह शिक्षा पद्धति/यह संघर्ष ही है।

इस युग में महिलाओं के लिए घर में उपयोगी काम धन्धे का क्षेत्र संकीर्ण होता जा रहा है और उसके परिणाम स्वरूप उनमें इन दिनों आरामतलबी एवं निठल्लापन अधिक आ गया है। इस कारण समाज की दृष्टि में अधिक उपयोगी होने के बदले प्रत्यक्ष ही महिलायें अकर्मण्य, प्रमादी एवं विलासी बनती जा रही हैं। दूसरी ओर गृहस्योचित धार्मिक क्रियाकलाप तथा कथा वार्ता का अभाव, व्रतों-त्यौहारों की विच्छिन्न होती शृंखला, संस्कारित शिक्षा से दूरी ने अपने अन्दर की वह निःस्वार्थ भक्ति, वह आत्म संयम एवं उत्सर्ग की वे प्राचीन भावनायें नष्ट हो गई हैं, जो भारतीय नारीत्व का आधार मानी जाती रही है। बाजारू साहित्य, सस्ते व अनैतिक मनोरञ्जन के साधनों का बढ़ता प्रभाव भारत के उदात्त समर्पित प्रेम के स्वरूप को विकृत कर रहा है। यौन संबंधों की पवित्रता नष्ट हो रही है। दाम्पत्य के धार्मिक बंधन से जीवन में जो रसधारा प्रवाहित होती थी उसके स्थान पर कृत्रिम, अस्वाभाविक एवं स्वप्निल दुनियां की रचना की जा रही है। जिससे अति प्राचीन भारतीय परम्परा एवं अनुभूति संकटासन्न है।

सिर पर आये इस सामाजिक, सांस्कृतिक संकट से मुक्ति का एक मात्र उपाय सुशिक्षा-सांस्कृतिक सोच के प्रति जागरूकता है। हमारी शिक्षण संस्थाएं और शिक्षक ही ऐसा स्थान व कारक हैं जो उच्च आदर्शों को संचारित एवं पोषित कर सकते हैं। इन शिक्षण संस्थाओं में शिक्षा प्राप्त करने वाली कन्याओं-बालाओं पर ही गुरुतर दायित्व है कि वे सिद्धान्तगत इन संघर्षों को अपनी भारतीय शैली से हटाएँ, दूर करें, इनसे बचें। अर्वाचीन सामाजिक ढांचे में प्राचीन एवं अर्वाचीन आदर्शों के समन्वय से अपने लिये जीवन सरणियों का निर्माण करें। गृह, विवाह एवं परिवार के विभिन्न आदर्शों के सामञ्जस्य एवं समन्वय से ही ठोस व्यक्तित्व की सृष्टि हो सकती है और उसी से हमारे महिला समाज के भारतीय गार्हस्थ्य जीवन की सुख-शान्ति का पुनरागमन व सुरक्षा सम्भव है।

बालिका छात्रावासों की आवश्यकता

श्रीमती सुदर्शना शर्मा

'संगच्छध्वं संवदध्वं संवो मनांसि जानताम्'

इस वैदिक सूक्ति के भाव को आज चिन्तक सामान्य भाषा में अभिव्यक्त करना चाहे तो यही कहेगा कि

'साथ चलो तुम मिलकर बोलो, मिलकर पाओ ज्ञान।
मिलकर सीखो रहना जग में, तब कल पाओगे मान।।'

यह उपर्युक्त वैदिक सूक्ति—चाहे सामाजिक संदर्भ में और चाहे राजनैतिक संदर्भ में—एक शाश्वत सत्य है। समरसता एकाकीपन में नहीं, समूह में ही पनपती है। समूह में रहना व सबके संग आनन्द की अनूभूति करना केवल मानव का ही स्वभाव या प्रकृति नहीं है बल्कि सभी जीवों में भी आप यही प्रकृति देख सकते हैं, बल्कि उनका तो ये जन्मजात गुण है। 'मृगः मृगैः सह विचरन्ति नित्यम्।' इस तथ्य की स्वीकारोक्ति से कौन मुकर सकता है। दैनिक जीवन में मानव मानवों के साथ, पुरुष पुरुषों के साथ, वृद्ध वृद्धों के साथ, बच्चे बच्चों के साथ एवं स्त्रियां स्त्रियों के साथ रहकर उनके समक्ष अपने मन की बात कहकर अपना हृदय खोल देते हैं—अपनी खुशी के क्षण और पीड़ा दोनों एक दूसरों को कह-सुनकर साथ-साथ युगों से चले आ रहे हैं। ऐसी व्यवस्था अन्यत्र कहीं देखने को मिलती है? व्यक्ति के विकास का आकलन समूह में रहकर ही किया जा सकता है। शायद इसी व्यवस्था को समझकर हमारे पूर्वजों व मनीषियों ने साथ रहने की आवासीय व्यवस्था और आश्रम व्यवस्था विकसित की। जिसमें मनुष्य को अपनी उम्र, समय व सोच के अनुसार अलग-अलग परिस्थितियों में अलग-अलग समूह में रहना होता था अब वह चाहे आश्रम हो शिक्षा का, या फिर गृहस्थ आश्रम हो। इस व्यवस्था का अधिक प्रभाव पुरुष समाज पर रहा और पुरुषों ने इसे अपनाते हुए अपना कार्य क्षेत्र-दायरा समाज में मजबूती के साथ बांध लिया। सारे कार्यों की जिम्मेदारी हर तरह के वर्ग समूह में वही करने लगा। दूसरी ओर स्त्रियों को अबला ही माना गया और उनके प्रति यह सामाजिक सोच बैठा लिया गया कि वे भी पुरुषों के बिना अपनी सहचारियों के साथ रह सकती हैं या उनकी भांति ही हर तरह के कार्यों का कुशलतापूर्वक प्रबन्ध-संचालन कर

सकती हैं। (यह सोच विशेषतः हमारे भारतवर्ष में मुगलकाल के दौरान और ज्यादा प्रभाव में आ गया)। स्त्रियों की शिक्षा के बारे में समाज के कुलीन और संभ्रात ठेकेदार जिनके द्वारा एक दिशा निर्देश तैयार किया जाता था—उनके द्वारा इस ओर सोच नगण्य रहे। इसका कारण चाहे उनकी कैसी भी मनःस्थिति रही हो—किन्तु मुख्य यही थी कि स्त्रियां घर की चारदीवारी में कैद रहे। उनका कार्य क्षेत्र उसी चारदीवारी में कैद रहे, वे बच्चों का पालन-पोषण करें व पुरुष की सोच के अनुसार उसकी हर तरह सेवा करें। ऐसे में नारी का व्यक्तित्व पूर्णतः दब कर रह गया। उसका अपना भी कोई सोच या अस्तित्व है इस बारे में इन पर सोचने पर प्रतिबंध सा लग गया। इस मातृभूमि कहलाने वाले देश में नारी को, मातृशक्ति को जंजीरों में कैद कर लिया गया। सिर्फ उन चंद समाज में दिखावटी ठेकेदारों के कारण जिन्हें अपनी सत्ता व अपने स्वार्थ, अपने अहं तथा अपनी प्रतिष्ठा की ही पड़ी रहती थी। वे कब चाहते कि जिसे हम हमारे इशारों पर नचाते हैं वह हमारे ही समक्ष कभी शासक बन आये या शिक्षित होकर हमारे मनमौजी आचरण पर प्रतिबंध लगा दे। आश्रम व्यवस्था में भी स्त्रीशिक्षा के लिए विचार नहीं किया गया था।

'स्वतंत्रता' का अर्थ मनुष्य गुलामी भोगने के पश्चात् ही जान सकता है। 'स्वतंत्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है'—इस नारे को हर वर्ग नें आत्मसात करने की चेष्टा की और आज भी इसका नाद हमें हर क्षेत्र में सुनायी दे रहा है। जो शिक्षित है, जिसे अपने अधिकारों का आभास होता है—इस नारे की आवाज को अपने ही तरीके से बुलंद करता है। यदि विचारों और सोचों को सकारात्मक दृष्टि अपनाते हुए इसका उपयोग किया जाये तो सम्पूर्ण समाज का समग्र विकास हो सकता है। समाज के विकास के लिए शिक्षा निहायत जरूरी है। आज बीते कल की सोचों में परिवर्तन हुआ है—स्वतंत्रता के साथ-साथ नारी भी अपनी चारदीवारी से बाहर आई है—उसने अपनी महत्ता को समझा है। उसने भी अपना प्रबल पक्ष व अपनी महत्ता को पुरुषों को जतला दिया है कि उसके बिना राष्ट्र तो क्या एक छोटा-सा घर भी नहीं चल सकता। अतः उसे भी बराबरी का दर्जा, अधिकार, सम्मान व शिक्षा का समान अवसर दिया जाये। जब-जब जिन-जिन घरानों ने स्त्रियों की इस आवाज व मनःस्थिति को समझा वे महिलायें एक इतिहास बना गयीं चाहे कोई अहिल्या बनी, दुर्गा बनी, इन्दिरा बनी, रजिया बनी, सावित्री बनी, रानी झांसी बनी, मीरा बनी या फिर मदर टेरेसा, सुस्मिता, फूदौरजी, पी.टी. उषा, या माधुरी—नारी ने हर काल में चाहे बीता कल या आज वर्तमान हो—हर क्षेत्र—सामाजिक, राजनैतिक, साहसिक, धार्मिक, कला-संगीत और सेवा, सभी में अपनी अहम भूमिका का निर्वाह कर अपनी उपस्थिति की महत्ता को जतला दिया है—जतला रही है।

इन सबके बावजूद यह स्थिति अभी भी बहुत कम घरों तक पहुंची है। स्त्री शिक्षा को अभी बहुत प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है। हमारा देश जो छोटे-छोटे

गांवों व कस्बों या ढ़ाणियों में बिखरा हुआ है, वहां आज भी पुरुष प्रधान समाज की ही मान्यता है। दूसरी ओर जहाँ थोड़ी वहुत शिक्षा है, वहां शिक्षा के साधन नहीं हैं। लड़कों के रहने हेतु जगह-जगह छात्रावास हैं या फिर उन्हें तो कहीं भी किराये पर कमरा लेकर रहने की छूट है। वह तो जहाँ चाहे रह लेगा, कैसा भी वातावरण हो। मगर स्त्री जाति के लिए इसे सम्भव नहीं माना गया है। लोक लाज से पूर्व स्वयं नारी के सतीत्व की रक्षा का भी मुख्य प्रश्न है। जिस तरह एक पुरुष शक्तिशाली होता है—एक स्त्री के लिए यह सम्भव नहीं है—प्रकृति ने भी नारी को वेहद कोमल बनाया है—ऐसे में यह हमारा सामाजिक दायित्व है कि उनके लिए शिक्षा के साथ-साथ रहने की सुचारु व्यवस्था भी करें, जो अति आवश्यक है ताकि एक प्रारम्भिक सुरक्षा के घेरे में रहकर शिक्षा-दीक्षा लेकर अपने व्यक्तित्व का निर्माण कर सकें। शिक्षा पाने के उपरान्त स्त्रियां भी स्वयं को सक्षम पाने लगेंगी और उसके पश्चात् ही वे अन्तर निहित ओज से समाज की सेवा कर सकेंगी। स्त्री शिक्षा से केवल नारी-समाज का विकास नहीं होगा अपितु उसकी कोख से आने वाला कल भी पूर्णतः सुरक्षित हो जायेगा।

हमारे यहाँ अभी भी गांवों से सिर्फ लड़कों को ही संरक्षक बाहर शिक्षा हेतु भिजवा रहे हैं अतः ज्यादातर क्षेत्र में पुरुष ही आ जाते हैं। हमें कन्या छात्रावासों की व्यवस्था कर उनमें पूर्णतः रक्षार्थ प्रबन्ध कर ग्रामीणों को यह विश्वास दिलाना होगा कि उनकी बच्चियां वैसी ही सुरक्षित रहेंगी जैसी उनके अपने घरों में हैं। बल्कि छात्रावासों से शिक्षित होकर लौटने के बाद वे अपने-अपने घरों में जाकर उनका ही नाम रोशन करेंगी। आज विश्व भर में विकसित और विकासशील देशों की नारियां हर क्षेत्र में कला, विज्ञान, राजनीति, प्रौद्योगिकी, इलैक्ट्रानिक व सेना के भी महत्त्वपूर्ण विभागों में उच्चस्थ पदों पर कार्यरत हैं। यदि हम भी उन्हें उनकी प्रतिभा को मांजनें-परखने का मौका देंगे तो वे भी आगे आकर राष्ट्र निर्माणकारों की अगली पंक्ति में खड़ी दिखाई देंगी।

समाज में आज भी कुछ पोंगापंथी-स्वार्थी लोग जो अन्दर से पूर्णतया भ्रष्ट हैं वे इस दिशा में कार्य करने वाले व्यक्तियों की राह में रोड़े अटकाते हैं किन्तु हमें आवाज उठाकर समवेत स्वर में विरोध कर इन्हें चुप करना होगा। कन्या छात्रावासों के बारे में अनायास फैलाये जाने वाले कयासों से ऊपर उठकर और उन सबकी सुव्यवस्था की जिम्मेदारी कुशल हाथों में सौंपकर नारी शिक्षा पर जोर देना होगा। नारी को घर से निकाल, अबला से सबला—'दुर्गा' स्वरूप को पुनः जीवित करना होगा। इस कार्य में समाज में अनेक व्यक्ति जुटे हुए हैं जो जगह-जगह नारी शिक्षा केन्द्र व उनकी आवास-व्यवस्था का कार्य कर रहे हैं। श्रीमान् भैरारामजी जैसी विभूतियां इस कार्य में सबके लिए प्रेरणा बनी हुई हैं। श्री हीरालाल शास्त्री का इस क्षेत्र में किया गया कार्य कौन विस्मृत कर सकेगा। वे तो इस कार्य के लिए स्थापित हो चुके हैं। मेरा उन सभी महानुभावों को शत-शत नमन है जो इस पुनीत-पावन कार्य में लगकर मातृशक्ति को पुनः संचारित-जागृत कर रहे हैं।
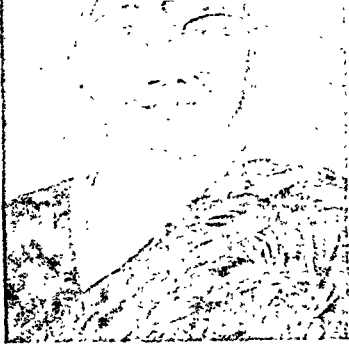
महर्षि दयानन्द और महिला शिक्षा

श्रीमती उर्मिला कुलश्रेष्ठ

साक्षी है अपौरुषेय ज्ञान के आगार वेदोपनिषदों एवं स्मृतिग्रन्थों का शाश्वत दर्शन, अमर चिन्तन कि प्रकृति नारी के रूप में मूर्त होकर पुरुष के जीवन को उदयाचल से अस्ताचल तक प्रभावित व संचालित करती है। यह वह शक्ति है जो कर्म और फल के अनुरूप जीव मात्र पर कभी सरस्वती, कभी लक्ष्मी तो कभी काली बन कृपा अथवा अकृपा करती रहती है। यह शक्ति ही आद्या शक्ति नारी है।

आध्यात्मिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक ऐश्वर्य के शिखर पर आसीन ऋग्वेदिककालीन भारत की ओर यदि हम पश्च दृष्टि-निक्षेप करें तो ज्ञात होगा कि नारी ही समाज की शिरोमणि थी।

पितृभिर्भ्रातृभिश्चैताः पतिभिर्देवरैस्तथा ।
पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभिः ।।
यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राफलाः क्रिया ।।

(मनु स्मृति अ. 3-55-58)

स्पष्ट है कि पिता, माता, भ्राता और देवर को योग्य है कि अपनी कन्या, बहिन, स्त्री और भौजाई आदि स्त्रियों की सदा पूजा करें। अर्थात् यथायोग्य मधुर भाषण, भोजन, वस्त्र व आभूषण आदि से प्रसन्न रखें। जिनको कल्याण की इच्छा हो वे स्त्रियों को कभी क्लेश न दें।

हम जान गये कि वैदिक काल में स्त्रियों के व्यक्तित्व के दो स्वरूप परिलक्षित थे—

'द्विविधा स्त्रियः। ब्रह्मवादिनः सद्योवध्वश्च'।

एक ब्रह्मवादिनी और दूसरी सद्य वधू।

इनमें ब्रह्मवादिनी स्त्रियों का उपनयन, यज्ञोपवीत, अग्निहोत्र एवं वेदाध्ययन का विधान है। तथा सद्य वधुओं का उपनयन मात्र कराकर यथा आयु विवाह करा दिया जाता था। वे ब्रह्मचर्य से सेवित युवावस्था सम्पन्न पति वरण करती थी।

विवाह के पवित्र संस्कार के समय पति की पत्नी के प्रति भावाभिव्यक्ति भी अति उत्कृष्ट होती थी।

मूर्द्धासि राट् ध्रुवासि धरूण धर्त्र्यासि धरणी।
आयुवेला वर्चसे त्वा कृषयै क्षेमाय त्वा।।
[यजु. 14-21]

हे स्त्री। तू (मूर्द्धासि) द्यौ वा सूर्य के समान सबसे उच्च शिरोभाग पर स्थित है। (राट्) तू सूर्य के समान ही तेजस्विनी है। (ध्रुवा) ध्रुव के समान निश्चल है (धरूणा) पुष्टि करने वाली (धर्त्री) धारण करने वाली (असि) है। (धरणी) भूमि के समान गृहस्थ को धारण करने वाली है। उस (त्वा) तुझको (वर्चसे) तेज की वृद्धि के लिए (कृष्यै) उत्तम सन्तान की उत्पत्ति के लिए (क्षेमाय) कल्याण के लिए स्वीकार करता हूँ। इतना ही नहीं वह पत्नी की शत वर्ष पर्यन्त दीर्घकाल तक जीने की कामना करता है।

द्वितीय प्रकार का नारी वर्ग का यज्ञोपवीत से संस्कारित होना व्रह्म अर्थात् वेद में जन्म होना है। ये ऋषिकाओं के नाम से जानी जाती थीं। इनमें कुछेक के नाम चिरस्मरणीय हैं—रोमशा, लोपामुद्रा, विश्ववार, अपाला, यमी, घोषा, सूर्या, उर्वसी, दक्षिणा, सरमा, वाक्, गोधा, श्रद्धा आदि।

वेदों के विधानानुसार धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष प्राप्ति में नारी सदा पुरुष की सहगामिनी है। यज्ञादि पवित्र कार्य पत्नी के बिना अपूर्ण हैं। तभी तो श्री रामचन्द्रजी को सीताजी के अभाव में उनकी स्वर्ण प्रतिमा बनानी पड़ी थी। विवाह मण्डप में स्पष्ट आदेश है—इमं मंत्रं पत्नी पठेत्' स्त्री यज्ञ में यह मंत्र पढ़े। हमें विदित है कि उमा भारती नामक अनुपमा विदुषी न्याय वैशैषिक, योग, सांख्य, पूर्व मीमांसा, वेदांत, शिक्षा, ज्योतिष, कला, छन्द, व्याकरण एवं काव्यादि ग्रन्थों में पारङ्गत थी। सुलभा नाम से भी जग परिचित है। जिन्होंने राजा जनक के प्रश्न का उत्तर देते हुए स्वाभिमान पूर्वक कहा था—'गुरु से मैंने शिक्षा पाई है, ब्रह्मचर्य की समाप्ति पर योग्य पति न मिलने पर मैंने नैष्टिक ब्रह्मचर्य व्रत स्वीकार किया है।' यही नहीं विदेशी विद्वान् कर्नल टाड ने महिलाओं की वैदिककालीन गरिमामय स्थिति से अभिभूत हो लिखा है It is Universaly admitted that there is no better criterion of refinement of a nation than the condition of the fair sex theire in'

तो यह नारी शक्ति सांसारिक रूप में पति के लिए चरित्र, सन्तान के लिए ममता, जीव मात्र के लिए करुणा तथा विश्व के लिए शांति संजोने वाली महाप्रकृति है। काल चक्र से कवलित उत्तर वैदिक काल में अधोगति की ओर यह धकेली जाने लगी। वह एक ओर तप के मार्ग में साधक की बाधा, माया, सर्पिणी, मोहिनी, नागपाश आदि कुसम्वोधनों से सम्बोधित कर तिरस्कृत की जाने लगी तो दूसरी ओर

गृह सीमाओं में आबद्ध कामचलाऊ ललित कलाओं की उपासिका बनाकर कूप-मण्डूक जीवन जीने हेतु असूर्य पश्या बना दी गई। बौद्ध एवं जैन धर्मावलम्बियों ने नारी की विडम्बनापूर्ण स्थिति पर कुछ अधिक ध्यान नहीं दिया। शिक्षा के क्षेत्र कुछ व्यापक तो हुए उस काल में, पर पूर्ववत नहीं।

पौराणिक काल में तो नारी की दुर्दशा चरम पर पहुंच गई। शिक्षा का प्रकाश दीपक उससे छीन लिया गया। अज्ञान का अन्धकार, अन्ध विश्वास, वर्ण व्यवस्था, नियोग पद्धति, सती प्रथा, बाधित वैधव्य, पर्दाप्रथा, बाल विवाह, अनमेल विवाह आदि सामाजिक कुरीतियों की बेड़ियों ने उसे चारों ओर से जकड़कर जड़ कर दिया। धर्म के पाखण्डी ठेकेदारों ने उसके बौद्धिक विकास के द्वार पर कठोर नियमों की अर्गला लगा दी।

नारी को पतन के गर्त में ढकेलने की उत्तरदायी तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ ही रही हैं। वह पुरुष की भोग्या बनी, योग्या नहीं। सन्तानोत्पति की मशीन बनी, विदुषी नहीं। पतिता बनी, पवित्र नहीं। घर की जूती बनी, ज्योति नहीं। जितनी यन्त्रणा नारी ने भोगी है कदाचित किसी प्राणी ने नहीं। घर बाहर के समस्त अधिकारों, सम्मानों से वंचित वह एक निरीह प्राणी की भांति अपना तिरस्कृत जीवन बिताने को बाध्य थी। पुरुष समाज अपने इंगित पर उसका उपयोग करने लगा। मुगल काल तक आते-आते वह विलास की सामग्री सुरा-सुन्दरी और सत्ता के रूप में तृप्ति का साधन बन गई। वे तो नारी में रूह मानते ही नहीं हैं।

परन्तु समय ने करवट ली, युगद्रष्टा, समाज सुधारकों का ध्यान नारी की मर्मान्तिक दशा की ओर जाने लगा। और सामाजिक पुनरुत्थान के युग ने श्वास लेना आरम्भ किया।

महर्षि दयानन्द सरस्वती 19वीं शताब्दी के भारतीय पुनरुत्थान के विकास पथ के अक्षय आलोक के प्रथम स्तंभों में थे। आप प्रथम चिन्तक एवं सुधारक थे जिन्होंने भौतिकवादी पाश्चात्य संस्कृति के दुष्प्रभावों से व्यथित हो सामाजिक पुनरुत्थान का शंखनाद किया। वे भारत में वैदिककालीन संस्कृति एवं समृद्धि को उभरते हुए देखने के पक्षधर थे। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि स्वराज्य प्रगति की प्रत्येक योजना हमें वेदों में खोजनी चाहिए—वहाँ से सूत्रपात हो। वह प्रगति का पारावर है, हमारा ही भण्डार है।

ऋषि दयानन्दजी की अकाट्य मान्यता थी कि हिन्दू समाज और हिन्दुत्व का विघटन मनुष्य के नैतिक एवं चारित्रिक अवमूल्यन के कारण हुआ है। उन्होंने सत्य के अर्थ को प्रकाशित करते हुए अपने ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' में कहा है कि समाज का उत्थान और स्वराज्य की प्राप्ति तब ही संभव है जब उसकी आधारशिला मातृशक्ति की दशा ऋग्वैदिककालीन स्थिति तक पुनः विकसित हो। 'सत्यार्थ प्रकाश' के द्वितीय

एवं तृतीय समुल्लास एवं अनेक व्याख्यानमालाओं में उद्‌बोधन दिया कि—

'कन्यानां सम्प्रदानं च कुमाराणां च रक्षणम्।'

महिला पुरुष के समान स्तर पर शिक्षा प्राप्त करने की अधिकारिणी है। कुछ विरोधियों को प्रताड़ित करते हुए उन्होंने कहा कि—

'जो स्त्रियों के पढ़ने का निषेध करते हैं, वह उनकी मूर्खता, स्वार्थता और निर्बुद्धिता का ही प्रभाव है। देखो वेदों में कन्याओं को पढ़ाने के प्रमाण हैं—

'ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्' (अर्थ अनु. 3 पृ. 28।। मं. 18)

वेदों के अनुसार स्त्री और शूद्र दोनों को ही वेदाध्ययन का अधिकार है :

'ब्रह्म राजन्याभ्या (ग्वं) शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय।।

महर्षि महिला शक्ति के सूक्ष्म पारखी थे। उनकी मान्यता थी कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्री वर्ग अधिक परिश्रमी है। पुनः शतपथ ब्राह्मण में गार्गी, सुलभा आदि विदुषियों के सम्वाद की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए कहते हैं कि पुरुष विद्वान् और स्त्री अविदुषी अथवा इसके विपरीत हो तो नित्य कलह हो। अतः दोनों ही विद्वान होने चाहिए। कुशल गृहकर्म बिना विद्या के सम्भव नहीं, तथा स्त्री जाति की अशिक्षा की स्थिति में कुशल अध्यापिकाओं की उपलब्धि भी संभव नहीं।

दयानन्दजी की महिला शिक्षा योजना अन्य सुधारकों की अपेक्षा अधिक विस्तृत थी। आपके अनुसार महिलाओं को सामान्य शिक्षाओं के साथ शारीरिक शिक्षा भी सुलभ होनी चाहिए। उनके मतानुसार बालिकाओं को 16 वर्ष तक तो विद्याध्ययन करना आवश्यक है। वे नैतिक, चारित्रिक शिक्षा को सर्वोत्तम मानते थे। साथ ही वे सह शिक्षा के कट्टर विरोधी थे। कन्या 'कन्या पाठशाळा' में ही अध्ययन करे। अन्यत्र नहीं। यहाँ तक कि बालक-बालिकाओं की पाठशाला में 5 किलोमीटर की दूरी भी आवश्यक है। आठ वर्ष की कन्या को पाठशाला में प्रविष्ट करा देना माता-पिता का कर्त्तव्य है। ऋषि वीराङ्गना दल को कन्या शिक्षा में सहायक होने की प्रेरणा देते थे। उनकी घोषणा थी कि जिस क्षेत्र में आर्य समाज है उस क्षेत्र में कोई भी अशिक्षित और कुशिक्षित न हो। आर्य समाज जितने बालकों के लिए विद्यालय स्थापित करें उतने कन्याओं के लिए भी। महिला अध्यापिकाओं का गुणवान होने का उपक्रम चलता रहे। उन्हीं की प्रेरणा का प्रसाद है कि सन् 1890 ई. में सर्वप्रथम महिला कन्या महाविद्यालय जालन्धर में स्वामी श्रद्धानन्दजी द्वारा स्थापित हुआ और आज देश भर में अनेक आर्य कन्या संस्थाएं हम महिलाओं को ऋषि के वरदान स्वरूप प्राप्त हैं।

महिलाओं के पाठ्यक्रम की रूपरेखा में वे भाषा, धर्मशास्त्र, शिल्प, संगीत, गणित तथा वैद्यक शास्त्र को आवश्यक मानते थे जो गृह कार्यों के साथ सामाजिक कार्यों में भी लाभप्रद हो।

महान् समाज चिन्तक श्री रंग अय्यर ने अपनी पुस्तक 'Father India' में लिखा है—

'In the 19th Century RISHI DAYANAND came as a Massiha preach the restoration of women in their ancient glory.'

आज ऋषि के उद्घोष से ही हम महिलाएं अनेक क्षेत्रों में पदार्पण कर अपनी प्रतिभा, अपनी क्षमता, अपना आत्मविश्वास और अपना खोया हुआ आत्मसम्मान पुनः प्राप्त करने की दिशा में अग्रसर हैं। ऋषि-ऋण से उऋण होने के लिए सम्पूर्ण महिला जगत् को शिक्षा के आलोक से आलोकित होना होगा।

राजा महेन्द्रप्रताप का श्रेष्ठ बेटा

बेटी होकर बेटा न होना व उस कारण वंश न चलना भी एक ऐसी मान्यता है जो जन-मानस में बुरी तरह से छायी है। राजा महेन्द्रप्रताप के पास ज्योतिषि पहुँचे। कहा—'आपके भाग्य में पुत्र नहीं है। पर आप अमुक अनुष्ठान करेंगे तो अवश्य पुत्र होगा।' राजा साहब ने उन्हें तुरन्त विदा करते हुए कहा—'आपको व्यर्थ मेरे जैसे व्यक्ति के पास आकर समय भी नष्ट करना पड़ा व तुरन्त जाना भी पड़ रहा है। आप अपनी सलाह अपने पास रखें। मुझे अपना वंश चलाने के लिये जीवधारी रूपी बेटा नहीं चाहिए। जो राशि बेटे पर खर्च होती, उसे मैं सत्प्रयोजनों में नियोजित करूंगा।'

राजा साहब ने वृन्दावन में प्रेम महाविद्यालय की स्थापना की। उसे ही अपना बेटा माना व लाखों की सम्पत्ति उसे दे दी। विरासत में उन्होंने लिखा कि 'मेरा वंश यह प्रेम महाविद्यालय ही आगे चलाएगा। समाज में ऐसी सत्प्रवृत्तियाँ चल पड़ें तो मैं समझूंगा कि मेरा पुत्र सपूत निकला।' वस्तुतः हुआ भी ऐसा ही।

बालिका शिक्षा : दशा और दिशा

श्रीमती रूपा पारीक

एक स्वस्थ और विकसित समाज समृद्ध सामाजिक व्यवस्था की प्रथम इकाई है। और शिक्षित परिवार इस प्रगतिशील और खुशहाल राष्ट्र की आधारशिला है। परिवार की धुरी है एक महिला अतः महिला उत्थान एक व्यापक विचार है कि सदियों से महिलाओं में उत्थान और पतन का लेखा-जोखा साम्राज्यों के उत्थान और पतन में प्रतिविम्बित होता है। सहस और शुद्ध जीवन परिस्थितियों की चाह ने मनुष्य को पारिवारिक और सामाजिक व्यवस्था के निर्माण के लिए प्रेरित किया। मनुष्य की आवश्यकताओं, परिस्थितियों और लालसाओं के अनुरूप सामाजिक परम्पराएं, मान्यताएँ और समाज व परिवार में पुरुष व महिला की भूमिकाएँ परिवर्धित और संशोधित होती रही हैं किन्तु यह सत्य है कि सहज विकास का मूल आधार शिक्षा है। जब महिला उत्थान की बातें करते हैं तो शिक्षा का अभिप्राय सर्वांगीण विकास से है और इस सर्वांगीण विकास का प्रारम्भ साक्षरता से ही संभव है। भारतीय संस्कृति में प्रारम्भ से ही शक्ति के रूप में देवी स्वरूप की उपासना की गई है। राम से पहले सीता और श्रीकृष्ण से पहले राधा का नाम लेने की परम्परा रही है। किन्तु विदेशी आक्रमणकारियों के आने के बाद परिस्थितिवश महिलाओं को पर्दे में रहना पड़ा। महिलाओं को चारदिवारी के भीतर रहने वाला निरीह जीव बना दिया गया। कालान्तर में परिस्थिति की विवशता ने एक कुरीति का स्थान ले लिया।

महिला के सम्पर्क अनुभवों और क्रिया प्रतिक्रियाओं का दायरा सीमित होता चला गया। आखिर स्त्री के शिक्षा के मार्ग स्वतः ही बन्द होते चले गये। सतही तौर पर स्त्री शिक्षा और महिला उत्थान की बात महिला पुरुष समानता की वकालत के रूप में दिखाई देती है। किन्तु वास्तव में महिलाओं की अशिक्षा और पिछड़ापन अन्ततः किसी समाज और राष्ट्र के 50% पिछड़ेपन का प्रतीक बन गया है और यह राष्ट्र के विकास में प्रमुख घटक के रूप में दिखाई देता है। महिला का उत्थान किसी राष्ट्र के उत्थान को प्रभावित करता है। माँ के रूप में महिला की शिक्षा और अशिक्षा का प्रतिबिम्ब् उसके बालकों में भी आ जाता है अतः महिला उत्थान अत्यन्त आवश्यक है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् महिला शिक्षा एवं समानता के लिये अनेक संवैधानिक प्रयास किये गये। किन्तु उसका अच्छा प्रभाव दिखाई नहीं दिया इसलिए सरकार का ध्यान वालिका शिक्षा की ओर गया। महिलाओं की स्थिति में जो ठहराव सा आ गया है वह एक झील के पानी की तरह या जिसमें संवैधानिक प्रयासों से कुछ हलचल या प्रगति की उम्मीद की जाती रही किन्तु हमें तो चाहिए एक स्वतः स्फूर्त लहराती बढ़ती नदी। दरअसल जिन कुरीतियों एवं परिस्थितियों के कारण महिलाओं की प्रगति और दूसरे रूप में समाज की आधी से अधिक प्रगति रुकी हुई है उसे तो वालिका शिक्षा द्वारा दूर किया जा सकता है। शिक्षित बालिका एक शिक्षित मां का स्थान प्राप्त करेगी तब कुरीतियों को रोकने के लिये कानून नहीं बनाना पड़ेगा, स्वयं कुरीति ही समाप्त हो जायेगी। बालक और बालिका दोनों के लिये उनकी प्रथम गुरु माँ ही है। शिक्षित माताएँ सम्पूर्ण संततियों को शिक्षा और संस्कार दे सकती हैं। एक तरह से वालिका शिक्षा महिला उत्थान की ही नहीं समाज के नवनिर्माण की भी प्रमुख आवश्यकता है। यदि महिलाओं के उत्थान की ओर ध्यान नहीं दिया जायेगा तो असन्तुलन हो जायेगा क्योंकि महिला पुरुष दो आधार स्तम्भ हैं और इनमें भेदभाव रखने वाला समाज विसंगतियों में फंसा रहता है।

राजस्थान में सन् 1951 मे महिला साक्षरता मात्र 3% थी जो 1991 में बढ़कर 20% हुई। यह वृद्धि लगभग साथ होनी है और इसमें 40 वर्ष का समय लगा। यदि यही गति रही तो शत प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति हेतु हमें लगभग 25 वर्ष और प्रतीक्षा करनी होगी। इस बात को ध्यान में रखकर राजस्थान में बालिका शिक्षा के अन्य प्रयास किये गये और प्रभावी योजनाएँ चलाई गई। सन् 1958 में महिला शिक्षा की राष्ट्रीय परिषद् की स्थापना की गई थी, किन्तु 28 वर्ष बाद भी प्रगति न होने के कारण राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के मसोदे में यह कहा गया कि शिक्षा का महिलाओं की स्थिति में आधारभूत परिवर्तन लाने का अभिकरण बनाया जायेगा। वास्तव में अब वालिका शिक्षा को मात्र महिला उत्थान का आधार ही नहीं, सामाजिक पुनर्रचना का अभिन्न अंग मान लिया गया है। लड़के और लड़कियों में किसी प्रकार का भेदभाव न वरतने की नीति पर पूरा अमल किया जायेगा ताकि तकनीकी तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में पारम्परिक रवैयों के कारण चले आ रहे लिंग मूलक विभाजन को समाप्त किया जा सके। नई प्रौद्योगिकी में भी महिलाओं की भागीदारी बढ़ाई जायेगी।

राज्य में वालिका शिक्षा हेतु वालिकाओं की प्रत्येक विषय की पढ़ाई को शिक्षण शुल्क से मुक्त कर दिया है। सभी वालिका विद्यालयों को 90% अनुदान स्वीकृत कर दिया गया है। चाहे वह अब से पहले 60% या 80% का अनुदान प्राप्त करता रहा हो। इस बार सन् 94-95 में निःशुल्क पाठ्यपुस्तकों का वितरण किया गया जिससे 15 लाख वालिकाएं लाभान्वित हुई। राजस्थान में वर्तमान 6-11 वर्ष की आयुवर्ग की अठारह लाख चौंतीस हजार तथा ग्यारह से 14 आयु वर्ग की चार

बालिका शिक्षा : दशा और दिशा

श्रीमती रूपा पारीक

एक स्वस्थ और विकसित समाज समृद्ध सामाजिक व्यवस्था की प्रथम इकाई है। और शिक्षित परिवार इस प्रगतिशील और खुशहाल राष्ट्र की आधारशिला है। परिवार की धुरी है एक महिला अतः महिला उत्थान एक व्यापक विचार है कि सदियों से महिलाओं में उत्थान और पतन का लेखा-जोखा साम्राज्यों के उत्थान और पतन में प्रतिबिम्बित होता है। सहस और शुद्ध जीवन परिस्थितियों की चाह ने मनुष्य को पारिवारिक और सामाजिक व्यवस्था के निर्माण के लिए प्रेरित किया। मनुष्य की आवश्यकताओं, परिस्थितियों और लालसाओं के अनुरूप सामाजिक परम्पराएं, मान्यताएँ और समाज व परिवार में पुरुष व महिला की भूमिकाएँ परिवर्धित और संशोधित होती रही हैं किन्तु यह सत्य है कि सहज विकास का मूल आधार शिक्षा है। जब महिला उत्थान की बातें करते हैं तो शिक्षा का अभिप्राय सर्वांगीण विकास से है और इस सर्वांगीण विकास का प्रारम्भ साक्षरता से ही संभव है। भारतीय संस्कृति में प्रारम्भ से ही शक्ति के रूप में देवी स्वरूप की उपासना की गई है। राम से पहले सीता और श्रीकृष्ण से पहले राधा का नाम लेने की परम्परा रही है। किन्तु विदेशी आक्रमणकारियों के आने के बाद परिस्थितिवश महिलाओं को पर्दे में रहना पड़ा। महिलाओं को चारदिवारी के भीतर रहने वाला निरीह जीव बना दिया गया। कालान्तर में परिस्थिति की विवशता ने एक कुरीति का स्थान ले लिया।

महिला के सम्पर्क अनुभवों और क्रिया प्रतिक्रियाओं का दायरा सीमित होता चला गया। आखिर स्त्री के शिक्षा के मार्ग स्वतः ही बन्द होते चले गये। सतही तौर पर स्त्री शिक्षा और महिला उत्थान की बात महिला पुरुष समानता की वकालत के रूप में दिखाई देती है। किन्तु वास्तव में महिलाओं की अशिक्षा और पिछड़ापन अन्ततः किसी समाज और राष्ट्र के 50% पिछड़ेपन का प्रतीक बन गया है और यह राष्ट्र के विकास में प्रमुख घटक के रूप में दिखाई देता है। महिला का उत्थान किसी राष्ट्र के उत्थान को प्रभावित करता है। माँ के रूप में महिला की शिक्षा और अशिक्षा का प्रतिविम्ब् उसके बालकों में भी आ जाता है अतः महिला उत्थान अत्यन्त आवश्यक है।

स्वतन्त्रता के पश्चात् महिला शिक्षा एवं समानता के लिये अनेक संवैधानिक प्रयास किये गये। किन्तु उसका अच्छा प्रभाव दिखाई नहीं दिया इसलिए सरकार का ध्यान बालिका शिक्षा की ओर गया। महिलाओं की स्थिति में जो ठहराव सा आ गया है वह एक झील के पानी की तरह या जिसमें संवैधानिक प्रयासों से कुछ हलचल या प्रगति की उम्मीद की जाती रही किन्तु हमें तो चाहिए एक स्वतः स्फूर्त लहराती बढ़ती नदी। दरअसल जिन कुरीतियों एवं परिस्थितियों के कारण महिलाओं की प्रगति और दूसरे रूप में समाज की आधी से अधिक प्रगति रुकी हुई है उसे तो बालिका शिक्षा द्वारा दूर किया जा सकता है। शिक्षित बालिका एक शिक्षित मां का स्थान प्राप्त करेगी तब कुरीतियों को रोकने के लिये कानून नहीं बनाना पड़ेगा, स्वयं कुरीति ही समाप्त हो जायेगी। बालक और बालिका दोनों के लिये उनकी प्रथम गुरु माँ ही है। शिक्षित माताएँ सम्पूर्ण संततियों को शिक्षा और संस्कार दे सकती हैं। एक तरह से बालिका शिक्षा महिला उत्थान की ही नहीं समाज के नवनिर्माण की भी प्रमुख आवश्यकता है। यदि महिलाओं के उत्थान की ओर ध्यान नहीं दिया जायेगा तो असन्तुलन हो जायेगा क्योंकि महिला पुरुष दो आधार स्तम्भ हैं और इनमें भेदभाव रखने वाला समाज विसंगतियों में फंसा रहता है।

राजस्थान में सन् 1951 मे महिला साक्षरता मात्र 3% थी जो 1991 में बढ़कर 20% हुई। यह वृद्धि लगभग साथ होनी है और इसमें 40 वर्ष का समय लगा। यदि यही गति रही तो शत प्रतिशत लक्ष्य की प्राप्ति हेतु हमें लगभग 25 वर्ष और प्रतीक्षा करनी होगी। इस बात को ध्यान में रखकर राजस्थान में बालिका शिक्षा के अन्य प्रयास किये गये और प्रभावी योजनाएँ चलाई गई। सन् 1958 में महिला शिक्षा की राष्ट्रीय परिषद् की स्थापना की गई थी, किन्तु 28 वर्ष बाद भी प्रगति न होने के कारण राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के मसोदे में यह कहा गया कि शिक्षा का महिलाओं की स्थिति में आधारभूत परिवर्तन लाने का अभिकरण बनाया जायेगा। वास्तव में अव बालिका शिक्षा को मात्र महिला उत्थान का आधार ही नहीं, सामाजिक पुनर्रचना का अभिन्न अंग मान लिया गया है। लड़के और लड़कियों में किसी प्रकार का भेदभाव न बरतने की नीति पर पूरा अमल किया जायेगा ताकि तकनीकी तथा व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में पारम्परिक रवैयों के कारण चले आ रहे लिंग मूलक विभाजन को समाप्त किया जा सके। नई प्रौद्योगिकी में भी महिलाओं की भागीदारी बढ़ाई जायेगी।

राज्य में बालिका शिक्षा हेतु बालिकाओं की प्रत्येक विषय की पढ़ाई को शिक्षण शुल्क से मुक्त कर दिया है। सभी बालिका विद्यालयों को 90% अनुदान स्वीकृत कर दिया गया है। चाहे वह अब से पहले 60% या 80% का अनुदान प्राप्त करता रहा हो। इस बार सन् 94-95 में निःशुल्क पाठ्यपुस्तकों का वितरण किया गया जिससे 15 लाख बालिकाएं लाभान्वित हुई। राजस्थान में वर्तमान 6-11 वर्ष की आयुवर्ग की अठारह लाख चौंतीस हजार तथा ग्यारह से 14 आयु वर्ग की चार

लाख चौसठ हजार बालिकाएं पढ़ रही हैं। राज्य में दो हजार प्राथमिक, 1246 उच्च प्राथमिक, 499 माध्यमिक, 226 सी.मा. शालाएँ बालिकाओं के लिए हैं। अनौपचारिक शिक्षा के तेरह हजार छः सौ केन्द्र कार्य कर रहे हैं जिनमें 60% नामांकन बालिकाओं का है। राज्य सरकार ने बालिका शिक्षा के लिये एक करोड़ की राशि से एक फाउण्डेशन स्थापित किया है। जिसमें अन्य संस्थाएँ, ट्रस्ट व दानदाता भी राशि प्रदान करेंगे। इसके द्वारा जरूरतमंद बालिकाओं की मदद की जायेगी। बालिका विद्यालयों में भवन निर्माण सम्बन्धी मदद की जायेगी तथा प्रतिभावान छात्राओं को तकनीकी शिक्षा हेतु सहयोग दिया जायेगा। शिक्षा विभाग के संभागीय एवं मण्डल मुख्यालयों पर बालिकाओं के लिये छात्रावास खोले जायेंगे। जनजाति उपयोजन क्षेत्र के जिलों—बाड़मेर, जैसलमेर, नागौर और जालौर में अनुसूचित जाति व जनजाति की कक्षा 1 से 5 तक की छात्राओं को पोषाक के लिये साठ रुपये दिये जाते थे। वह राशि बढ़ाकर अब 90 रुपये कर दी गई है। विभिन्न योजनाओं—लोक जुम्बिश, शिक्षाकर्मी योजना और सरस्वती योजना द्वारा प्रभावी कार्य किया जा रहा है। शिक्षाकर्मी योजना के अन्तर्गत दूरांचल में उत्साही युवकों को शिक्षा सेवा से जोड़ा जा रहा है। सरस्वती योजना के तहत गांव में एक शिक्षक महिला को लगभग 90 तक नामांकन करने का कार्य करना है तथा उस कार्य के लिये लगभग चार हजार रुपये तीन किश्तों में साल भर में दिये जायेंगे। महिला शिक्षा में हुई प्रगति और कार्यों की समीक्षा के रूप में आचार्य राममूर्ति समिति ने अपनी रिपोर्ट में कहा कि शैशव की सार सम्हाल एवं शिक्षा योजनाओं को कन्याओं की प्रारम्भिक शिक्षा से जोड़ा जाना जरूरी है। जी हाँ एक बात अवश्य ध्यान रखने की है और वह शिक्षा के सोने में संस्कार का सुहागा अवश्य हो तभी तो नई पीढ़ी की गढ़त सुदृढ़ और चमक लिए हुए होगी। बालिका शिक्षा में एक अन्य महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षित महिला को हर कार्य में अपनी क्षमता दिखाने का अवसर मिले और प्रत्युत्तर में वह सम्मान की आशा करती है।

महिला यदि हवाई जहाज चलाए और पुरुषों के कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करे तभी सम्मानीय नहीं होती। जब वह स्वास्थ्य के अनुरूप भोजन तैयार करती है, बच्चे को लोरी गाकर सुनाती है या घर में किसी मंगल अवसर पर रंगोली और मांडने से घर आंगन सजाती है तो भी वह समाज के लिये एक विशिष्ट कार्य कर रही होती है जिससे प्रत्येक भावी माँ शिक्षित हो सके, समाज शिक्षित हो सके। महिला को हर रूप में सम्मान मिले बल्कि यह कहना चाहिये कि महिला को हर रूप में सम्मान मिलना ही चाहिये।

नारी जाति को सम्मान देकर ही उन्नति संभव

विवेक सारस्वत

स्वामी दयानन्द जीवन भर स्त्रियों, शूद्रों तथा मानव मात्र को शिक्षा के लिए प्रेरित करते रहे। विशेषकर आपने नारी शिक्षा तथा उसको वेदाध्ययन के लिए प्रेरित किया। वैदिक साहित्य में अनेक ऋषिकाओं का उल्लेख मिलता है। हजारों वर्ष पूर्व गार्गी, सुलभा, मैत्रेयी, उर्वशी, यमी, शची, सुभद्रा, देवकी और सीतामाता को वेद-वेदांग में पारंगता कहा गया है। नारी शिक्षा का सामवेद में भी उल्लेख मिलता है जब भगवान शंकर ने स्वयं कुमारी मनसा देवी को ब्रह्म विषयक गूढ़ ज्ञान प्रदान किया। जब भगवान शंकर ने ही स्त्री शिक्षा को इतना महत्व दिया उसके पश्चात् आज भी इस मनु के देश में कितने ही युग बीतने के पश्चात् भी पुरुष समाज नारी को शिक्षा से वंचित रखता है? आखिर क्यों? नारी सिर्फ दैनिक नित्यकर्म कर परिवार का संचालन करती रहे, सुबह से रात्रि में सोने तक गृह कार्य, साफ-सफाई, भोजन व्यवस्था, लालन-पालन, पति सेवा कर अपने शरीर का और मन का शारीरिक व मानसिक शोषण करवाती रहे—क्या यही इस देव भूमि वाले देश की शोभा है?

जब-जब नारी की अवमानना हुई है या नारी को पीछे छोड़ पुरुष ने आगे बढ़ने का साहस किया है उसे अंततोगत्वा पुनः उसी की शरण में आकर झुकना पड़ा है। नारी एक शक्ति है, नारी अन्तःचेतना को जागृत करने वाली ज्योति है जिसके प्रकाश के बिना प्रगति की राह अंधकार में डूबी रहेगी, सामने राह होकर भी चलना दुष्कर होगा। अतः नारी को साथ लेकर, उसकी शिक्षा व उन्नति के लिए भी एक गहन चिन्तन की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय स्तर पर नारी शिक्षा के सोच में परिवर्तन लाना भी अति आवश्यक है। स्त्री-पुरुष समानता को राष्ट्रीय लक्ष्य मानने के बावजूद पोथियों और चित्रों में जो लिखित अंश देखने, सुनने व जानने को मिलते हैं वह नारी के गृहिणी रूप को ही ज्यादा प्रदर्शित करते हैं। नारी की उर्वरकता एवं उत्पादकता को प्रदर्शित करने वाले लेखों व कार्यक्रमों का नितान्त अभाव है। हमारा देश छोटे-छोटे गांवों में बिखरा विशाल जनसंख्या वाला, विश्व के अग्रणी विकासशील देशों की गिनती में आ रहा है। महानगरों व जिला स्तर तक के नगरों के मध्यमवर्गीय परिवारों तक शिक्षा का

असर व नर-नारी को समान दृष्टि से देखने का दौर निश्चित रूप से शुरू हो चुका है और इसी कारण भारतीय नारी ने निकट वर्षों में हर क्षेत्र में राजनीति, धार्मिक, सामाजिक या कला आदि क्षेत्रों में अपनी उपस्थिति का आभास कराया भी है, जो इस बात का संकेत है कि भारतीय नारी अपने अन्दर ऊर्जा का सागर लिए है। जरूरत है सिर्फ ऊर्जा को सही रूप से संचारित करने की। सिर्फ महानगरों व बड़े शहरों में उभरे कुछ व्यक्तित्व तो झलक मात्र हैं। हमारे दूर-दराज के गांवों में अनेक बालिकायें अपने अन्दर प्रतिभाओं की अपार संभावनाएं समेटे हुए हैं। इन प्रतिभाओं को उजागर करने, उनको समाज की मुख्य धारा से जोड़ने का दायित्व पुरुष समाज का है। पुरुष और नारी एक ही गाड़ी के दो पहिये हैं, यदि एक तरफ ही थोड़ी अड़चन आयी तो अवरोध आ जायेगा।

वर्तमान में जब हम 21वीं सदी की ओर तीव्र गति से बढ़ रहे हैं, जहां हमें विज्ञान, प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटर प्रणाली और अनेक तकनीकी जानकारियां देखने और उन्हें दैनिक जीवन में उपयोग करने को मिलेगी तब वैसी स्थिति में हमारा ज्ञान बिना नारी के साथ में पंगु सा हो जायेगा। नारी अपनी कोख से ही अपने आने वाले शिशु को बिना लिङ्गभेद के अपना कर उसके लिए सुखद स्वप्न व भविष्य संजोने लगती है। जन्म के पश्चात युवा होने तक अपने आंचल में जो जितना ज्ञान समेटे है अपनी सन्तान को दे देती है किन्तु पुरुष जो पिता है अपनी सन्तान के साथ कितना न्याय कर पाता है ? यह हर पिता गम्भीरता से सोच ले तो तुरन्त ही वह इस निर्णय पर पहुंच जायेगा कि नारी शिक्षा अति आवश्यक है। गर नारी शिक्षित है तो आने वाली पीढ़ी स्वतः ही शिक्षा के सुसंस्कार लेकर पैदा होगी। सुशिक्षित नारी जितना अधिक पढ़ेगी, समाज, देश व संसार के हर क्षेत्र को समझेगी व पढ़ेगी, उतना ही अपना ज्ञान अपने शिशु पर उढ़ेल देगी तो एक बच्चा जब बाल्यावस्था पार कर स्वयं के सोच विकसित करने वाली अवस्था तक आयेगा, अपने सुसंस्कार जो उसके अन्दर नींव का रूप ले चुके होंगे—उसी के तहत सोच एक सही मार्ग पर चलेगा। नारी को सम्मान देकर ही उसकी शक्ति, उसकी ऊर्जा को सामाजिक प्रतिष्ठा दिलाकर उसे साथ लेकर चलने पर ही हम विकसित राष्ट्र की श्रेणी में खड़े हो पायेंगे।

मगर खेद है हमारे देश को चलाने वाले, इसकी आचार-संहिता बनाने वाले, जन प्रतिनिधि के रूप में कार्य करने वाले राजनेताओं पर स्वहित की राजनीति इस कदर सवार हो चुकी है कि इसकी लपेट में उन्होंने देश के साधु-संतों, व्यवसायियों, शिक्षाविदों एवं समाज के कुछ स्तम्भों को भी अपनी क्षुद्र राजनीति के जाल में फंसा कर, क्षणिक लोभ मुद्रा दिखाकर उन्हें भी भ्रमित कर दिया है। ऐसे में ये समाज के ठेकेदार अपने को सुरक्षित रखने के लिए किसी को भी कुचल अपना घर-पेट जिसका दायरा निरन्तर तीव्र गति से बढ़ता ही जा रहा है, भरते जा रहे है। ऐसे में जब फिर इस देश में एक महाभारत की पुनरावृत्ति हो जाये तो क्या आश्चर्य ? क्योंकि यहां का शासक अंधा राजा धृतराष्ट्र सा बना न कुछ देख रहा है और न ही

कुछ सुन पा रहा है। सुनता है तो अपने शकुनि या दुर्योधन की। पुत्रमोह व कुर्सी की लालसा के कारण सभी विद्व-जन मूक बंधे-बंधे पड़े आज भी द्रौपदी का चीर हरण करने को लालायित हैं और कर रहे हैं।

आज के इस विशाल भारत में पुनः एक कृष्णरूप की आवश्यकता है जो कौरवी संस्कृति से इस नारी-मातृभूमि की रक्षा कर सके। कृष्ण अब केवल अर्जुन को ही अस्त्र उठाने की शिक्षा न दें बल्कि नारी जाति को भी अस्त्र-शस्त्र की शिक्षा देवें ताकि पुनः उस घृणित घटनाक्रम की पुनरावृत्ति न हो। जिसकी कथा तक को घर में रखने से कलह हो जायेगी सा डर फैला हुआ है।

प्रसन्नता इस बात की है कि आज ऐसे ही एक कृष्ण रूपी व्यक्ति यह अलख पूर्णनिष्ठा से चुपचाप जगा रहे हैं। मैं बहुत अधिक जानकारी तो नहीं रखता, हां कुछेक संत और ऐसे महापुरुषों को जानने व उनसे सत्संग का सौभाग्य मिला है।— जिन्हें देश के इस विपत्तिकाल का पूर्व अंदेशा है और वे इससे बचने, रक्षार्थ उपाय जन-जन को वितरित करने में, शिक्षा देने में अपना जीवन लगा रहे हैं। ऐसे ही एक महान पुरुष जिनका नाम स्वतः ही स्मरण हो आता है—श्री भैराराम जी आर्य है। साधारण से खादी के वस्त्रों में लिपटे अस्सी वर्षीय इस व्यक्तित्व से मिलने के बाद कोई इन्हें भूल जाये, असंभव है। इनके एक-एक शब्द में कुछ करने की ललक है, देश के हालात पर चिन्ता, नारी जाति को शिक्षा दिलाने की जबरदस्त लालसा और कुछ करते-करते ही करते जाने की तमन्ना देख, जोश देखकर कोई भी प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता है। मेरा सौभाग्य रहा कि आपके दर्शनों और विचारों से एक बार लाभान्वित हो चुका हूं। वह चन्द क्षणों की मुलाकात ही थी जिसने मुझे आपसे इस तरह जकड़ लिया है कि ऐसा लगता ही नहीं कि ऐसा एक ही बार हुआ।

आपके सद्प्रयासों से आज तारानगर में 'वैदिक कन्या छात्रावास' जिस गति से चल रहा है और ग्रामीण बालायें शिक्षा के साथ-साथ इस गौरवशाली देश के अतीत की संस्कृति व सभ्यता से परिचित हो, भविष्य के लिए एक मजबूत आधार तैयार कर रही हैं, समय आने पर ही पता चलेगा कि इस छोटे से गांव में चल रही यह नारी शिक्षण संस्था और भैरारामजी के प्रयास किस कदर राष्ट्र उन्नति में सार्थक सिद्ध होते हैं। सारा नारी जगत आपको भूल नहीं पायेगा।

आपके बारे में इस अभिनन्दन ग्रन्थ में ढेरों रचनायें पाकर पढ़कर मात्र मैं ही नहीं अपितु आने वाली पीढ़ी और नवयुवक प्रेरणा लेकर इस ज्योत को आगे बढ़ायेंगे ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है। आपके लिए इस ग्रन्थ में इतना कुछ लिखा जा चुका है जिसके समक्ष मैं स्वयं को कूप मेंढक भांति सा पा रहा हूं। मेरे लिए तो श्री भैराराम जी का व्यक्तित्व कुए से बाहर निकलते ही जो सागर दृश्य हुआ वैसा दिखा है। अतः मेरे शब्द सामर्थ्य इसकी अभिव्यक्ति नहीं कर पायेंगे, सिर्फ आपके बताये मार्गों एवं आदर्शों का अनुसरण कर लूं, इसी आशीर्वाद की लालसा, कामना व स्वार्थ से अपने को मुक्त नहीं कर पाऊंगा ताकि मैं भी आपके विशाल व्यक्तित्व व कृतित्व के गुणों को अपनाकर कुछ कार्य कर अपने मानव होने के ऋण से उऋण हो सकूं।
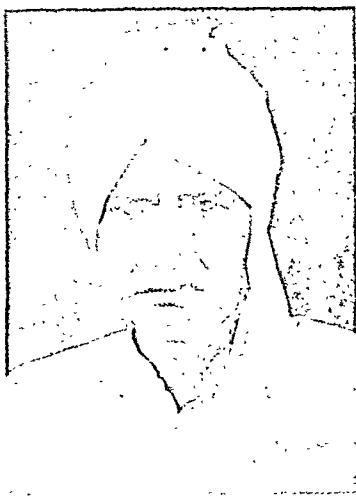
वैदिक कन्या छात्रावास — एक अवलोकन

श्री रामदत्त आर्य

वैदिक कन्या छात्रावास तारानगर कस्बे के पूर्व की ओर सुन्दर समतल स्थान में राज्य पथ परिवहन निगम के विश्राम स्थल के सन्निकट है। छात्रावास में बालिकाओं के लिए 24 प्रकोष्ठ तथा 8 स्नानघर और 8 शौच-स्थान निर्मित हैं। बीच में विशाल परिसर है। अपना कूप है। बहुत ही स्वच्छ निर्मल वायुमण्डल में छात्रावास विद्यमान है। विभिन्न गांवों से आने वाली छात्राएं जो तारानगर कस्बे की विभिन्न शिक्षण संस्थाओं में अध्ययन करती हैं, उनमें से अधिकांश इसी छात्रावास में रहती हैं। अपने विद्यालय समय उपरान्त उनका सारा समय छात्रावास में स्वामीजी जैसे सेवा और विद्या के कल्पवृक्ष की स्नेह और सौजन्यपूर्ण छत्रछाया में व्यतीत होता है। छात्रावास में प्रवेश हेतु किसी भी प्रकार का जातिगत या अन्य भेदभाव नहीं है। निर्धन परिवार की छात्राओं को सदैव प्राथमिकता दी जाती है।

छात्रावास में रहने वाली बालिकाओं से एक सीमित शुल्क लिया जाता है किन्तु यह प्रयास रहता है कि उन पर भोजन का 200 रु. से अधिक मासिक खर्च न हो। भोजन स्वास्थ्यप्रद एवं शुद्ध दिया जाता है। देशी घी का प्रयोग होता है। बालिकाओं के स्वास्थ्य का पूरा ध्यान रखा जाता है।

प्रत्येक शनिवार को एक गोष्ठी रखी जाती है, जिसमें विभिन्न धार्मिक, नैतिक तथा सामाजिक विषयों पर उनसे भाषण दिलवाये जाते हैं, ताकि उनमें वक्ता बनने की क्षमता का विकास हो। बालिकाओं को उत्तम पौष्टिक दुग्ध भोजनादि प्राप्त हो, इसके लिए छात्रावास अपनी गो शाला, अन्नोत्पादन हेतु कृषि इत्यादि के सन्दर्भ में प्रयत्नशील है।

छात्रावास में वैदिक प्रार्थना वन्दना के साथ प्रातःकाल कार्यक्रम शुरू होता है। शौच, स्नानादि सभी दैनिक कृत्य, प्रातः काल, अध्ययन एवं भोजन सब यथा समय होते हैं। एक निश्चित चर्या में सभी बालिकाएं चलती हैं। यह सब कार्य कर बालिकाएं अध्ययनार्थ अपनी-अपनी शिक्षण संस्थाओं को चली जाती हैं। कौन कहाँ-कहाँ कैसे रहती हैं, कैसे पढ़ती हैं इत्यादि पर स्वामीजी की दृष्टि बनी रहती है। आँखों से ओझल रहने पर भी उनके कार्य प्रत्यक्षवत् वे जानते रहते हैं। वे मानते हैं

कि ये कन्याएं हमारे समाज का, हमारे राष्ट्र का बहुमूल्य धन हैं। हमारी संस्कृति की एक गौरवास्पद विरासत है, जिसे समुन्नत करना हमारा दायित्व है।

छात्रावास की शुरूआत सात कन्याओं से हुई थी जो आज बढ़कर 123 हो गई है। संख्या में वृद्धि स्वामीजी के उच्च आदर्श, तपस्या व नारी शिक्षा के प्रति उनके निष्काम कर्म के प्रति लोगों की बढ़ती आस्था को परिलक्षित करती है। स्वामीजी की आदर्श कल्पनाओं और स्वप्नों का प्रतीक यह छात्रावास अपने साथ अनेक उत्कृष्ट संभावनाएं लिए हुए है। वह अवश्य ही पूरी होगी, क्योंकि उनके पीछे एक ऐसा व्यक्तित्व समर्पित है जिसमें त्याग, वैराग्य, वर्चस् और ओजस का चतुर्मुखी समन्वय है।

चूरू जनपद के गणमान्य नागरिकों, कार्यकर्त्ताओं और शिक्षा सेवियों का इस छात्रावास को प्रारम्भ से ही बहुत सहयोग रहा है तथा अभी इस छात्रावास को जन-जन के सहयोग के प्रति बहुत अपेक्षाएं एवं आशाएँ हैं। स्वामीजी के दिव्य त्यागमयी जीवन से प्रज्वलित यह मशाल सदैव दिव्य आलोकित रहे इसके लिए नितान्त आवश्यक है कि हम सब अपने तन, मन और धन से छात्रावास की विकास यात्रा में सहयोग दें।

भगवान का नाम जपते चलो

जिनसे बुराइयाँ एक झटके के साथ नहीं छूटती उनके लिए अधिक अच्छा है छोटे-छोटे संकल्प लें और उन पर आरूढ़ रहें। क्रमशः एक-एक करके सबको छोड़ा जा सकता है। एक मनुष्य ने किसी महात्मा से पूछा—महात्मन्! मेरी जीभ तो भगवान का नाम जपती है, पर मन उस ओर नहीं लगता। महात्मा बोले—'भाई। कम से कम भगवान की दी गई एक विभूति तो तुम्हारे वश में है। इसी पर प्रसन्नता मनाओ। जब एक अंग ने उत्तम मार्ग पकड़ा है तो एक दिन मन भी निश्चित रूप से ठीक रास्ते पर आयेगा। भगवान का नाम जपते चलो। शुभारम्भ यहीं से हो तो धीरे-धीरे मन सत्पथ पर चलने को राजी हो जाता है। जब मात्र तोते को राम नाम पढ़ाने से एक वेश्या का जीवन बदल सकता है, नारायण नाम लेकर उनकी प्रेरणानुसार जीवन जीने से 'अजामिल' तर सकता है, तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य अपनी दुष्प्रवृत्तियों को नियन्त्रित न कर सके।
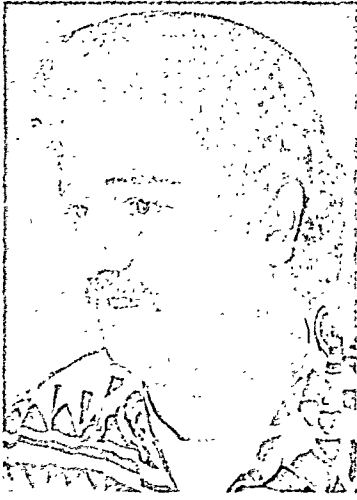
प्रेरक संकलन

श्री विवेक सारस्वत

'पुरुषाणां सहस्त्रं च सती नारी समुद्धरेत्।'

अर्थात् सती स्त्री अपने पति का ही नहीं, अपने उत्कृष्ट आचरण की प्रत्यक्ष प्रेरणा से सहस्त्र पुरुषों का उद्धार यानी श्रेष्ठता की दिशा का मार्गदर्शन करती है।

1. नारी का देवत्व

नारी देवत्व की मूर्तिमान प्रतिमा है। देवी भागवत में कहा गया है—

'विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।।' अर्थात् समस्त स्त्रियाँ और समस्त विद्याएँ देवी रूप ही हैं। नारी के अन्तःकरण में कोमलता, करुणा, ममता, सहृदयता एवं उदारता की पाँच देव-प्रवृत्तियाँ सहज स्वाभाविक रूप से अधिक हैं। इसलिये उसे 'देवी' शब्द से अलंकृत सम्मानित किया जाता है। यदि यह बहुलता न होती, तो वह पत्नी का समर्पणपरक, माता की जान जोखिम में डालने जैसी बलिदानी प्रक्रिया, बहिन और पुत्री की अन्तरात्मा को गुदगुदा देने वाली विशेषता कैसे सम्भव होती। इसके इन दैवी गुणों ने ही उसे इस प्रकार का परमार्थ-परायण तपस्वी-जीवन जी सकने की क्षमता प्रदान की है।

'नास्ति भार्या समं मित्रम्' माँ के बाद नारी का दूसरा रूप 'पत्नी' का, सहधर्मिणी का है।

'नास्ति स्वसा समा मान्या' बहिन के समान सम्मानीय और कोई नहीं।

'गृहेषु तनया भूषा' अर्थात् कन्या के रूप में नारी घर की शोभा है।

2. नारी की महानता—

गायत्री मंत्र का छठा अक्षर 'व' नारी जाति की महानता और उसके विकास की शिक्षा देता है—

वद नारी विना कोऽन्यो निर्माता मनुसन्ततेः।
महत्वं रचना शक्तेः स्वस्याः नार्या हि ज्ञायताम्।।
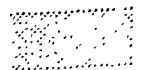
अर्थात् 'मनुष्य की निर्मात्री नारी ही है। नारी को अपनी शक्ति का महत्व समझना चाहिये।'

'नास्ति गंगा समं तीर्थं नास्ति विष्णु समः प्रभुः ।
नास्ति शम्भु समः पूज्यो नास्ति मातृ समो गुरुः ।।

'गंगा के समान कोई तीर्थ नहीं, विष्णु के समान कोई प्रभु नहीं और शिव के समान कोई पूजनीय नहीं तथा वात्सल्य स्त्रोतस्विनी मातृहृदय नारी के बराबर कोई गुरु नहीं, जो इस लोक और परलोक में कल्याण का मार्ग प्रशस्त करे।'

3. नाम ग्रन्थ के कारण अमर—

वाचस्पति मिश्र भारतीय दर्शन के प्रसिद्ध भाष्यकार हुए हैं। उन्होंने पूर्व मीमांसा को छोड़कर शेष सभी दर्शनों का भाष्य किया है। वे अपने इस पुण्य-प्रयास में जुटे थे। इसी बीच उनकी पत्नी ने एक दिन सन्तान उत्पन्न करने की इच्छा प्रकट की।

वाचस्पति गृहस्थ तो थे पर दाम्पत्य जीवन उन्होंने वासना के लिये नहीं, दो सहयोगियों के सहारे चलने वाले प्रगतिशील जीवन-क्रम के लिये अपनाया था। उन्होंने पत्नी से पूछा—'सन्तान उत्पन्न क्यों करना चाहती हो ?'

पत्नी ने संकोचपूर्वक कहा—'इसलिये कि पीछे नाम रहे।' वाचस्पति मिश्र उन दिनों वेदान्त दर्शन का भाष्य कर रहे थे। उन्होंने तुरन्त उस भाष्य का नाम 'भामती' रख दिया। यही नाम उनकी पत्नी का था। उन्होंने पत्नी से कहा लो तुम्हारा नाम तो अमर हो गया, अब व्यर्थ प्रसव वेदना और सन्तान पालन का झंझट सिर पर लेकर क्या करोगी ? यह नाम हमेशा तुम्हारी सम्पर्क भावना का परिचय देता रहेगा।

4. स्वामी श्रद्धानन्द की धर्मपत्नी

आर्य समाज के प्रख्यात नेता स्वामी श्रद्धानन्द जब नवयुवक थे, तब उनका नाम मुंशीराम था, उन्हें मद्यपान, व्यभिचार, अपव्यय जैसी बुरी आदतें लग गई थीं।

उनकी पत्नी शिवदेवी, अपने पक्ष के कर्त्तव्य-उत्तरदायित्व पर सुदृढ़ रहीं। वह पति के दोषों पर क्रुद्ध होने की अपेक्षा धैर्य और प्रेमपूर्वक उन्हें समझाती और प्रभावित करती रहीं। फलतः उनके जीवन में कायाकल्प हो गया। वे उच्चकोटि के लोकसेवी और सन्त बन सके, इसमें बहुत कुछ श्रेय उनकी धर्म-पत्नी का था।

शिवदेवी के सुसंस्कार लेकर जन्मी उनकी संतानें भी उच्च स्तर की हुईं। इन्द्र विद्यावाचस्पति की प्रतिभा और देव सेवा से सभी परिचित हैं।

5. बच्चे-नारियाँ ही बनाती हैं

मैडम च्यांगकाई शेक कहती थीं—'गर्भ में प्रवेश करने से लेकर पांच वर्ष की आयु तक बच्चों के स्वभाव का महत्त्वपूर्ण अंश पूरा होता है, इसलिये नये समाज

निर्माण की जिम्मेदारी विशेषतया नारियों के कंधे पर ही आती है; क्योंकि बालकों की यह अवधि माता तथा घर में रहने वाली अभिभाविकाओं के सम्पर्क-सान्निध्य में ही व्यतीत होती है।'

6. माँ को छोड़ कर सिद्धि कैसी ?

वैधव्य का भार सहते हुए भी माँ ने पुत्र का पालन कर उसे बड़ा किया; किन्तु पुत्र तो अपनी वृद्धा माता को निराश्रित छोड़ तांत्रिक साधना करके शक्ति पाने घर से निकल पड़ा। देव शर्मा नामक युवक अपनी तांत्रिक सिद्धियों के बल से अपना चीवर लेकर उड़ते दो कौओं को भस्म होते देख अभिमान से भर उठा।

एक सद्गृहिणी के द्वार पर वह भिक्षा देने में देर होते देख क्रोध से भर उठा, तो गृहिणी बोली—'महात्माजी ! आप शाप देना जानते हैं; पर मैं कोई कौआ नहीं हूँ, जो भस्म हो जाऊँ ? जिस माँ ने तुम्हें जीवन भर पाला उसे त्याग कर मुक्ति के लिये भटकते आप मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते।'

यह सुन देव शर्मा को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने पूछा—'आप कौनसी साधना करती हैं ?' 'कर्त्तव्य साधना।' देव शर्मा भी तांत्रिक साधना छोड़ अपनी माँ की सेवा करने चल पड़ा।

7. नारी को सम्मान दो :

महापुरुष सदैव नारी शक्ति को सम्मान देते आए हैं। यही उनकी महानता का कारण रहा है। ये संस्कार जो बीज रूप में जन्म से बोए जाते हैं, उन्हें उन ऊँचाइयों पर पहुँचाते हैं, जिससे वे इतिहास में अमर हो जाते हैं।

नेपोलियन बोनापार्ट ने टुई लेरिस नामक अपने महल के स्नानागार की मरम्मत करायी। महल के अधिकारियों ने फ्रांस के अच्छे चित्रकारों द्वारा वहाँ सुन्दर चित्र बनवाये। स्नानागार की सजावट पूरी हो जाने पर नेपोलियन स्नान करने गया। वह क्या देखता है कि स्नानागार की दीवारों पर नारियों के चित्र टंगे हैं। वह स्नान किये बिना ही लौट आया और महल के अधिकारियों को आज्ञा दी—'नारी का सम्मान करना सीखो। स्नानागार में नारियों के विलासपूर्ण चित्र बनवाकर नारी का अपमान मत करो। जिस देश में नारी को विलास का साधन माना जाता है, उस देश का विनाश हो जाता है।'

8. शिक्षक, सुधारक, नारी

जब भी परिवार के वातावरण में वांछित वातावरण की आवश्यकता पड़ती है, नारी एक माँ के रूप में—प्रशिक्षक की भूमिका निभाती है। उसके स्वयं के अर्जित संस्कार उसे इतना प्रखर-प्रतिभावान् बना देते हैं कि उसकी वाणी एवं व्यवहार अमोघ अस्त्र का काम करते हैं।

9. आदत सुधारी, महामानव बनाया

एक बालक बहुत जिद्दी था। वस्तुएं इधर-उधर बिखेर देता था, बोलने में हकलाता था; पर जब उसे उपयुक्त अध्यापक मिले, तो लड़के की सभी बुरी आदतें छुड़ा दी। इतना ही नहीं, देश का महापुरुष बनाया, जिसका नाम था बाल गंगाधर तिलक। यदि यह प्रयास करने के लिए अध्यापक उद्यत न होते, तो एक प्रतिभा समाज के समक्ष न आ पाती। लगभग यही बात नारी समुदाय पर भी लागू होती है। उसकी वर्तमान परिस्थितियों का कारण है, अनगढ़ से सुगढ़ बनाने हेतु अभीष्ट पुरुषार्थ का अभाव।

10. लज्जा-सर्वोत्तम सौन्दर्य प्रसाधन :

नारी का सहज रूप शील प्रधान है। यही उसका सबसे बड़ा आभूषण भी है।

अरस्तु की एक कन्या थी। नाम था पीथिया। अरस्तु के शिष्य सिकन्दर की रानियाँ एक दिन गुरुगृह गई और आतिथ्य के उपरान्त उन्होंने पीथिया से पूछा—'चेहरे को अधिकाधिक सुन्दर बनाने के लिये क्या उबटन लगायें ?' पीथिया ने कहा—'उनका सबसे बड़ा सौन्दर्य है—लज्जा।' उसे वे बनाए रखें, तो अधिक उन्हें कुछ करने की आवश्यकता नहीं। सौंदर्यवान् वही है, जो शीलवान् भी है।

11. जैसी हूँ वैसी ही रहूँगी

अपने सहज स्वाभाविक रूप में ही नारी की शोभा है, सम्मान है। जब भी कृत्रिमता का समावेश होता है, तो वह कुरुचिपूर्ण लगता है।

प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री की पत्नी श्रीमती ललिता शास्त्री ने अपने जीवन के रोचक प्रसङ्ग सुनाते हुए बताया—

'जब मैं पहली बार अपने पति के साथ रूस यात्रा के लिए तैयार हुई, तो मुझे बड़ा डर लग रहा था। मैं सोच रही थी कि मैं सीधी-सादी भारतीय गृहिणी हूँ। राजनीति का मुझे ज्ञान नहीं, विदेशी तौर-तरीकों का पता नहीं। कहीं मुझसे कोई ऐसे प्रश्न न पूछे जायें, जिसका उत्तर मैं ठीक से न दे पाऊँ और तब मेरे पति अथवा मेरे देश का गौरव कुछ घटे अथवा उनकी हँसी हो। किन्तु फिर मैंने यह निश्चय करके अपना डर दूर कर लिया कि मैं एक महान् देश के प्रधानमन्त्री की पत्नी के रूप में अपने को प्रस्तुत नहीं करूँगी। मैं तो सबके सामने अपने को एक साधारण भारतीय गृहिणी के रूप में रखूंगी। मैंने वहाँ जाकर अपने को एक गृहिणी के रूप में ही पेश किया। वहाँ के अच्छे लोगों ने मुझसे घर गृहस्थी के विषय में ही बातचीत की, जिसका उत्तर देकर मैंने सबको सन्तुष्ट कर दिया। इस प्रकार मैंने एक बहुमूल्य अनुभव यह पाया कि मनुष्य वास्तव में जो कुछ है, यदि उसी रूप में दूसरों के सामने पेश हो, तो उसे कोई असुविधा नहीं होती और उसकी सच्ची सरलता उपहास का विषय न बनकर स्नेह एवं श्रद्धा का विषय बनती है।'

12. महिला सुधार के लिए प्रयत्नशील ज्योतिबा फुले—

ज्योतिबा फुले का जन्म पूना के एक माली परिवार में हुआ था। अभिभावकों ने उन्हें इसलिए ऊँची शिक्षा दिलाई कि अच्छी कमाई करेगा। पर उन्होंने तत्कालीन समाज पर दृष्टि डाली, तो उसे सुधारने के लिए प्रयत्न करना आवश्यक समझा। माली होने के कारण उन्हें अछूत समझा जाता था। ऐसी दशा में निजी कमाई करने की अपेक्षा समाज सुधार को उन्होंने अधिक आवश्यक समझा। अपने जैसे विचार वालों को लेकर एक समाज सुधार समिति गठित की और स्त्रियों और शूद्रों के साथ बरते जाने वाले अनाचार का विरोध प्रारम्भ कर दिया। वे उस क्षेत्र में दूर-दूर तक जाते थे और भाषणों से तथा छोटे साहित्य से लोगों के विचार बदलने का प्रयत्न करते थे। उनकी धर्मपत्नी ने पति का पूरा-पूरा सहयोग दिया। उनके प्रयास से 'महिला समिति', 'कन्या विद्यालय', 'विधवा-विवाह आन्दोलन' जैसे कई प्रगतिशील कार्य हाथ में लिये गये।

अपने कार्यों के कारण वे महात्मा फुले के नाम से प्रख्यात हुए। उनके आन्दोलनों का समूचे महाराष्ट्र पर भारी प्रभाव पड़ा।

13. देव संस्कृति को समर्पित विदेशी नारी

एनीबेसेण्ट आयरलैण्ड में जन्मीं, इंग्लैण्ड में पलीं तथा सेवामय जीवन बिताने के लिये हिन्दुस्तान चली आयीं। वे ईसाई परिवार की थी; पर अध्ययन और चिन्तन-मनन ने उन्हें व्यवहारतः सच्ची हिन्दू बना दिया। इस देश की सेवा करने के लिए उन्होंने समय-समय पर कितनी ही प्रवृत्तियाँ प्रारम्भ कीं और बढ़ाई। उन्होंने अडियार मद्रास में थियोसोफिकल सोसायटी की स्थापना की। काशी में सेन्ट्रल हिन्दू कॉलेज आरम्भ किया, जो आगे चल कर हिन्दू विश्वविद्यालय में परिवर्तित हो गया। वे राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्ष रहीं। अंग्रेजी का एक साप्ताहिक पत्र मुद्दतों चलाती रहीं। वे 106 वर्ष जीवित रहीं, जिसमें से अधिकांश समय उन्होंने भारत की सेवा में बिताया। वे अद्भूत वक्ता और लगनशील संगठनकर्त्री थीं।

14. श्रद्धानन्द महिलाश्रम

भारत में सवर्ण परित्यक्ताओं तथा विधवाओं की समस्या बड़ी ही विकट है। पुनर्विवाह का प्रचलन हो नहीं पाया है। कई बच्चों की माताएँ होने की दशा में, तो उनकी और भी दुर्दशा होती है। आत्म-हत्यायें और बच्चों की दुर्गति ऐसी ही दशा में होती है।

स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द ने माटुङ्गा बम्बई में एक ऐसे ही आश्रम की स्थापना की, जिसमें बच्चों समेत माताओं और परित्यक्ताओं के शिक्षण एवं निर्वाह की व्यवस्था है। इस समय आश्रम में 350 के करीव बच्चे और महिलायें हैं। विगत 45 वर्षों में 5000 के लगभग महिलाओं और बच्चों को स्वावलम्बी वनाया जा चुका है।

बच्चे गोद भी दिये जाते हैं तथा महिलाओं के विवाह भी करा दिये जाते हैं। 600 के करीब ऐसे विवाह भी कराये जा चुके हैं। श्री जमशेद जी टाटा के एक अत्यन्त ही प्रामाणिक व्यक्ति इसका संचालन करते हैं। म्यूनिसिपल सहायता तथा दानियों के सहयोग से खर्च चलता है। आजकल भारत में ऐसे अनेक आश्रमों की स्थापना आवश्यक है।

व्यायाम सिखाने वाला साधक

एक व्यक्ति बहुत-बहुत दिनों तक बाहर रहता है और लौटता है। कई बार तो पड़ौसियों को भी पता नहीं लगता कि वह कब चला गया। उसके पड़ौसी ने एक बार पूछा—'आजकल आप क्या कर रहे हैं? यहाँ बहुत कम दिखाई देते हैं।' उसने उत्तर दिया—'भाई अब शरीर की तीसरी अवस्था चल रही है। भगवान की सेवा और पूजा परमार्थ भी करना चाहिए।'

पड़ौसी को सन्देह हुआ कि कहीं वह अनुचित काम तो नहीं कर रहा है। वह तो घर में रहकर भी की जा सकती है। उसने छिपकर तलाश की तो पता चला कि वह गाँव-गाँव जा कर व्यायामशालायें खुलवाता है। लौटने पर पूछा—'आप तो कहते हैं कि पूजा पाठ करते हैं जब कि तथ्य यह है कि आप लोगों को व्यायाम की शिक्षा देते हैं।' जब यह चर्चा चल रही थी, उधर से समर्थ गुरु रामदास गुजर रहे थे। उन्होंने कहा—'भाइयों! जो अपनी सामर्थ्य को सत्यप्रयोजनों में लगा देता है, राष्ट्र को समर्थ-सशक्त बनाने की पीड़ा अंतस में लिए परमार्थरत रहता है, वह भगवान का सबसे बड़ा भक्त है। नाम जपने से भी बड़ा पुण्य इस पवित्र कार्य का माना गया है।'

लेखक-सम्पर्क

1. चौधरी श्री दौलतराम
   पूर्व केन्द्रीय मंत्री, भारत सरकार
   ढाणी पाचेरा (सरदारशहर)
2. श्री मनीराम आर्य
   पूर्व विधायक,
   ग्राम देवगढ़, त. तारानगर
3. श्री हजारीमल सारण
   पूर्व विधायक,
   सरदारशहर
4. श्री रावतमल आर्य
   पूर्व विधायक, नई सड़क,
   चूरू
5. डॉ. ज्ञानप्रकाश पिलानिया
   सेवानिवृत्त आई. पी. एस.,
   168, जम्भेश्वर नगर,
   गांधी पथ, क्वीन्स रोड, जयपुर
6. श्री रामदत्त आर्य
   वैदिक कन्या छात्रावास, तारानगर
7. डॉ. बाबूलाल शर्मा
   उप निदेशक
   भारतीय शोध प्रतिष्ठान, बीकानेर
8. डॉ. ब्रह्माराम चौधरी
   आलोक सदन, रानी बाजार,
   बीकानेर
9. श्री अनन्त शर्मा
   निदेशक,
   गोदावरी कन्या शिक्षा निकेतन,
   ब्यावर
10. श्री सोहनलाल डागा
    सरदारशहर
11. डॉ. ओमप्रकाश गुप्ता
    तारानगर
12. श्री यशवन्तसिंह
    एडवोकेट,
    भादरा (हनुमानगढ़)
13. श्री लालचन्द बेनीवाल
    संचालक,
    किसान छात्रावास,
    भादरा (हनुमानगढ़)
14. श्री गणपतराम मड़दा
    तारानगर (चूरू)
15. श्री श्रीनिवास खेमानी
    तारानगर (चूरू)
16. श्री नेतमल सामसुखा
    तारानगर
17. डॉ. कात्यायनी दत्त
    आचार्य
    सरस्वती महाविद्यालय, तारानगर (चूरू)
18. श्री बुधमल हंसावत
    प्राध्यापक,
    तारानगर (चूरू)
19. श्री पन्नालाल
    प्राध्यापक,
    रामदेव मन्दिर के पास,
    तारानगर (चूरू)

20. श्री मोहनलाल स्वामी
सेवानिवृत्त वरिष्ठ अध्यापक,
ग्राम—ढाणी आशा (तारानगर)

21. श्री वस्तीराम पारीक
ग्रा. पो. बुचावास (तारानगर)

22. प्रो. डी. सी. सारण
पो. वा. नं. 1,
संगरिया (हनुमानगढ़)

23. डॉ. के. आर. मोटसरा
अध्यक्ष, इतिहास विभाग
स्वामी केशवानन्द महाविद्यालय,
ग्रामोत्थान विद्यापीठ, संगरिया

24. श्री गुमानसिंह सहारण
शिक्षा प्रसार अधिकारी,
तारानगर

25. श्री रामकुमार शर्मा
सेवानिवृत्त आर.ए.एस.
माडर्न मार्केट, बीकानेर

26. श्री रामेश्वरलाल
सेवानिवृत्त पोष्टमास्टर,
जम्भेश्वर धर्मशाला, बीकानेर

27. श्री शिवचंद सोलंकी
तारानगर

28. श्री चुन्नीलाल कस्वां
चूरू

29. श्री पूर्णमल लम्बोरिया
सेवानिवृत्त प्रधानाध्यापक,
ग्राम राजपुरा, त. तारानगर

30. श्री सांवरमल सोनी
सरदारशहर (चूरू)

31. श्री तनसुखराय
रेलवे क्रासिंग रोड फाटक
नवलगढ़ रोड, सीकर

32. डॉ. हनुमानसिंह कस्वां
कस्वां निवास, हॉस्पीटल रोड,
बीकानेर

33. श्री जीतसिंह कस्वां
अध्यापक, बाल मन्दिर,
सरदारशहर

34. श्री जसवन्तसिंह
ग्रा. जैतपुरा ढाणी,
सादुलपुर (चूरू)

35. श्री प्यारेलाल
उ. मा. कन्या विद्यालय,
श्रीडूंगरगढ़

36. श्री हरफूलसिंह कस्वां
तारानगर (चूरू)

37. श्री गोपालदास शर्मा
नयाशहर, ईदगाह बारी के
अन्दर, बीकानेर

38. श्रीमती सुदर्शना शर्मा
सेवानिवृत्त उपनिदेशक (महिला शिक्षा) 6 इण्डस्ट्रियल एरिया,
बीकानेर

39. श्रीमती उर्मिला कुलश्रेष्ठ
V-D/32, ज. ना. व्यास नगर,
बीकानेर

40. श्रीमती रूपा पारीक
प्राध्यापक (भौतिक विज्ञान)
16 देवाली, उदयपुर

41. श्री विवेक सारस्वत
'विनायक विहार'
V-D/211, ज.ना.व्यास नगर,
बीकानेर

डॉ. परमानन्द सारस्वत

- सेवानिवृत्त प्रवक्ता, डॉ. राधाकृष्णन् राजकीय उच्च अध्ययन शिक्षा संस्थान, बीकानेर (राजस्थान)
- साहित्य, संस्कृति एवं शिक्षा के प्रति वर्षों से समर्पित संलग्नता के साथ लेखन-प्रकाशन के माध्यम से अभिव्यक्ति की मुखरता।
- हिन्दी, संस्कृत तथा राजस्थानी साहित्य एवं भारतीय संस्कृति से जुड़े आधुनिक मनीषियों एवं मनस्वियों के व्यक्तित्व व कृतित्व के प्रकाशन हेतु एकमात्र प्रतिबद्धता।
- राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर के बीकानेर स्थित राजस्थानी विभाग के सचिव के रूप में वर्षों तक सफल संचालन।
- राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर की कार्य समिति व प्रकाशन समिति के सदस्य के रूप में सक्रिय संबद्धता रही।
- अखिल भारतीय शिक्षण मंडल, राजस्थान के पश्चिमांचल प्रदेश की अध्यक्षता का वर्षों तक निर्वहन।
- सम्प्रति : अखिल भारतीय शिक्षण मंडल के उत्तर-मध्य क्षेत्र के संगठन-प्रमुख का उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य-संपादन।
- पता : 5 डी. 211, ज. ना. व्यास कॉलोनी, बीकानेर-334003